मुट्ठी भर काँकर

(भाग एक)



जगदीशचन्द्र



भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

प्रियवर कुलदीप सहगल को

अपनी ओर से

(प्रथम संस्करण से)

यह घटना 1945 की क्रिस्मिस की छुट्टियों की है। मैं तब दिल्ली आया था और पहाड़गंज में ठहरा हुआ था। एक दिन मैं सुबह-सवेरे नहाने का साबुन ख़रीदने के लिए बाज़ार गया। उन दिनों दुकानों के खुलने और बन्द होने का कोई निर्धारित समय नहीं होता था। कुछ दुकानें खुली थीं। मैं एक दुकान पर गया। दुकानदार गरम चादर ओढ़े अपनी गद्दी पर बैठा था। मैंने साबुन माँगा तो उसने इनकार कर दिया हालाँकि साबुन की कई टिक्कियाँ सजी हुई रेक में रखी थीं। मैंने उनकी ओर इशारा किया तो वह कुछ खीजकर बोला कि बेचने के लिए नहीं हैं। फिर चादर में मुँह छिपाकर बुदबुदाने लगा कि एक धेले की कमाई के लिए इतनी सर्दी में कोई क्यों उठेगा !

दूसरी घटना तीन बरस बाद की है। वे ही सर्दियों के दिन और वही जगह। सुबह-सवेरे सूरज निकलने से पहले ही पहाड़गंज और दिल्ली के अन्य बाज़ारों में रेढ़ी और पटरीवाले दुकानदारों का जमघट लग जाता था। वे हर आने-जानेवाले को ग्राहक समझकर अपना माल उसकी आँखों के बिलकुल सामने ला देते और उसकी अच्छाइयों और कम मूल्य का बखान करते हुए ख़रीद लेने का अनुरोध करते थे। कई बार अपना माल बेचने के लिए वे अनजान लोगों के घरों तक में चले जाते थे।

इन लोगों के पहनावे अलग-अलग थे। बोलियाँ भी अलग-अलग थीं। वे सब के सब शरणार्थी थे जो देश के विभाजन के बाद पश्चिमी पंजाब, सीमा प्रान्त और बलूचिस्तान से उठकर दिल्ली पहुँच गये थे और अपने पाँवों पर खड़ा होने के लिए कड़ी मेहनत और घोर संघर्ष कर रहे थे।

पुनर्वास की इस प्रक्रिया में पंजाबी शरणार्थी स्थानीय आबादी के सम्पर्क में आये। उनके सामान्य जीवन और व्यवसायों पर भी उनका गहरा प्रभाव पड़ा। कहीं उनमें परस्पर सहयोग पैदा हुआ और कहीं असहयोग। यह एक विचित्र और द्वन्द्व एवं तनाव की स्थिति थी।

इस उपन्यास के सृजन का यह पहला चरण था।

दस बरस बाद 1955 में मैं नौकरी की तलाश में दिल्ली आ गया। उन दिनों दिल्ली चारों ओर बहुत तेज़ी से फैल रही थी। उर्दू के एक प्रख्यात लेखक के कथन के अनुसार दिल्ली की सीमा वहीं बन जाती थी जहाँ किसी पंजाबी शरणार्थी ने अपना डेरा जमा लिया हो।

पंजाबी शरणार्थियों के पुनर्वास के लिए नयी कॉलोनियाँ बनायी जा रही थीं। नयी कॉलोनियाँ बसाने के लिए दिल्ली के आसपास के गाँवों की ज़मीनें ऐक्वायर की गयीं। ये लोग एक तरह से अपने ही घरों और गाँवों में विस्थापित हो गये और उनकी पीढ़ियों से बँधी हुई चली आयी जीवन-प्रणाली तेज़ी से टूटने लगी थी।

इस उपन्यास के सृजन का यह दूसरा चरण था।

ज़मीनें ऐक्वायर हो जाने के बाद इन लोगों को नक़द मुआवज़ा मिला। इससे उनकी निजी आर्थिक व्यवस्था का एकदम मुद्रीकरण हो गया। पुश्तैनी व्यवसाय ज़मीनें ऐक्वायर होने के साथ ही ख़त्म हो गये थे। अब वे नयी जीवन-प्रणाली के लिए भटक रहे थे।

इस उपन्यास के सृजन का यह तीसरा चरण था।

मैंने दोनों प्रकार के विस्थापितों के पुनर्वास की प्रक्रिया को बहुत निकट से देखा। उनके दुःखान्त और सुखान्त को महसूस किया।

यह उपन्यास उसी प्रक्रिया की कहानी है जिसे मैंने सर्वथा निरपेक्ष रहकर प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

जालन्धर शहर —जगदीशचन्द्र

1 जनवरी, 1976

दूसरे चरण पर

अगस्त 1947 में देश का विभाजन हुआ। बहुत जल्दबाज़ी में लिया गया एक राजनीतिक निर्णय था यह। इसके कारण भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र में बहुत बड़े पैमाने पर हिंसक दंगे हुए और लाखों लोग अपनी जान बचाने के लिए अफ़रा-तफ़री की हालत में नयी सरहद के आर-पार जान पर मजबूर हुए।

इन शरणार्थियों के सामूहिक और व्यक्तिगत दुःखान्त को लेकर बहुत-कुछ लिखा गया—कहानियाँ, कविताएँ, नाटक और उपन्यास। इस साहित्य का अपनी जगह पर एक विशेष महत्त्व है।

नये देश और अजनबी माहौल में इन शरणार्थियों के पुनर्वास का काम सुनिश्चित योजनाओं के आधार पर शुरू हुआ। यह विश्व-इतिहास में अपनी किस्म का बहुत बड़ा और बेमिसाल आप्रेशन था।

विभाजन की पीड़ा और व्यथा अपने व्यापक रूप में सबको नज़र आयी और महसूस भी की गयी। लेकिन शरणार्थियों की पुनर्वास योजनाओं के कारण अपने ही गाँव और घरों में विस्थापित होने वाले स्थानिक लोगों की व्यथा हमारे साहित्य का बहुत ही कम हिस्सा बन पायी है।

शरणार्थियों के पुनर्वास की क्रिया के पहले चरण के रूप में स्थानिक लोगों की ज़मीनें ऐक्वायर की गयीं और वे आँख झपकते अपने पुश्तैनी व्यवसायों से वंचित हो गए। इस उपन्यास के पहले भाग यानी प्रस्तुत पुस्तक की यही कथावस्तु है।

ऐक्वायर की गयी ज़मीनों के मालिकों को नक़द मुआवज़ा मिला। इससे उनकी आर्थिकता का एकदम पूर्ण मुद्रीकरण हो गया और वे नयी जीवन प्रणाली की तलाश में भटकने लगे। उनकी यही भटकन इस उपन्यास के दूसरे भाग का मूल-सूत्र है।

उपन्यास के प्रथम खण्ड का दूसरा संस्करण पाठकों के हाथों में पहुँच रहा है, इसकी हमें प्रसन्नता है। उपन्यास का द्वितीय खण्ड शीघ्र ही पाठकों को समर्पित करने का प्रयत्न है।

जालन्धर शहर
10 सितम्बर, 1982

जगदीशचन्द्र

मुट्ठी भर काँकर

(भाग एक)

एक—

पहलादसिंह सिर पर पाँव रख दौड़ता हुआ आया और गाँव से बाहर कुएँ के पास बने चबूतरे पर बैठे हुए लोगों के पास धड़ाम से आ गिरा। सब लोग हड़बड़ाकर उसकी ओर देखने लगे।

"कौन से ?"—ताऊ हरीराम ने झुँझलाये स्वर में पूछा। फिर जमीन पर सपाट पड़े पहलादसिंह को देख वह चुनककर बोला, "कै हो गया पहलाद कों ? जब देखो भैंसा बैल की तरह भाज करे है।"

पहलादसिंह चुप रहा। वह जमीन पर नीम बेहोश-सा पड़ा हाँफ रहा था। साँस की डोरी जैसे झटका खा रही थी। कुछ क्षण सब कोई अपनी-अपनी जगह पर बैठे उसकी ओर देखते रहे। फिर—

"उठ, क्यों पड़ा है ठाली सांड की डाल !" ताऊ हरीराम ने अपनी लाठी के सिरे से पहलादसिंह की पसलियों में टहोका देते हुए कहा।

"पाई—।" पहलादसिंह टूटती-सी आवाज में बोला।

बंसीलाल उचककर उठा और पहलादसिंह के ऊपर झुकता हुआ बोला—"क्यों फजर बजा के पहुँचा से ?...उठ, इब छोड़कर खेल छोड़ दे...तू आप एक छोरे का बाप बन गया से।"

पहलादसिंह दोनों पाँव पटकता हुआ कमजोर आवाज में फिर बोला, "पाई।"

ताऊ हरीराम ने उसे ध्यान से देखा। उसकी कमजोर आवाज को ध्यान से सुना। फिर कुछ घबराये हुए स्वर में कहा, "पहलाद फरेब नहीं बना रिहा। यह तो सचमुच कष्ट में है।" फिर एक लड़के को बाँह से पकड़कर उठाते हुए बोला, "जा छोरे, भागकर पानी ला।"

ताऊ ने पहलादसिंह की छाती पर हाथ रखा। उसके दिल की तेज धड़कन को महसूस करते हुए बोला, "पहलाद का दिल तो छाज में उछल रहे दानों की तरह उछने से। ऐसा लगे जैसे कोसों भागकर आया से।" फिर आवाज धीमी करके बोला, "दिन छिपे इसे मैंने गाँव से बाहर जाते देखा था। हाथ में इसके लाठी थी और पीछे-पीछे इसका कुत्ता सेरा था...अब न तो हाथ में लाठी से न साथ में कुत्ता।"

वे सब पहलादसिंह पर झुके हुए उसे सोच और अचरज भरी नज़रों से देख रहे थे। पहलादसिंह रह-रहकर अपने ख़ुश्क होंठों पर जीभ फेरता हुआ हूँ-हूँ की आवाज़ निकाल रहा था।

"पता नहीं पानी लाने के लिए गया वह छोरा क्या अपनी माँ के गोड़े के साथ सटकर जा बैठा से !" ताऊ हरीराम ने झल्लाहट के साथ कहा।

कुछ देर बाद छोरा पानी लेकर आ गया। तेज़ चाल से आने के कारण पानी उछल-उछलकर उसके मैले ओढ़ना और पाजामे पर छलक रहा था।

"क्यों, माँ की गोद में जा बैठा था क्या जो इतनी देर लगा दी ?" ताऊ हरीराम ने उसकी ओर देखते हुए तीखे स्वर में पूछा।

छोरा चुप रहा; लेकिन बंसीलाल बोल उठा, "ताऊ, इसे फेर धमका लियो। पहले पहलाद के मुँह में पानी टपका दे। घड़ी-भर से पाई-पाई कह रहा है।"

ताऊ ने पहलादसिंह को उठाकर अपने घुटने के सहारे बिठा लिया और पानी का लोटा उसके मुँह से लगाता हुआ बोला, "ले, पानी पी ले।"

पहलादसिंह ने ज़रा-सी आँखें खोलीं और ताऊ की ओर देखा। फिर लोटे को एक हाथ से सहारा देकर पानी पीने लगा। चारेक घूंट पीने के बाद ही उसने लोटा पीछे को कर दिया और फिर नीचे को लुढ़क गया। मुँह से वह ऐसी आवाज़ें निकाल रहा था जैसे बहुत तकलीफ़ में हो।

"दो जने इसकी टाँगें सूंत दो और दो जने बाज़ू।" कहकर ताऊ स्वयं उसका सिर दबाने लगा।

कई लोग पहलादसिंह की ओर बढ़े और उसका अंग-अंग दबाने-सूंतने लगे।

"अरे आटे की तरह क्यों गूंथ रहे हो ? धीरे-धीरे दबाओ जिससे आराम मिले।" कहकर ताऊ फिर बंसी से बोला, "बंसी, अपने घर से दूध का कटोरा मँगवा ले।" फिर रुककर धीरे से उसने कहा, "मैं अपने घर से मँगवा लेता लेकिन मेरी भैंस का सारा दूध कठड़ा पी गया है।"

"ताऊ, क्यों झूठ बोल सै। यह कह कि सारा दूध बेच दिया है।" बंसीलाल ने कहा।

"नां, तेरी सौगन्ध। आज दोपहर में कठड़ा खुला छूट गया था।" ताऊ ने एक-एक शब्द पर ज़ोर देते हुए कहा। फिर हँसता हुआ बोला, "रोगी को पिलाना है...बाहमण का दूध जादे तागद देगा।"

बंसीलाल ने एक लड़के को अपने घर जाने के लिए कहा।

"दूध में थोड़ा घी छोड़ देने के लिए बोल दो।" ताऊ ने सुझाव दिया।

"और बादाम की गिरी डालनी हो तो टुनिए को बोल दे, इसने आज ही बादामों को धूप लगवायी से।" बंसीलाल ने कटाक्ष करते हुए कहा।

लड़का दिलचस्पी से उनकी बातें सुन रहा था। ताऊ ने उसे सख्त लहजे में

जाने के लिए कहा तो वह अनमना-सा पाँव घसीटता और बुदबुदाता हुआ मंच की ओर चला गया। उस तरह पाँव घसीटकर उसे चलते देख ताऊ चीखकर बोला, "ए छोरे, तेरे पाँव में क्या कीड़ा पड़ रिहा से जो सेंगड़ी पोटी की तरह चले से। जल्दी-जल्दी कदम उठा। इतनी देर में तो आदमी कश्मीरबाग को हाथ लगाकर उलटा आ जावे जितनी देर में तू मंच की मुंडेर तक पहुंचा है।"

ताऊ की बात सुनकर सब लोग हँसने लगे तो लड़का भी रुक गया और उनकी ओर देखता हुआ हँसने लगा। ताऊ ने फिर ऊँची आवाज में उसे डांटा तो वह दौड़ चला। ताऊ आँखें फैलाता हुआ बोला, "आजकल के छोरों के शरीर में पानी भर गया से। ऐसे मरमोंचे-अधमोंचे रहें जैसे इनका खून जोंकों ने पी लिया हो। जाट का पूत सेंगड़ी चाल चले तो समझो कि दूध में कहीं गंद का छींटा पड़ गया है।"

ताऊ की इस बात पर लोग ज़ोर-ज़ोर से हँसने लगे। पहलादसिंह की टाँगें और बाँहें दबाते हुए हाथ ढीले पड़ गये। ताऊ ने उसे धीरे से झँझोड़ते हुए आवाज दी। उसने पहले ताऊ की ओर देखा, फिर औरों को, और वैसी ही कमजोर आवाज में दोबारा पानी माँगा।

"अरे नहीं है। बहुत पानी मत पी। छोरे को गरम दूध लाने भेजा से, आता ही होगा।" कहते हुए ताऊ ने पहलादसिंह पर ध्यान से नज़र डाली। उसका चेहरा पीला देख वह चिंतित स्वर में बोला, "पता नहीं किस दुख से निकलकर आया है। अभी तक इसका दिल ठीक नहीं है।"

लगा।

"सड़पकर पी, सारी रगें खुल जायेंगी।" ताऊ ने समझाया।

पहलादसिंह दूध पीता रहा। फिर उसने ऐसा बुरा-सा मुँह बनाकर डकार ली जैसे उलटी आ रही हो।

"देखा, इसका हाल ?" ताऊ ने सबका ध्यान अपनी ओर खींचते हुए विश्वास भरे स्वर में कहा, "सब शराब की कसर है। कड़वा पानी गट-गट पीते हैं। लेकिन दूध देखकर मतली होने लगे से।"

दूध पीकर पहलादसिंह फिर लेट गया। ताऊ उसे सीधा लिटाकर उसकी छाती की धीरे-धीरे मालिश करता हुआ बोला, "एक बार तगड़े हाथों से इसका सरीर सूँत दो...जल्दी ठीक हो जावेगा।"

कई लोग पहलादसिंह की मुट्ठियाँ भरने लगे। उसके थके हुए शरीर को चैन महसूस होने लगा। ऐंठी हुई नसें ढीली पड़ने लगीं। कुछ देर के बाद मुट्ठी भरते लोगों की सुविधा के लिए पहलादसिंह अपने शरीर को इधर-उधर मोड़ने लगा। यह देखकर ताऊ ने उसे धक्का-सा मारते हुए कहा, "तू तो अब खिजमत कराने लग गया है। महाराज की तरह। उठ...।"

एक-एक करके सभी ने पहलादसिंह को छोड़ दिया। दो-एक मिनट बाद वह उठकर बैठ गया और अपने ही हाथों पिण्डलियाँ दबाने लगा। फिर बायें पाँव के अँगूठे में दर्द की टीस महसूस कर उसपर जमी मिट्टी की मोटी परत को देखने लगा। धीरे-धीरे खून सनी मिट्टी की पपड़ी उसने खुरची और फिर सबकी ओर देखता हुआ धीमे स्वर में बोला, "दौड़ते-दौड़ते ठोकर लगी तो पाँव के अँगूठे का नौ उखड़ गया से...जड़ से। बहुत दर्द हो रिहा से।"

"इब दिक मत कर। उठ, परे जाकर जखम पर पेसाब कर ले। ठीक हो जायेगा।" ताऊ ने सुझाव दिया। फिर उसकी ओर झुकते हुए पूछा, "तुझे हुआ क्या है ? कहाँ से भागकर आया से ?"

ताऊ का प्रश्न सुनकर पहलादसिंह को अपने साथ घटी सभी घटनाएँ एक साथ याद हो आयीं। उसका चेहरा फिर पीला पड़ गया। अपनी ओर उठे चेहरों को फटी-फटी आँखों देखता हुआ वह भय के मारे स्वर में बोला, "ताऊ, गजब हो गया ! नूं कहूं मैं मौत को धक्का देकर आया हूँ।"

यह सुनकर लोग उसके पास को सिमट आये। ताऊ ने उत्सुकता भरे स्वर में पूछा, "क्या हुआ था ?"

"मैं...मैं..." पहलादसिंह ने हकलाकर कहना शुरू किया, "साँझ पड़े मैं ऐसे ही घूमता हुआ रेल की पटरी पर फिर रहा था..."

ताऊ को उसका हकलाकर बात करना पसन्द नहीं आया। वह तीखी आवाज में बोला, "तू तो यों बात करे जैसे मुँह में दाने चबा रहा हो।"

पहलादसिंह ने ताऊ की बात को अनसुना करते हुए जोर से साँस अन्दर खींची और नाखून पर से फिर खून-मिट्टी खरोंचता हुआ बोला, "ताऊ, मेरे की तगों के रणधीर ने बताया था कि पंजाबियों ने टोडरपुर और दसपरा गाँव के पासवाली पहाड़ी की झाड़ियों में सराब खींचने की भट्ठियाँ लगा रखी हैं। उन्हीं की टोह में मैं उधर गया था। देर तक रेल की पटरी पर बैठा रिह्या। सेरा मेरे साथ था।" कहकर पहलादसिंह फिर चुप हो गया और चारों ओर देखकर पूछा, "सेरा मेरे पीछे आया था कि नहीं?"

"देखा तो नहीं।" एक साथ कई आवाज़ें आयीं। ताऊ कुछ क्षणों तक पहलादसिंह की ओर देखता रहा। फिर खीजकर बोला, "इब आगे भी बात सुनायेगा या मथले बामण की तरह सारी रात एक ही चौपाई पर अटका रिहेगा?"

पहलादसिंह ने ताऊ की बात पर कोई ध्यान नहीं दिया। सोच में डूबी आवाज़ में बोला वह, "रेल की पटरी तक तो सेरा मेरे साथ था।...वह अगर नहीं आया तो समझो मारा गया।"

"सेरे को बाद में ढूँढ़ लेंगे। पहले यह बता फिर क्या हुआ?" बसीलाल ने बेसबरी से पूछा।

पहलादसिंह ने धीरे-धीरे कहना शुरू किया, सूरज छिप गया तो मैं नरेणे की ओर जानेवाली राही पर चल पड़ा। लाठी से छोटे-छोटे पत्थरों को टहोके मारता हुआ मैं धीरे-धीरे बढ़ रहा था। कुछ दूर जाकर मैं पहाड़ी की तरफ मुड़ गया। ज्यों-ज्यों मैं पहाड़ी की ओर बढ़ रहा था, राही में बड़े-बड़े पत्थर आ रहे थे और झाड़ियाँ घनी हो रही थीं। जब आगे जाना मुश्किल हो गया तो मैं एक बड़े पत्थर पर चढ़ गया। चारों तरफ दूर-दूर तक देखा। पूसा फारम और नरेणा के बीच धुआँ उठने लगा तो मेरे मन में आया कि पास जाकर देखूँ किसने आग जलायी है। पर अँधेरा घना होने पर मैं उलटा आ गया।"

सब लोग साँस रोके पहलादसिंह की बात सुन रहे थे। उसने जोर से एक साँस खींची और धीरे-धीरे छोड़ता हुआ बोला, "मैं रेल की पटरी से दूर ही था के मैंने खुड़का सुना। सोचा, कोई गादड़ होगा। मैंने पत्थर उठाकर बगा दिया। बस उधर से इत्ती जोर की अवाज आयी जैसे सेर गुर्राया हो। मेरे तो हाथ-पाँव फूल गये। पर मैं हिम्मत करके भाग लिया। सेरा मेरे पीछे-पीछे था। रेल की पटरी तक उसके भौंकने की अवाज मुझे बराबर सुनती रिही। फिर..."

पहलादसिंह आगे न बोला तो एक साथ कई आवाज़ें आयीं, 'फिर क्या होया?"

"मैं रेल की पटरी से नीचे ढलान पर आ गया। अंधेरे में राही भी दिखाई

नहीं दे रही थी। मैं पागल की तरह बड़बड़ाता हुआ भागता रहा। फिर सेरे के भौंकने की ऐसी आवाज़ आयी जैसे किसी जनौर से भिड़ गया हो। कुछ देर बाद सेरा ऐसे चीखा जैसे किसी ने उसकी गरदन मींच ली हो। फिर मैंने उसकी चूं-चूं की आवाज सुनी। कुछ देर बाद वह भी बन्द हो गयी।" कहकर पहलाद-सिंह का गला रुँध गया।

पहलादसिंह ने बहुत उदास आवाज़ में कहा, "मैं ना नजफगढ़ जानेवाली सड़क पर जाकर दम लिया। सामने गाँव में दिये जलते देख और तुम जनों की आवाजें सुनकर जी में जी आया।"

पहलादसिंह फिर लेट गया। सब लोग भयभीत-से चुप बैठे थे। ताऊ ख़ामोशी को तोड़ता हुआ गम्भीर स्वर में बोला, "परमात्मा ही जाने क्या दिशा थी। कोई जनौर था या बला थी।"

"चीता होगा।...सुना है उस जंगल में चीता रहता है।" दुनीचन्द ने बताया।

"दुनिया, उस जंगल में चीता कहाँ से आ गिया? नरैणा, टोडरपुर और शादीपुर गाँवों के ढोर-ढंगर सारा दिन जंगल में चरे हैं। दसघरा के मर्द-औरत कामकाज से आते-जाते रहते है।" ताऊ ने तुनककर कहा।

"नहीं ताऊ, दुनिया ठीक कहे हैं। जरूर चीता होगा।" पहलादसिंह ने कहा।

"अरे चुप रह। ना तैंने चीता देखा है न दुनिये ने। तैं ना पता चल जाता के तेरे पीछे चीता आ रिहा है तो तू वहीं पड़ जाता।" ताऊ ने उन्हें डाँटते हुए कहा।

"नहीं ताऊ...पहलाद और दुनिया ठीक ही कहे हैं। करोलबाग की बगल में सारा जंगल कट गया है। सरकार पंजाबियों के लिए वहाँ टीन की चादरों के घर बना रिही है। मैं अपनी आँखों से देख आया हूँ। उसके साथवाली पहाड़ी का जंगल कट रहा है। बहुत-से आदमी और मसीनें काम पर लगी हैं। सब ओर पंजाबी भरे हैं। जंगली जनौर वहाँ से भागकर इब पूसा फारम के पीछे जंगल में आ गये होंगे।" बंसीलाल ने बताया।

"फिर क्या ताऊ, बंसी ठीक कहे हैं। मैंने जब पहाड़ी पर खड़े होकर करोल-बाग की तरफ देखा तो टीन के घर मुझे भी दीखे थे।" पहलादसिंह ने विश्वास-भरे स्वर में कहा।

"तुझे तो लाट साब का बड़ा दफ्तर भी दीखया होगा। और अपने दफ्तर में बैठा लाट साब भी।" ताऊ ने पहलादसिंह का मज़ाक़ उड़ाते हुए कहा। और फिर हैरत-भरी आवाज में बोला, "आजकल के छोरे नयी-नयी खबरें लायें से। दुनिया ने चीता देखया। बंसी नयी बस्ती की खबर लाया से। पहलाद ने लाट

साब को अपने दफ्तर में बैठे देखया से।"

"ताऊ, तू सारा दिन मिट्टी मे मिट्टी होता रहे है।...घर से खेत और खेत से घर ! तुझे क्या पता दुनिया-जहान में क्या हो रिहा से !" बसीलाल ने तीखे स्वर मे कहा, "जिन जंगलों में चीते और फनियर नाग को जाते डर लगता था वहाँ पजाबी आ गये हैं। दिल्ली मे तो पजाबी टिड्डी दल की तरह उतरे हैं।"

बसीलाल को शह पाकर दुनीचन्द भी ताऊ की तरफ को हाथ लहराता हुआ बोला, "ताऊ, कल को मेरे साथ चलियो और अपनी आँखों देख लियो। चाँदनी चौक, खारी बावड़ी, कश्मीरी दरवज्जा, पहाड़गंज, सदर बजार, करोलबाग —सब पजाबियों से भरे हुए हैं। रेल के टेशनों, सड़कों, लाल किले के मैदान— सब जगह पंजाबियों के टिड्डी दल बैठे हैं। जिन्हें शहर और आबादी में जगह नहीं मिली वे जगलों को साफ करके घर बना रिहे हैं। पूसा फारम के दरवज्जे तक ये पहुँच गये है।" कहकर दुनीचन्द ने सबकी ओर ध्यान से देखा। फिर इस अन्दाज से बोला जैसे किसी बहुत बड़े रहस्य का उद्घाटन करता हो, "ताऊ, जगल में पंजाबी और जनौर एक साथ नहीं रह सकते। दोनों में से एक ही रहेगा। पजाबी आ गये तो जनौरों को जगल छोडना ही था।"

"दुनिया, तू तो दिल्ली का यों नक्शा खींचे है जैसे वहाँ पजाबी न आये हों नादरशाह आया हो।" ताऊ ने हँसते हुए कहा।

"ताऊ, कहे दूँ हूँ अपने बलदों-बछड़ों को ध्यान से रखियो। आज चीता पहलाद का पीछा करता हुआ गाँव देख गया है। अव्वल तो रात को ही चक्कर काटेगा। नही तो कल सझा से ही ईंटों के भट्ठे के गड्ढों मे आ बैठेगा। तू तो जगल-पानी के लिए भी उधर ही जावे है। ख्याल से जाना अब चीता खबर करके हमला नहीं करता। बनिये की तरह चुपचाप दबोचे है। गरदन पकड़ के खून पी जावे है।" बसीलाल ने अपनी गरदन को दोनो हाथो में दबोचते हुए हँसकर कहा।

"बाहमण, तेरा दिल काला था ही। इब जीभ भी काली हो गयी से। गाँव के लिए सुख माँग। तू उलटा चोर को घर की राह दिखा रहा है। बाकी रहा चीता। तैं भी उसके साथ आ जाना—दोनों की टाँगें चीरकर गले में डाल दूँगा। जाट का बछड़ा भी बाहमण के चीते पर भारी होवे है।" ताऊ ने भी हँसते हुए कहा।

"चौधरी, मैं ठट्ठा नही करूँ। जब पूसा फारम बना था तो करोलबाग से हमारे गाँव की तरफ आनेवाला रास्ता कई महीने बन्द रिहा था। चीते ने दसघरा गाँव और टोडरपुर के तीन आदमी फाड़ दिये थे। लोग दिन मे भी उधर नही जाते थे। लाट साब के दफ्तर के एक गोरे अफसर ने इसी जगल मे चीता मारा था। तब कहीं रास्ता खुला था।" बसीलाल ने गम्भीर स्वर मे कहा।

"अरे वंसी," दुनीचन्द ने भविष्यवाणी जैसी करते हुए चिन्तित स्वर में कहा, "अगर दिल्ली इसी तरह फैलती रही तो एक दिन आसपास के ये सब जंगल-पहाड़ साफ कर दिये जायेंगे और चीता, लोमड़ी, गाद्दड़ और दूसरे जंगली जनौर हमारे खेतों में घुस आयेंगे।"

"दुनिया, शुभ बोल। तेरा तो खेत है न बाड़ी। डब्बी-सी दुकान है वस। गाँव को खतरा हो गया तो तू अपना सौदा उठाकर कहीं और जा बैठेगा। हम अपने खेत-वाड़ियाँ कहाँ उठाकर ले जायेंगे।" ताऊ ने उसे डाँटते हुए कहा। फिर ज़रा ऊँचे-तीखे स्वर में बोला, "दुनिया और वंसी यों वातें कर रहे हैं जैसे चीते से दस्त-पंजा लेकर आये हों।"

"ताऊ, चिन्ता न कर। मुंह और थप्पड़ में थोड़ा ही फरक रह गया है। पड़ेगा तो पता लग जायेगा।" वंसीलाल ने विश्वासपूर्ण स्वर में कहा।

वंसीलाल के ये शब्द ताऊ पर तेजाव की तरह पड़े। वह वहुत तीखी आवाज में। बोला, "वाहमण, हिम्मत है तो चल मेरे साथ इसी वखत जंगल में एक धोती जोड़ा फालतू साथ ले लीजो : अपने लिए और दुनिये के लिए भी।"

ताऊ की इस वात पर सब लोग खिलखिलाकर हँसने लगे। वंसीलाल कुछ शरमिन्दा-सा हो गया। लेकिन उत्साह दिखाता हुआ वोला, "चल ताऊ, मैं तियार हूँ।" फिर धोती को कसकर बाँधते हुए पहलाद से कहा, "चल तू हमें राह दिखाना।"

"तड़के चलेंगे।" पहलादसिंह ने वेदिली से कहा।

"चल ना, हम सब तेरे साथ होंगे। लाठियाँ और वल्लम लेकर। सूबेदार माड़ूसिंह को वुला लेते हैं। उसके पास पक्की रैफल है। उसकी एक गोली दो आदमियों को एक साथ ठण्डा करे है।" ताऊ ने कहा और उठते हुए सबको चलने के लिए इशारा करता हुआ वोला, "चलो छोरयो, अपनी-अपनी वल्लम और लाठियाँ ले आओ।"

"लालटेन भी तो चाहिए," वंसीलाल ने कहा, "एक मैं लाता हूँ, दो दुनिये से लो और एक ताऊ, तू ला।" फिर गिनती करता हुआ वोला, "हम आठ जने हैं। सूवेदार नौ, दसवाँ चन्दगी को वुला लो; और ग्यारहवाँ...।"

"क्या ठीकरी पहरा लगाना है जो सारे गाँव की लामवन्दी करना चाहे से? भागना पड़ा तो आपस में ही भिड़कर गिर जायेंगे। दस आदमी ही वहुत हैं।" ताऊ ने कहा।

"ताऊ, दुनीचन्द को क्यों गिनो हो?" वंसीलाल ने शरारत से कहा।

"ले, दुनिया जरूर जायेगा। दो लालटेन दे रिहा से। क्या भरोसा तेरे जैसा कोई ऊत उसकी लालटेन से तेल निकाल ले। खवरदारी के लिए उसका

साथ जाना जरूरी से।" ताऊ ने हँसते हुए कहा और वे सब हथियार उठाने के लिए अपने-अपने घरों की ओर बढ़ गये।

दो-

कुछ देर बाद सब लोग लाठी-बल्लम आदि से लैस होकर गाँव के बाहर इकट्ठे हो गये। सूबेदार माड़सिंह भी कन्धे से बन्दूक लटकाये और कमर में कारतूस की पेटी बाँधे मौजूद था। उसके हाथ में चार सेलवाली बड़ी टॉर्च भी थी। उसकी रोशनी उसने पहले हरेक के चेहरे पर फेंकी और इस तरह सबको पहचानकर पहलादसिंह से पूछा, "हाँ पहलाद, चीते को तूने कहाँ देखा था?"

"रेल की पटरी के पार। नरेणा गाँव और पूसा फारम के बीच पहाड़ी के पास। वह शायद वहीं से मेरा पीछा कर रिहा था। पहलादसिंह ने धीमी आवाज़ में बताया।

"चीते को तूने आँखों से देखा था?" सूबेदार ने पूछा।

"आँखों से देख लेता तो यहाँ कैसे पहुँचता? वहीं जो ढेर हो जाता।" बंसीलाल ने हँसते हुए कहा।

"यह तो अँधेरे में शिकार खेलने के माफिक है। खैर, देखते हैं। ताऊ करें कूच?" सूबेदार ने पूछा।

"सूबेदार, तूने पेनशन पा ली है। क्या चौधरी तेरा भी ताऊ है?" दुनीचन्द ने ठठोली करते हुए पूछा।

"लै, मैंने तो सुना है कि ताई भी चौधरी को अकेले में ताऊ कहकर ही बुलाये से!" बंसीलाल ने बात को आगे बढ़ाते हुए कहा, "चौधरी मैं मुखिया, चार-पाँच साल तो बडा होंवे ही। लेकिन वह भी इसे ताऊ कहकर ही बुलावे से।"

"बाहमण, फालतू बात मत कर, आगे होकर चल।" ताऊ ने मज़ाक खत्म करने के लिए गम्भीर स्वर में कहा।

सब लोग ज़मीन पर ज़ोर-ज़ोर से लाठियाँ पटकते हुए नजफगढ़ रोड की ओर बढ़ने लगे। सड़क तक वे सब आपस में हँसी-मज़ाक करते रहे। वहाँ पहुँचकर सूबेदार माड़सिंह रुक गया और सबको सावधान करता हुआ बोला, "अब हँसी-मज़ाक बन्द करो। आगे दुश्मन का इलाका है।"

सब एकदम चुप हो गये तो सूबेदार उनके सामने खड़ा होकर बोला, "पहलादसिंह सबसे आगे चलेगा। बायें हाथ में लालटेन और दायें हाथ में बल्लम लेकर। हमारी कुल नफ़री दस है। पहलादसिंह के पीछे तीन आदमी होंगे। फिर मैं। बाक़ी जवान मेरे पीछे आयेंगे। कोई आदमी बात नहीं करेगा। दायें-बायें देखते हुए होशियारी से चलेगा।" सूबेदार माड़ूसिंह ने आदेश दिया।

"सूबेदार, क्या लाम पर जा रिहे हो?" ताऊ ने पूछा।

"ताऊ, लाम ही समझो। दुश्मन को पहल करने का मौका नहीं देना चाहिए।" सूबेदार ने गम्भीर स्वर में कहा। फिर कुछ धीमी आवाज में बोला, "एक लालटेन सबसे आगे, दो बीच में, और एक सबसे आखिर में।...जंगली जानवर रोशनी से डरता है।"

दसों लोग चुपचाप आगे बढ़ने लगे। सूबेदार माड़ूसिंह सबको रोकता हुआ धीमी आवाज़ में बोला, "अगर दुश्मन दायीं ओर से हमला करे तो तुम सब मेरे बायीं ओर हो जाना। अगर बायीं ओर से करे तो दायीं ओर मेरे पीछे पुजीशन लेना। ऐसा न हो कि चीते का शिकार खेलते-खेलते कहीं अपना ही आदमी ढेर कर दें। पक्की गोलियां हैं, जिसको लगी वह चीख भी नहीं मारेगा।"

सब एक-दूसरे के पीछे लाइन में चलने लगे। ज्यों-ज्यों वे आगे बढ़ते जाते थे उनके मन में भय का एहसास बढ़ रहा था। वे इतने सतर्क थे कि मामूली-सी आहट पर भी चौंक जाते। पहलादसिंह तो भय के मारे भीतर-भीतर काँप ही रहा था। एक दबी-घुटी चीख़ जैसे उसके गले में फँसी हुई थी। दिल की धड़कन उसके कानों में तबले की थाप की तरह भड़क रही थी। एकाएक वह चलते से एकदम रुक गया और एक ओर को संकेत करता हुआ भयभीत स्वर में बोला, "वह देखो...बायीं ओर...झाड़ी के पीछे...वह क्या है...?"

सूबेदार माड़ूसिंह ने निशाना लेकर टॉर्च की रोशनी फेंकी। झाड़ी के नीचे काई-से बदरंग पत्थर को ध्यान से देखकर बोला, "चीता नहीं है, आगे बढ़ो।"

पहलादसिंह फिर डरता-डरता आगे बढ़ने लगा। ज्यों-ज्यों रेल की पटरी नजदीक आ रही थी, उसके कानों में चीते की दहाड़ और शेरा की चूं-चूं गूंजने लगी थी। उसके गले में फँसी चीख़ रगें फाड़कर निकलना चाहती थी। दाँत भींचकर बड़ी कठिनाई से वह उसे रोके हुए था।

रेलवे लाइन के दोनों ओर बीस-पचीस गज चौड़ी और कोई दस गज गहरी खाइयों का एक लम्बा सिलसिला था। उनमें उगी हुई कितनी ही झाड़ियां रेल के इंजन से गिरनेवाले अंगारों से जलकर राख हो गयी थीं और अब वहाँ पर बड़े-बड़े काले धब्बे रह गये थे। ये धब्बे रात के अँधेरे में भी अलग नजर आ रहे थे। एक झाड़ी तो कुछ दूर पर उस समय भी सुलग रही थी। उसकी मद्धिम

और काँपती हुई रोशनी ने आसपास के वातावरण को डरावना-सा बना दिया था।

खाई का ढलान शुरू हुआ तो पहलादसिंह रुक गया और डरे-डरे स्वर में बोला, "सेरा यहाँ तक मेरे साथ था। इसके बाद मुझे कुछ पता नहीं।"

सूबेदार माड़ूसिंह, ताऊ और बंसीलाल लालटेन को आगे बढ़ाकर ध्यान से खाई में देखने लगे। सूबेदार ने चारों ओर टॉर्च की रोशनी फेंकी। वह जली-अधजली झाड़ियों को देखकर बोला, "ताऊ, यहाँ तो कुछ भी नहीं।"

"आगे चलते हैं।" कहकर ताऊ खाई में उतर गया।

वे रेल की पटरी के ऊपर जा खड़े हुए। सूबेदार माड़ूसिंह टॉर्च की रोशनी चारों ओर दूर-दूर तक फेंकता देखने लगा। वहाँ केवल झाड़ियाँ और पत्थर थे या कहीं-कहीं कीकर के छोटे-छोटे पेड़ थे। ताऊ खीज-भरे स्वर में बसीलाल से बोला, "बसी, पहलाद तो जनम से ही अक्ल से पैदल था, इसके साथ तू भी मूरख बन गया से। यहाँ चीता तो क्या चीटी का बच्चा भी नहीं है।"

बसीलाल ने मुँह से लम्बी-सी हुंकारी निकाली। फिर ताऊ की ओर मुड़ता हुआ बोला, "ताऊ, तू क्या यह समझे से कि चीता भी तेरी तरह घर बनाकर रहे है। वह इतना होशियार जनौर है कि तेरी बगल में पड़ा होगा लेकिन तुझे खबर तक नहीं होगी।"

ताऊ कुछ क्षण चुप रहकर बोला, "यूँ कहूँ, सेरे ने मौका लेकर पहलाद से पीछा छुड़ा लिया से और किसी भले आदमी के संग चला गया है।"

"ताऊ, मैं झूठ नहीं कहता। सेरे को किसी जंगली जनौर ने जरूर दबोचा था। उसकी चूँ-चूँ इब भी मेरे कानों में गूँज रही है।" पहलादसिंह ने सौगन्ध खाते हुए कहा।

इधर-उधर कुछ देर और देखकर वे सब ही निश्चिन्त हो गये कि यहाँ चीता नहीं है और पहलादसिंह को सिर्फ वहम हुआ था। वे रेल की पटरी पर गोल दायरे में खड़े हो गये। ताऊ ने पटरी पर लाठी पटकते हुए कहा, "मैं तो आज इस तरफ घनी देर के बाद आया हूँ।" फिर वह दिल्ली के क्षितिज पर फैले रोशनी के सैलाब को देखता हुआ बोला, "सहर में तो रात में भी दिन जैसी रोशनी रहे से।...करोलबाग क्या हमारे गाँव के नगीच आ गया है...उधर बड़ी चमक-दमक हो रही से?"

"ना ताऊ, ये तो नयी बस्ती की बत्तियाँ हैं। वहाँ सरकार ने पंजाबी बसाये हैं। मैं तो आँखों से देख आया हूँ। इब कोई ना कह सके है कि यहाँ कभी जंगल था, कि दिन में भी गादड़ बोले सें। इब पक्की सड़कें हैं, सड़कों पर बिजली के खम्भे हैं।" बसीलाल ने ब्यौरा देते हुए कहा।

"अच्छा!" ताऊ को बड़ा आश्चर्य हुआ। फिर अतीत में डूबी आवाज में

वह बोला, "लाट साब ने हमारे देखते-देखते नयी दिल्ली बसायी। उस वखत दिल्ली दक्खन को फैली थी। इब पच्छम को फैल रिही है।"

"हाँ ताऊ, यहीं हाल रहा तो एक दिन दिल्ली हमारे गाँव तक आ पहुँचेगी।" दुनीचन्द बोला।

ताऊ उसी तरह अचरज में डूबा हुआ पटरी पर आगे बढ़ने लगा। दूर रेल के इंजन की सीटी सुनकर वह घबराया और जल्दी से पटरी से नीचे उतर गया।

"ताऊ, क्यों डरे से ? इस पटरी पर रेल आधी रात को आवे से। डाकगाड़ी होवे है। बहुत तेज दौड़े से। यह सीटी रोहतक की तरफ जानेवाली गाड़ी की होगी।" दुनीचन्द ने ताऊ को समझाते हुए कहा।

सूबेदार माड़ूसिंह उनसे दो क़दम आगे चलता हुआ टॉर्च की रोशनी खाई में दूर-दूर तक फेंक रहा था। एक स्थान पर उसने रोशनी केन्द्रित कर दी और ध्यान से उधर देखता रहा। फिर उसकी देह में सिर से पैर तक एक सिहरन-सी दौड़ गयी और गम्भीर स्वर में वह बोला, "पहलाद ठीक ही कहता था। वह देखो—निचान में, झाड़ी के पास।" उसने टॉर्च की रोशनी को उधर स्थिर किया।

वहाँ शेरे की लाश पड़ी थी। देखते ही वे सब काँप-से गये। पहलादसिंह के गले में फँसी हुई चीख बिलबिलाकर उसके होंठों पर आ गयी।

"होशियार, खबरदार।" सूबेदार माड़ूसिंह ने बन्दूक़ का निशाना लेते हुए उन्हें सतर्क किया।

"हाँ, आगे मत जाओ। शायद वहाँ चीता हो।" ताऊ ने सबको रोका।

"ताऊ ठीक कहे सैं। पहले पत्थर फेंकते हैं। कोई जनौर आसपास भी होगा तो भाग जायेगा।" सूबेदार माड़ूसिंह ने सुझाव दिया।

वे सब पटरी से पत्थर उठा-उठाकर उस जगह के आसपास फेंकने लगे। उससे घबराकर झाड़ियों में छिपे खरगोश निकल-निकलकर भागने लगे। एक गीदड़ ने भागते हुए हुआ-हूँ मचा दी जिसके जवाब में जंगल-भर में गीदड़ों की आवाज़ें गूँजने लगीं।

"कहो तो एक फैर कर दूँ। गोली की आवाज़ सुनकर तो बब्बर शेर भी मैदान छोड़ जावे है।" सूबेदार ने कहा।

"नहीं। फैर क्यों खराब करते हो। हम दस जने हैं : पत्थर मार-मारकर जान निकाल देंगे।" ताऊ बोला।

कुछ देर में यह विश्वास हो जाने पर कि वहाँ कोई जंगली जानवर नहीं है, वे लोग पटरी पर से ढलान में को उतर गये। एक अधजली झाड़ी के पास शेरे की लाश पड़ी थी। उसकी गरदन पुराने कपड़े की तरह उधड़ी हुई थी। पेट और छाती की जगह मांस के छोटे-छोटे टुकड़े रह गये थे जैसे उन्हें उलटा धुना गया

हों। आसपास मांस के कई लोथड़े भी पड़े थे। खून को जमीन ने चूस लिया था और ये लोथड़े मिट्टी से चिपक गये थे।

शेरे की यह हालत देख पहलादसिंह की आँखें भीग आयीं। फफकता हुआ क्रुद्ध स्वर में बोला, "मेरे हाथ आ जाये चीता तो टाँगें चीर दूं।"

"पगले, भगवान का शुक्र कर कि तू बच गया।" ताऊ ने कहा। फिर शेरे की लाश पर झुक गया। उसकी एक टाँग पर दाँतों के गहरे घाव देखकर बोला, "चीते ने इसे यहाँ नहीं मारा से। कहीं और मारा से...यहाँ घसीट लाया से।"

दुनीचन्द को शेरे की लाश देखकर कँपकँपी बँध गयी। बंसीलाल ने कानों को छूते हुए डरे स्वर में कहा, "चीता बड़ा खूँखार जनौर है। देखने में तकड़े कुत्ते जैसा होता है लेकिन ताकत का गड्ढा होते सैं। लोमड़ी-भैंस तो क्या, हाथी को भी मार गिराये से।"

थोड़ी देर भीड़ बाँधे सब वहाँ खड़े रहे। फिर गाँव की तरफ चल पड़े। सभी के मन को भय ने घेरा था। शेरे की चिथड़े-चिथड़े हुई लाश उनकी आँखों के सामने घूम रही थी। अपने इलाके में चीते के आ जाने के खयाल से ही उनके रोम-रोम में भय बस गया था। सब चुप थे। जरा-सी भी आहट होने पर वे सिमटकर खड़े हो जाते और आँखें फाड़े उधर ही देखने लगते।

नजफगढ रोड पार करके जब वे अपने गाँव के करीब पहुँच गये तो ताऊ ने चुप्पी तोड़ते हुए गम्भीर स्वर में कहा, "रेल की पटरी से यहाँ तक आदमी आध घण्टे में पहुँचे सैं। कुत्ता इससे कम देर में—और चीता तो और भी कम देर लेगा!"

सूबेदार भाग सिंह ने ताऊ की बात की पुष्टि की तो दुनीचन्द को एक बार फिर कँपकँपी बँध आयी।

अभी वे गाँव के बाहर छप्पर के पास ही थे कि कानों में एक साथ कई आवाजें आयीं। वहाँ अलाव जल रहा था। उसकी काँपती लौ में उन्हें कई धुंधले-से चेहरे नजर आये।

"सारा गाँव यहाँ क्यों इकट्ठा से?" ताऊ ने सोचते हुए पूछा।

"खबर फैल गयी होगी न। पता करने आये होंगे।" सूबेदार ने कहा।

अलाव के नजदीक पहुँचे सब तो वे लोग उठकर खड़े हो गये। एक बार को अलाव उनके पीछे छिप गया। मुखिया एक टोकरा उलटा किये उसपर बैठा था। उठता हुआ बोला, "क्या खबर लाये?"

"पहलाद ठीक ही कहे से। शेरा की लहास मिल गयी रेल की पटरी के पार, निचान में।" ताऊ ने अधडूबे स्वर में बताया।

यह सुनकर वहाँ बैठे लोगों पर एक सन्नाटा जैसा छा गया। थोड़ी देर के बाद मुखिया ने सोच में पड़ते हुए कहा, "हम लोग कई पुश्तों से इस गाँव में रह

रहे हैं। कभी नहीं सुना था कि इस इलाक़े में चीता आया भी हो। इस बंजर में तो इधर के कई गाँवों के ढोर चरते थे।"

"चीता तो पूसा फारम से आगे की ऊँची पहाड़ीवाले जंगल से आया होगा। उधर निचान में सरकार ने पंजाबियों को बसाने के लिए मकान बना दिये हैं : टीन की छतों के। बंसी-दुनिया और पहलाद देख भी आये हैं।" ताऊ ने आवाज को ऊँचा करके कहा, "बस्ती में तो चीता रहेगा नहीं। वहाँ ढोल-ढमक्का सुना होगा तो इधर जंगल में आ गया होगा।"

"इस जंगल में भी ज्यादा दिन टिकने का नहीं। पूसा फारम के बड़े दरवज्जे के सामनेवाली पहाड़ी और बगलवाली पहाड़ियाँ भी तोड़ी जा रही हैं। वहाँ भी पंजाबियों के लिए मकान बनेंगे।" दुनीचन्द ने बताया।

मुखिया सोच में पड़ गया। फिर खंखारकर पास खड़े लड़के को कन्धे से हिलाता हुआ बोला, "ओ छोरे, जा दयाले और रूढ़े चौकीदार को बुला ला।"

लड़का चीते की बातें सुनकर डरा हुआ था। जाने में हिचकिचाहट दिखायी तो ताऊ भड़का, "देख इस छोरे का हाल ? चीता अभी रेल की पटरी के पार है और यह अभी डर से बूँद-बूँद मूतने लगा है।"

"ताऊ, मैं जाता हूँ।" एक और लड़के ने उठते हुए कहा।

"कौन बोला ये ?" ताऊ ने पूछा।

"ताऊ, बनवारी का छोरा हूँ।"

"राजपूत का छोरा है ना ? शाबाश ! राजपूत का छोरा तो अकेला ही चीते से भी भिड़ जावेगा।" ताऊ ने गर्व से कहा।

कई लोगों ने ताऊ की बात पर सिर हिलाकर उस छोरे को बढ़ावा दिया। मुखिया फिर उस औंधे टोकरे पर बैठ गया था। लोग-बाग सब अगाव तापने लगे थे। पहलाद चुप बैठा उसे कुरेद रहा था।

हठात् मुखिया ने दूर सामने के अँधेरे में आँखें गड़ाये-गड़ाये धीमे स्वर में कहा, "जंगली जनौर के मुंह को एक बार बस्ती का खून लग जाये तो फिर वह उधर चक्कर मारने में हिचकता नहीं। अपने-अपने माल-मवेशी का सब ख्याल रखो। अँधेरे-उजेले दूर तक खुला मत छोड़ो। खेतों में भी अबेर मत करो। ऐसा कभी मत करना कोई कि ढोरों को चरने छोड़ दो और आप ताश-चौपड़ पर बैठ गये।"

बंसीलाल भारी-सी जम्हाई लेता हुआ बोला, "ईश्वर की दया समझो कि कुत्ते की जान देकर ही चीते का पता चल गया।"

"बंसी, इब तुम बचके रहियो। सुना है जंगली जनौर को मीठा खून बहोत भावे है और तूने तो ताजे-ताजे शराद खाये हैं !" ताऊ ने हँसते हुए कहा।

"ताऊ, तू मेरी चिन्ता मत करियो, अपनी सोच। पहले तू गाँव से बाहर नहीं

आवै था। इस घर से भी बाहर मत निकलियो।" बंसीलाल ने सुनाकर कहा।

तब तक दोनों चौकीदार आ गये तो लोगों का ध्यान उनकी ओर चला गया। मुखिया ने उन्हें पास बुलाकर अपने पूरे भारीपन के साथ कहा, "इलाके में चीता आ गया है। आज उसने पहलाद का कुत्ता फाड़ खाया है। सूबेदार, ताऊ, वली, दुनिया सब अपनी आँखों से देख आये हैं। इस रात को खबरदारी से पहरा देना। कल थाने में भी खबर पहुँचा देंगे।"

मुखिया के उठते ही सब लोग चल दिये। भय का भाव सभी के चेहरों पे बैठा हुआ था।

तीन—

पहलादसिंह अपने इकलौते बेटे को गोद में लिये सुबह-सवेरे ही दुलीचन्द की दुकान पर आ बैठा। गली में आने-जानेवाला हर कोई उससे रात की घटना के बारे में पूछता। वह पूरी कहानी ऐसे सुनाता कि रोयें खड़े हो जाते। फिर आँखें भींचकर कानों को छूते हुए बड़े डरे-डरे स्वर में कहता, "बस पूछो मत, जो देखा और जो सुना वो मैं जानूँ हूँ या ऊपरवाला!"

दुलीचन्द अपनी मिट्टी की बेडौल अँगीठी में चार कोयले डालकर ताप रहा था। बीच-बीच में पहलादसिंह को टोककर कहानी में ऐसे कुछ जोड़ता आता जैसे सारी घटना में उसके अंग-संग रहा हो। इस हद तक वह कहानी का एक पात्र बन बैठा था कि पैसे-दो पैसे का सौदा लेनेवाले ग्राहक को हाथ के झटके से लौटा देता था। उधर निकलते बच्चे दुकान पर जो रुकते तो फिर हटने का नाम न लेते। सबसे अधिक रस तो कहानी में उन्हें ही मिल रहा था। उनकी भीड़ जब चबूतरे तक उमड़ आती तो दुलीचन्द तराजू की टूटी डण्डी उठाकर दाँत पीसता हुआ कहता, "इन छोरों का हाल देखो! निठल्ली औरतों की तरह इनमें भी कान-रस बढ़ गया है।"

बच्चे एक-दूसरे से टकराते-उलझते पीछे को हट जाते, लेकिन कुछ ही देर में फिर इकट्ठे हो जाते।

पहलादसिंह की पत्नी अंगूरी अपनी ड्योढ़ी में शक्कर की मटकी लिये बैठी थी। गाँव की औरतें उसके आदमी की जान बच जाने पर उसे बधाई देने के लिए एक के बाद एक आ रही थीं। बधाइयाँ लेकर वह शक्कर से उनका मुँह मीठा

कराती और फिर घटना का बीसवीं-पचीसवीं बार ब्यौरा सुनाती। इतना ही नहीं, हर बार वह अपनी ओर से भी कुछ रंग भर दिया करती। दोनों हाथ कन्धों तक उठाकर और आँख फैलाकर कहती कि उनके और चीते के बीच तो बस इतना फासला रह गया था जितना दो दाँतों के बीच में होता है। यह सुनकर उन औरतों के मुँह खुले-के-खुले रह जाते। फिर अंगूरी आकाश की ओर आँखें उठा और हाथ जोड़कर कहती, "बस पूछो नहीं। काकू के बाप को चीते की साँस अपनी एड़ियों पर मसूस (महसूस) हो रही थी।...नूं कहूँ कि भगमान ने उसे हाथ देकर बचा लिया..." कहते-कहते उसका गला रुँध जाता और आँखों में आँसू छलक आते।

अंगूरी ने न जाने उस दिन कितनी बार धरती को दोनों हाथों से छूकर सिर झुकाया था और रोयी थी। हर बार इस क्रिया के बाद उसके पास बैठी भगवती ब्राह्मणी उसे पुचकारकर कहती, "अंगूरी, धन्यवाद कर मेरे उस भगवान का जिसने तेरा सुहाग अपना हाथ देकर रख लिया। बलिहारी जा पवन पुत्र हनुमान के, जिसने अपनी सारी शक्ति पहलाद को दे दी और वह चीते को पछाड़कर आ गया।"

जब औरतों का आना बन्द हो गया और अंगूरी अकेली रह गयी तो भगवती भगवान् को याद करती हुई बोली, "अंगूरी, नूं कहूँ, कोई छाया होगी, दिशा होगी। कुछ दान दे दे : टल जायेगी। भगवान का कीर्तन करा दे, पहलाद का सीस मन्दिर में भगवान के चरणों में निवा दे।"

अंगूरी ख़ामोश रही तो भगवती ने कुछ तुनककर रूखे स्वर में कहा, "हम पापियों में यही दोष है। जो हाथ देकर तुम्हारी रक्षा करे है उसी की तुम बात नहीं पूछते। मेरी मानो तो हनुमान जी का लँगोट, रत्ती-दो रत्ती सोना पल्ले में बाँधकर तिहाड़ के मन्दिर में दान कर दे। सोना न सही, चाँदी का रुपया ही दे दे।"

"ताई, तू ठीक कहे से। पर मेरे पास न सोना है ना ही चाँदी का रुपया। ब्याह की पजेबें पड़ी हैं, वो मैं ना दूं।" अंगूरी ने कहा।

"अरी बावली, भगवान के नाम पर हाथ से जो निकल जाये सो अच्छा। पापी प्राणी की लालसा का अन्त नहीं से। घर में नाज तो होगा। घड़ी-दो घड़ी वही दे दे। पहलाद का हाथ लगवा लेना। छाया से, टल जावेगी।" भगवती ने कहा। फिर उसकी ओर झुकती हुई बोली, "तिहाड़वाले मन्दिर में नया पुजारी आया से। सुना है बहुत ज्ञानी आदमी है। सास्तर पढ़ा है। टोना-जादू भी करे है...।" भगवती उसके कान में को फुसफुसायी, "वह है ना, सुलतानसिंह की लुगाई—सीतो! मर्द बसाता नहीं था। रात को जरूर मारता और सवेरे जाग खुलते ही फिर जूता उठा लेता था। एक दिन वह मेरे पास आकर बहुत रोयी।

कहने लगी बाबाजी के जोहड़ में कूदकर जान दे दूंगी, या धतूरा खा लूंगी।"

अगूरी ने भगवती को अचरज और शंका-भरी नज़र से देखा तो वह उसकी ओर को और भी झुकती हुई बोली, "तेरी सौगन्ध, सच कहूँ। रत्ती-भर भी झूठ कहूँ तो मेरी देह में कीड़े चलें।...मैं उसे मन्दिर के पुजारी के पास ले गयी। पता नहीं उसने क्या मन्त्र फूंका, कैसा टोना दिया—सुलतानसिंह इब उसे आँख के काजल की तरह रक्खे है। सीतो जब भी कहीं मिले है तो पाँव पकड़ लेवे है। मुझे तो बस इस बात की खुशी कि उसका घर बस गया। नूं कहूँ इब तो वह पालहना भी झुलायेगी।" भगवती ने ऐसे कहा जैसे कोई बड़े रहस्य की बात कह रही हो।

"अच्छा!" अगूरी की आँखें फैल गयीं। फिर भगवती की ओर झुकती हुई बोली, "गली-मुहल्ला तो कुछ और ही कहे है। सोमा ताई भी कह रही थी कि उसके पेट में वायगोला है। यह भी सुनूं कि सीतो ने अपने घरवाले को कुछ खिला दिया है। आजकल तो वह उसे सूखी चाय और पुजारी को मलाईवाला दूध पिलावै है।"

"आ गया तेरे मन में भी पाप!" भगवती भड़क उठी, "शायद तेरे आदमी को तेरे इसी पाप का दण्ड मिला है। मन का मैल आँख को नहीं दीखे, इसी तरह सामने आवे सै। मेरा भगवान सब कुछ देख रहा है। वह हर पापी को उसके किये का दण्ड देवे है। सीतो बेचारी ठाकुरजी के भोग के लिए मन्दिर में दूध देवे है। लोग सौ-सौ बातें बनावें हैं। वह तो सास-माँ समझकर मेरा भी आदर-सत्कार करे से। सो लोग तो इसपर भी कहेंगे कि मुलताने की कमाई इस रण्डी बामणी के घर जा रही है! यह धोती भी तो उसीने मुझे दी है। फसल आने पर उसका आदमी मेरे घर में मन-भर नाज अपने हाथों से छोड़ने आवे सै।" भगवती ने ऐंठ के साथ कहा। फिर थोड़ी देर चुप रहकर आँखें नचाती हुई बोली, "पिछले जनम में जिसको दिया उससे इस जनम में लेना लिखा सै। विधाता के लिखे को कोई नहीं मेट सके। जिस तरह मैं बाल-विधवा हो गयी थी, गाँव के चौधरी मेरी मदद न करते तो मैं भूखी मर जाती। घर में ठाकुर न होते तो पहाड़ जैसी जवानी कैसे बिताती! जिसका किसी के साथ जो सम्बन्ध है वह हर हीले में पूरा होकर रहेगा अगूरी।"

"ताई, तू तो बुरा मान गयी। मैं तो सुनी-सुनायी बात कहूँ हूँ। मेरे मन में तो ताई, ठाकुरजी की सौगन्ध, न कोई पाप है और न मैल...। ताई, मन्दिर कब जाऊँ?" अगूरी ने यों कहा जैसे अपने कहे का प्रायश्चित्त कर रही हो।

"अभी चली जा। पहलाद के साथ जाना। घड़ी-दो-घड़ी नाज में चाँदी का एक रुपया डाल दे। तेरी गाय दूध तो देती होगी? एक कटोरा दूध ले लेना और एक भेली गुड़ की।" भगवती ने समझाते हुए कहा, "हाँ हनुमानजी के लंगोट के

बारे में तो मैं भूल हो गयी। एक गज लाल रंग का कपड़ा ले लेना। हनुमानजी का लंगोट जरूर दो। जंगली जनौरों से पवन-पुत्र ही रच्छा करे हैं।"

"ताई, तू बैठ। सारा घर खुला पड़ा सैं। मैं दौड़कर काकू के बाप को बुला लाऊँ। बनिये की दुकान से कपड़ा भी लेती आऊँगी।"

"अच्छा, जा। मुझे सेर-दो सेर दाने देती जा। पिसाने थे, कम पड़ गये हैं। इतनी देर में मैं दाने छाँट लूँगी।" भगवती बोली।

"ताई, कोठरी में ऊपरवाले मटके में गेहूँ है। उससे नीचेवाले में बाजरा। जो जी चाहे ले ले।" कहती हुई अंगूरी बाहर निकल गयी।

अंगूरी बाहर गली में आ गयी तो उसने घूंघट निकाल लिया और पाँव उठाती हुई दुकान की ओर बढ़ने लगी। दुकान के सामने बहुत-से लोगों को खड़ा देख वह ठिठक गयी। घूंघट को भी उसने और नीचे खींच लिया।

पहलादसिंह काकू को कन्धे पर बिठाये लोगों की उस भीड़ में घिरे एक पंजाबी सरदार के सामने खड़ा था। सरदार साइकल थामे हुए था जिसके कैरियर पर कपड़े की एक बड़ी-सी गठरी बँधी हुई थी। हैण्डल पर शोख़ रंग के लँहगे, दुपट्टे और सफ़ेद धोतियाँ तह जमाकर रखी हुई थीं। भीड़ के लोग एक साथ बोल रहे थे।

अंगूरी को देख दुनीचन्द ऊँची आवाज़ में रौब से बोला, "ए सरदार, घसीट ले अपनी सैकल यहाँ से। ये सरीफों का गाँव है। मेरी दुकान पर गाँव की बहू-बेटियाँ और चौधरानियाँ सौदा लेने आती हैं। हट यहाँ से। चौधरानी की राह क्यों रोके है?" कहते हुए दुनीचन्द ने सरदार की साइकल को धक्का-सा दिया।

दुनीचन्द के ये शब्द अंगूरी को बहुत भले लगे। जब दुनीचन्द ने पहलादसिंह को चौधरी के उपनाम से सम्बोधित करते हुए बताया कि चौधरिन आयी है तो अंगूरी फूली नहीं समायी। वह घूंघट में मुसकरा दी और भीड़ से बचती-बचाती दुकान के अन्दर चली गयी। पहलादसिंह भी उसके पीछे-पीछे आ गया। अंगूरी को देखते ही काकू उसकी ओर को लमकने लगा। पहलाद ने उसे अंगूरी को थमाकर अपनी मैली धोती की फेंट कसते हुए पूछा, "क्या काम सैं?"

"भगवती बामणी कहे से कि मन्दिर में हनुमानजी का लंगोट दूं और तेरा हाथ लगवाकर घड़ी-दो घड़ी नाज में एक चाँदी का रुपया और दूध का कटोरा और गुड़ की ढेली दूं। मेरे पास नाज, दूध और गुड़ है। लंगोट के लिए गज-भर लाल रंग का कपड़ा और चाँदी का रुपया ना है। दोई पूछने आयी थी।" अंगूरी ने घूंघट को ऊपर उठाते हुए कहा।

पहलादसिंह चुप रहा तो दुनीचन्द बोला, "चौधरी पहलादसिंह, चौधरानी के काम में विघ्न मत डालियो। सिरफ तेरी खैर माँगने के लिए भगवान के नाम पर दान दे रही से।" और पहलाद का उत्तर सुनने से पहले ही बोल भी उठा,

"कितना, एक गज कपड़ा चाहिए ?"

"हाँ," अंगूरी ने घूँघट हिला दिया।

दुनीचन्द ने एक गज कपड़ा काटकर उसकी तह लगायी और अंगूरी के हाथ में देते हुए पूछा, "चाँदी का रुपया है या वह भी दूँ ?"

"मेरे पास तो नहीं है।" अंगूरी ने पहलादसिंह की ओर देखते हुए कहा, "तेरे पास हो तो दे दे।"

"मेरे पास कहाँ से आया ?" पहलादसिंह ने हाथ झटकते हुए कहा।

"मैं दूँ ?" दुनीचन्द ने पूछा।

"दे दे—एक देना।" पहलादसिंह ने कहा।

"मलका का चाहिये या देसी ? मलका का एक रुपया देसी साढ़े तीन रुपये के बराबर है।" दुनीचन्द ने कहा।

"तू देसी ही दे। हमें कौन-सा वर की झोली में डालना है।" पहलादसिंह ने हँसते हुए कहा।

"चौधरी, दान की चीज में खोट नहीं होना चाहिए। मलका का रुपया तेरी चौधरानी की तरह सुच्चा सै। दान में वही दे।" दुनीचन्द ने अंगूरी की ओर मुसकराकर देखा। उसने सन्दूकची में से एक पोटली निकाली और उसमें से एक रुपया छाँटा। उसे अँगूठे और साथवाली उँगली के सहारे ऊपर को उछालकर खनकाया और फिर उसे हाथ में सँभालते हुए दुनीचन्द बोला, "मलका का रुपया तो इब न्यामत होता जा रिहा से। नया देसी रुपया तो इसके सामने ठीकर है।"

दुनीचन्द ने रुपया पहलादसिंह के हाथ में थमा दिया। उसने अंगूरी की ओर बढ़ा दिया। अंगूरी ने रुपये को पल्लू में कसकर बाँध लिया।

अंगूरी के पीछे-पीछे पहलादसिंह और दुनीचन्द भी दुकान से बाहर आ गये। सरदार अभी तक दुनीचन्द की दुकान के सामने खड़ा था। अंगूरी ने चबूतरे से नीचे उतरते हुए सरदार के साइकिल के हैण्डल पर रखे रंग-बिरंगे कपड़ों की ओर देखा। वह एक पल के लिए ठिठकी, फिर घूँघट को नीचे खींचती हुई पहलादसिंह के कान में फुसफुसायी, "मन्दिर जाना है, मेरे साथ चलो।"

"तू काकू को साथ ले जा। मैं तेरे पीछे-पीछे आ रिहा हूँ।" पहलादसिंह ने कहा और सरदार को घेरे में लेकर खड़े लोगों में शामिल हो गया।

दुनीचन्द भीड़ को चीरता हुआ सरदार के साइकिल के सामने आ खड़ा हुआ और उसे समझाता हुआ बोला, "सरदारजी, क्यों अपना टैम बिगाड़ रहे हो ? यहाँ से जाओ। यहाँ तेरे कपड़े का कोई गाहक नहीं सै।"

"लालाजी, रिफ्यूजी आदमी हूँ। पाकिस्तान से लुट-लुटाकर आये हैं। गाँव में एक बार हाँक लगा लेने दो। कोई गाहक नहीं मिलेगा तो मेरी किस्मत।" सरदार ने नम्र स्वर में कहा।

"सरदारजी, तू गाँव के अन्दर नहीं जा सकता। चौधरियों के मुहल्लों में किसी गैर आदमी को जाने नहीं दिया जाता। आज तक किसी परदेसी ने इन गलियों में पाँव नहीं रखा।" दुनीचन्द ने दृढ़ स्वर में कहा।

"लालाजी, तुम तो मुझे ऐसे ही डाँट रहे हो जैसे मैं चोर-उचक्का या नौसरबाज हूँ।" सरदार ने आपत्ति की।

"चोर-उचक्कों के माथे पर ठप्पा नहीं लगा होता। आजकल बीसियों नौसरबाज रिफ्यूजी बनकर लोगों को लूटे हैं। अभी परसों का ही किस्सा है...।" दुनीचन्द ने आसपास खड़े लोगों पर नज़र डाली और बोला, "करोलबाग में मेरा एक सम्बन्धी रिफ्यूजियों के हाथों लुट गया। सुना था कि गरीबी और दुख आदमी को पागल बना दे सै। लेकिन इन रिफ्यूजियों का दिमाग तो बहुत तेजी से चले है। ऐसी कहानी घड़े हैं जैसे पाकिस्तान में जागीरें छोड़कर आये हैं।"

"लालाजी, असां तुमसे माँगकर नहीं खाते। लुच्चे-लफंगे सब जगह हैं। सारे रिफ्यूजी चोर-उचक्के या नौसरबाज नहीं हैं। जो लोग हिन्दुस्तान में रहते हैं वे भी सब देवता नहीं हैं। हम दूसरों की साधी नहीं देसाँ, अपने बारे में कह साँ कि हमने किसी माँ के खसम के आगे हाथ नहीं फैलाया।" सरदार ने अपनी बात को वज़नदार बनाने के लिए दो मोटी गालियाँ जोड़ दीं और आवेश में बोला, "लाला, हम तो कैम्प में भी नहीं रहे। मजदूरी की, सिर पर सब्जी का टोकरा उठाकर गली-गली घूमे। अब साइकल पर फेरी लगासाँ। लाला, तुझे बातें फुरती हैं क्योंकि तू अपने घर में बैठसाँ। तेरे घर पर हज़ार-हज़ार आदमी ने मिलकर हमला नहीं किया। तेरीं बहू-बेटियों को तीन कपड़ों में घर नहीं छोड़ना पड़ा। खून और आग का दरिया पार नहीं करना पड़ा। हम लुट-लुटाकर आये हैं इसीलिए तेरी नज़र में इज्ज़तदार नहीं साँ। तू हमें गाँव के अन्दर जाने से रोकसैं। लाला, वाहगुरू दी सौगन्ध खाकर कहसाँ कि मेरे वतन में मुझे कोई रोकता, मुझे ऐसी बातें कहता, तो मैं उसका खड़ा-खड़ा खून पी जाता।" सरदार की आँखों में क्रोध की चिनगारियाँ फूटने लगीं और वह साइकिल को स्टैण्ड से हटाता हुआ बोला, "तू मुझे दुत्कार सकता है लेकिन मेरा मुकद्दर नहीं छीन सकता है। मुझे दो टैम की रोटी वाहगुरू देसाँ, तू नहीं देसाँ।"

"सरदारजी, आप तो नराज़ हो गये। मैं कब कहता हूँ कि सारे रिफ्यूजी बदमाश हैं। लेकिन अपने-अपने गाँव का रिवाज है। हमारे इलाके में चौधरी किसी गैर आदमी को अपनी गलियों में दाखिल नहीं होने देते।" दुनीचन्द कुछ ढीला पड़ा।

"लाला, मैं इज्ज़तदार आदमी हूँ...बहू-बेटियोंवाला हूँ। अगर ज़माने ने हमें सड़कों पर ला फेंका है तो इसका यह मतलब नहीं कि हम बेग़ैरत हो गये साँ, चोर-डाकू बन गये साँ। मेहनत-मजदूरी करके रोटी कमासाँ, किसी के आगे

हाथ नहीं फैलाता, किसी की जेब नहीं काटता।" सरदार फिर आवेश में आ गया।

"सरदार, कोई झगड़ा थोड़े करना से। तुम्हें एक बार बोल दिया कि हमारे मुहल्लों में गैर आदमी नहीं आ सकता, झगड़ा क्यों कर रहे हो ?" पहलादसिंह ने दृढ़ स्वर में कहा।

जब वहाँ मौजूद और लोगों ने भी दुनीचन्द का समर्थन किया तो सरदार ढीला पड़ गया। उसने सब पर उचटती-सी नज़र डाली और खिन्न स्वर में बोला, "अच्छा, आप लोगों की मर्जी; आजादी तो आप लोगों के लिए आयी है...हमारे लिए तो बरबादी है।"

सरदार ने साइकिल मोड़ी और दुनीचन्द को चुनौती देता हुआ बोला, "लाला, फिर आऊँगा और इन गलियों में भी जाऊँगा। देखूँगा तू मुझे कैसे रोकता है ?"

सरदार ने गठरी को हिला-जुलाकर ठीक किया और बुदबुदाता हुआ गाँव से बाहर जानेवाले रास्ते की ओर बढ़ गया।

चार—

गाँव के पूर्व में दिल्ली की ओर जोरदार धमाका हुआ। कुछ क्षण उसकी प्रतिध्वनि चारों ओर दूर-दूर तक गूँजती रही। धमाका इतना जोरदार था कि सब लोगों के कलेजे उछलकर मुँह में आ गये। दरवाजे और खिड़कियाँ यूँ बज उठे जैसे एक जबरदस्त भूचाल आया हो। कच्ची छतों से मिट्टी के ढेर फर्श पर आ गिरे। पशु अपने खूँटों के इर्द-गिर्द हड़बड़ाकर घूमते हुए जोर-जोर से डकराने लगे। बिलों में छिपे चूहे ऊपर-नीचे दौड़ने लगे। परिन्दे अपने घोंसलों को छोड़ शोर मचाते हुए आकाश में उड़ गये। रेलवे लाइन के पार जंगल में गीदड़ भी गला फाड़कर हाऊ-हू कर रहे थे।

सब लोग भयभीत और घबराये हुए इधर-उधर झाँक रहे थे।

"केह् हुआ ?—" यही आवाज चारों ओर से सुनाई दे रही थी। दुनीचन्द की दुकान पर बहुत-से लोग इकट्ठे हो गये थे। दुनीचन्द का चेहरा पीला [illegible] वह आकाश की ओर देखता हुआ त्रस्त स्वर में बोला, "भगवान ही [illegible] आकाश फटा है या धरती। ऐसा जोरदार धमाका आज तक नहीं सुना [illegible]

"कहीं गोला बरसा है—" सूबेदार माड़ूसिंह ने सोचते हुए कहा, "लेकिन ऐसा ज़बरदस्त गोला तो लड़ाई में ही चलता है।"

"ऐसा धमाका आज तक नहीं सुना था। घरों के किवाड़ यूं हिल रहे थे जैसे सखत जाड़े में दाँत बजे सै !" ताऊ ने घबराये हुए कहा।

"मेरी गोद में काकू था। धमाका सुनकर वह यूं उछला जैसे गरम कड़ाही में चने के दाने उछलें हैं। इतना डर गया कि कितनी देर तक उसकी आवाज ही नहीं निकली।" पहलादसिंह चिन्तित स्वर में बोला।

धमाके के बारे में चर्चा जारी थी कि दुनीचन्द चीखकर बोला, "वह देखो !..." उसने पूर्व में आकाश की ओर संकेत करते हुए कहा जहाँ धूल और गर्द का बादल धीरे-धीरे ऊपर उठ रहा था। कुछ लोग दौड़कर छतों पर चले गये ताकि धूल के बादल को अच्छी तरह देख सकें।

दुनीचन्द की दुकान की छत पर खड़ा बंसीलाल वहीं से ऊँची आवाज़ में बोला, "ताऊ, शादीपुर, खामपुर गाँव से परे रतियावाले ऋशर की ओर बहुत धूल उड़ी है। आगे कुछ भी दिखाई नहीं देवे।"

"शायद मिल्टिरी ने कोई गोला छोड़ा हो। उधर आनन्द पर्वत पर कैम्प है। जहाँ पलटन होगी वहाँ एमूनीशन भी होगा। गोला-बारूद जरूर होगा।" सूबेदार माड़ूसिंह ने कहा। फिर वह चिन्तित स्वर में बोला, "अगर गोला-बारूद फटा है तो बहुत नुकसान हुआ होगा। बारूद तो पक्की बिल्डिंगों को भी भुस के माफिक उड़ा देता है।"

वे सहमे हुए-से सूबेदार माड़ूसिंह की ओर देखने लगे। वह कानों को छूता हुआ बोला, "बसरे-बगदाद के पास हमारे कैम्प में बारूद फटा था। अब भी याद आता है तो दिल काँप उठता है। हमारे पचास जवान मरे थे। उनके शरीर बोटियाँ बन गये थे, कीमा बन गये थे; और उनकी बैरकों की छतें आसमान में यूं उड़ी थीं जैसे आँधी में बालू और तिनके उड़ते हैं।"

सब लोग त्रस्त-से सूबेदार माड़ूसिंह की बातें सुन रहे थे कि एक बार फिर जोरदार धमाका हुआ। पशुओं और परिन्दों की काँ-काँ और डाँ-डाँ से वातावरण गूंज गया।

"यह क्या हो रहा है ?" ताऊ ने कुछ खिन्न और झुंझलाये स्वर में कहा।

"परमात्मा ही जाने ! ऐसा लगे है प्रलय आ रही है।" बंसीलाल ने काँपती हुई आवाज़ में कहा।

"पता लगाना चाहिए।" सूबेदार माड़ूसिंह ने चिन्तित स्वर में कहा।

"जब से मुल्क आजाद हुआ है नित नयी बातें होने लगी हैं।" दुनीचन्द उदास आवाज़ में बोला।

'चलो सड़क पर चलें। शायद कोई राहगीर बता सके कि धमाके कहाँ और

क्यों हो रहे हैं।" बंसीलाल ने सुझाव दिया।

वे सब गरदनें झुकाये नजफगढ़ रोड की ओर चल पड़े। गाँव से बाहर निकलते ही उन्हें पेड़ों के ऊपर मिट्टी और धुएँ का घना बादल आकाश की ओर उठता हुआ दिखाई दिया। वे सहमे-से उस बादल को देखते हुए सड़क पर आ गये और आँखों पर हाथों की छतरी बना और एड़ियाँ उठा-उठाकर अखोग की ओर देखने लगे।

सड़क वीरान थी। सिर्फ एक कुत्ता पूंछ उठाये और जीभ लटकाये सीधा भागा आ रहा था। कुत्ता नजदीक आ गया तो बंसीलाल शरारत-भरी मुसकान के साथ पहलादसिंह की ओर झुकता हुआ बोला, "पहलादसिंह, सुना है तू कुत्तों की बोली समझ लेता है। इससे पूछ कि ये धमाके कहाँ और क्यों हुए हैं?"

पहलादसिंह ने घूरकर बंसीलाल की ओर देखा। पेश्तर इसके कि वह कोई उत्तर दे, एक और धमाका हुआ। उनके पाँव के नीचे धरती काँप उठी। पेड़ों की सूखी टहनियाँ और पत्ते सड़क पर गिरने लगे।

"बेड़ा गर्क हो धमाका करनेवालों का—" दुनीचन्द ने खिन्न स्वर में कहा।

"वह देखो...!" बंसीलाल ने बड़ी तेज़ी के साथ सड़क पार करते हुए गीदड़ों की ओर संकेत करते हुए कहा।

"समझो उजड़ गयीं हमारी फसलें। गादड़ फसल खाते कम हैं बरबाद ज्यादा करे हैं।" ताऊ ने चेतावनी देते हुए कहा।

"एक दिन ढोल बजाकर हल्ला मारना पड़ेगा। गीदड़ खेतों में रहे तो बहुत नुकसान करेंगे।" सूबेदार माड़ूसिंह ने कहा।

"ताऊ, आज गादड़ आ रहे हैं तो कल चीता भी जरूर आयेगा। पता नहीं हम पर कौन-कौन-सी मुसीबतें आनेवाली हैं।" बंसीलाल ने गम्भीर स्वर में कहा।

सड़क पर एक साइकिल सवार को देख सब एकदम चुप हो गये। साइकिल सवार काफ़ी दूर था और बहुत धीमी गति से साइकिल चला रहा था। वे अनायास उसकी ओर बढ़ने लगे।

"साला, बैलगाड़ी की तरह साइकिल चलाये है। मेरे नीचे साइकिल होती तो इब तक नजफगढ़ को हाथ लगाकर लौट आता।" पहलादसिंह ने गुस्से से कहा।

पहलादसिंह की बात पर किसी ने टिप्पणी नहीं की। वह अपने-आप में ही बुदबुदाया कि अगर उसके पास साइकिल होती तो अभी तुरत खबर ले आता।

"मुखिया के पास है, उससे माँग लो।" ताऊ ने कहा।

"न ताऊ, वह कभी नहीं देगा। वह उसे नयी ब्याही बहू की तरह ढाँपकर रखता है...घुंघ चढ़ाकर...उसे कोई देख न ले। लोग तो जवान छोरी की भी इतनी देखभाल नहीं करें जितनी वह साइकिल की करे से।" पहलादसिंह ने तेज

स्वर में कहा और फिर जैसे एक निश्चयता के साथ बोला, "मेरे पास कभी पैसा हुआ तो बढ़िया साइकिल खरीदूंगा।"

साइकिल सवार नजदीक आ गया तो वे लोग सड़क रोककर खड़े हो गये। उन्हें देखकर साइकिल सवार भी रुक गया। वे सब के सब लपककर उसके पास पहुँच गये। बंसीलाल ने साइकिल का हैण्डल थामते हुए पूछा, "भाई जी, ये धमाके कैसे थे? आप सहर से आ रहे हैं?"

"जी, शहर से ही आ रहा हूं।" साइकिल सवार ने उत्तर दिया।

"उधर धमाके क्यों हुए?" ताऊ ने पूछा।

"धमाके सुने तो मैंने भी हैं। लेकिन यह पता नहीं कहाँ और क्यों हुए हैं। पक्का तो नहीं कह सकता, लेकिन मेरा अनुमान है कि रेल पटरी के पार हुए हैं। रेल की पटरी के साथ-साथ लाल झण्डियाँ लगी थीं। कहीं-कहीं पुलिस का पहरा भी था। उधर जाने की भी मनाही थी—काला पहाड़ की तरफ़।" साइकिल सवार ने बताया।

बार-बार और कुरेद-कुरेदकर पूछने पर भी साइकिल सवार अधिक न बता सका तो बंसीलाल साइकिल के हैण्डल से हाथ उठाता हुआ बोला, "क्यों उसका रास्ता खोटा कर रहे हो, जाने दो।"

साइकिल सवार के जाने के बाद वे सब कुछ देर वहाँ खड़े सूनी सड़क को घूरते रहे। आकाश में धूल के बादल फैलकर हलके हो चुके थे और सारे वातावरण में महीन धूल भर रही थी। ताऊ नथुने फुलाता हुआ बोला, "चलो यहाँ से, रुकने में कोई लाभ नहीं है।"

डरे और घबराये-से वे लोग धीरे-धीरे क़दम उठाते हुए गाँव की ओर आ गये। सब चुप थे जैसे किसी के पास भी कहने के लिए कुछ नहीं था।

वे धुनीचन्द की दुकान पर आ गये। वहाँ खड़े लोग धमाकों के बारे में पूछने लगे तो बंसीलाल हाथ झटकता हुआ बोला, "कुछ पता नहीं चला। एक सैकल सवार मिला था। वह भी कुछ नहीं बता सका।"

"ताऊ, पटवारी आया था। वह कह रहा था कि करोलबाग के मुसलमान पाकिस्तान जाने से पहले विलायती गोले जमीन में दबा गये थे। अब वे फट रहे हैं।" धुनीचन्द के पुत्र सुखदयाल ने, जो आठवीं कक्षा में पढ़ता था, उत्तेजित स्वर में कहा।

"कहाँ गया पटवारी?" बंसीलाल ने पूछा।

"चला गया। यहाँ से बाबाजी के जोहड़ की तरफ़ गया था।" सुखदयाल बोला।

"बिसवास नहीं आता, पटवारी की बात पर।" बंसीलाल ने कहा, "मुसलमानों के दबाये बम अब क्यों फटने लगे हैं?"

"पटवारी सरकारी अहलकार है। झूठ क्यों बोलेगा ?" ताऊ ने कहा।

"सरकारी अहलकार क्या झूठ नहीं बोलते ?" बसीलाल ने ताऊ को नमझाते हुए कहा। फिर बोला, "पटवारी तो हर वगत अल्लाम फरेब में। पिछले दिन आया तो एक और खबर सुना गया था—" बसीलाल ने कुछ क्षण चुप रहकर आँखें झपकायीं और बताया, "कह रहा था कि पण्डित जवाहरलाल ने एक अँगरेज लड़की से ब्याह कर लिया है। क्या नाम था उस लड़की का ?..." बसीलाल सोचता हुआ बोला, "उसने अखबार में मुझे तसवीर भी दिखाई थी जिसमें पण्डित जवाहरलाल छोरी के कन्धे पर हाथ रखे खड़ा था।"

"कोई जरूरी नहीं पटवारी ने झूठी खबर उड़ायी हो," ताऊ ने कहा, "दोनों बड़े आदमी हैं। राजे हैं। राजा राजे के घर में ही शादी करेगा।"

यह प्रसंग हँसी में खत्म हो गया तो दुनीचन्द गम्भीर हुआ, बोला, "करौल-बाग के मुसलमानों के पास बहुत गोला-बारूद था। पक्की रैफलें और पिस्तौलें थीं। विलायती बम भी जरूर होंगे।"

"पटवारी कौन-सा आँखों से देखकर आया होगा। तेरी-मेरी तरह उसने भी अनुमान लगाया होगा।" बंसीलाल ने उसकी बात काटते हुए कहा।

"विचार तो मेरा भी आज शहर जाने का था। सदर से सौदा लाना था। पर इब मैं कल ही जाऊँगा।" दुनीचन्द ने सोचते हुए कहा।

"दुनिया, आज ही चला जा। डरता क्यों है ? वहाँ कौन-सी गोली चल रही है ?" बसीलाल ने तीखी आवाज में कहा।

"पण्डितजी, डरने की बात नहीं है। मैं सवेरे से ही अनमना-सा हूँ। यह तो मुझे भी पता है वहाँ गोली नहीं चल रही। मैं तो उन दिनों भी शहर जाता रहा हूँ जब सचमुच गोली चलती थी। दिनदिहाड़े छुरा चलता था। जिस दिन करौल-बाग के बड़े डाक्टर को छुरा लगा था उस दिन भी मैं वहाँ गया हुआ था। सारे शहर में नमक-तेल और चाय की कमी थी लेकिन हमारे गाँव में नहीं थी। जिसने जो भी माँगा वह लाकर दिया।" दुनीचन्द ने एहसान जताते हुए कहा।

"छोड़ दुनिया, मुँह न खुलवा। तूने उन दिनों गाँव के लोगों को घड़ी-घड़ी करके लूटा था। दमड़ी की चीज का चवन्नी मोल लगाता था।" बसीलाल ने कहा।

उन दोनों के आपसी कटाक्ष पर आसपास खड़े लोग हँस रहे थे कि एक और जोरदार धमाका हुआ। दुनीचन्द की भैंस डर के मारे डकराती हुई रस्सा तुड़ाने लगी।

"मार दिया इन धमाकों ने। ढोर-डंगार की खैर नहीं। आज किसी को गाय-भैंस दूध नहीं देंगी।" ताऊ ने गाली देते हुए कहा।

सब लोग परेशान और हैरान-से इन धमाकों के बारे में एक बार फिर सोचने

लगे। पहलादसिंह वड़े रास्ते से दुनीचन्द की दुकान की ओर मुड़ते हुए साइकिल सवार सरदार को देखकर बोला, " दुनिया, उस दिन वाला सरदार आ रहा है। उसके पीछे कोई लुगाई भी है..."

दुनीचन्द, वंसीलाल, ताऊ, पहलादसिंह और अन्य लोग उत्सुकता से उनकी ओर देखने लगे। सरदार ने पहले की तरह कपड़े की गठरी साइकिल के कैरियर पर बाँधी हुई थी। हैण्डल पर मोटे कपड़े की धोतियाँ और छींट के थान रखे हुए थे। उसके पीछे-पीछे बिना घूंघट निकाले एक स्त्री आ रही थी। उसने सलवार-क़मीज़ पहन रखी थी और सिर को दुपट्टे से ढांपा हुआ था।

सरदार को देख दुनीचन्द के हाव-भाव बदलने लगे। पास आ गये दोनों तो ताऊ ने दुनीचन्द की ओर मुड़ते हुए पूछा, " यह कौन सरदार है ? इसको गाँव में क्या काम है ?"

"यह एक दिन यहाँ कपड़ा बेचने आया था। पर दुनिये ने उसे हमारे मुहल्ले में घुसने नहीं दिया था।" पहलादसिंह ने कहा।

ये सब आंखें फाड़-फाड़कर दिलचस्पी और ध्यान से सरदार और उसके संग आयी स्त्री को देखने लगे। सरदार ने उनके निकट आकर ऊँची आवाज़ में कहा, "सत सिरी अकाल जियो...चौधरीजो, राम-राम।" उसने सबकी ओर हाथ जोड़ दिये। फिर वह साइकिल को स्टैण्ड पर खड़ा करता हुआ अपने संगवाली स्त्री से बोला, "चिन्तिये, तुसाँ उधर के घड़े पर बैठ जाओ।"

वंसीलाल ने सरदार और उसके संग की स्त्री को ध्यान से देखा। फिर स्त्री की ओर संकेत करता हुआ बोला, "सरदारजी, इसको सामने घर में भेज दो। मर्दों के बीच में अकेली औरत का बैठना अच्छा नहीं लगता।"

"लालाजी, आप ठीक आख सो। हमारी औरतें भी परदेदार साँ, लेकिन पाकिस्तान बनने से सब खत्म हो गया! सारी मरजादा टूट गयी। ऊँचे घरों की सुवानियाँ (स्त्रियाँ) जो पीढ़ी और पलंग से नीचे पाँव न धर साँ, कहारिनों-महरियों पर हुक्म चला साँ, अब सिरों पर सब्ज़ी-तरकारी के टोकरे रखे गली-गली घुम दियाँ पैयाँ नें।" सरदार ने दयनीय भाव से कहा।

"सरदारजी, तुसीं शहर विच से आये हो?" वंसीलाल ने पंजाबी बोलने की कोशिश करते हुए पूछा।

"जी ओ। मैं पहाड़गंज रह साँ। सीधा वहीं से आ साँ।" सरदार ने नम्रता-पूर्वक उत्तर दिया।

"ये धमाके सुने आपने ?"

"हाँ जी, सुने हैं। करौलबाग से इधर पूसा-शादीपुर का रास्ता बन्द है। मैं किशनगंज-जखीरे के रास्ते आ साँ। सुन साँ कि सरकार शादीपुर गाँव के सामने पहाड़ियों को बारूद से उड़ाकर जमीन हमवार कर साँ। वहाँ पाकिस्तान से आये

रिफ्यूजियों के लिए सरकार मकान बना दे।" सरदार ने कहा और फिर दाढ़ी पर हाथ फेरता हुआ बोला, "लालाजी, सरकार लाख क्वार्टर बना दे लेकिन हम लोगों ने जो नुकसान उठाया है वह पूरा न हो सी। जो लोग उधर पाकिस्तान में महल-बाड़ियाँ छोड़ आये ने उन्हें सरकार टीन की छतोंवाले रिफ्यूजी दे रही ने।" सरदार की आवाज में गुस्सा था। फिर वह आकाश की ओर हाथ उठाता हुआ बोला, "चलो, अच्छा वक्त गुजर गया तो बुरा भी गुजर जा सी। वाह गुरू दी मेहर चाहिए।"

सरदार की आवाज में कुछ ऐसा दर्द था कि सब लोग चुप रह गये।

"लालाजी, दो घूंट पानी मिलेगा पीने के लिए?" सरदार ने कहा।

"जरूर।" बंसीलाल ने कहा और एक बच्चे को आवाज दी, "ओये छोरे, जा दौड़कर मेरे घर से लस्सी का बिलोना ले आ। उसमें नमक भी छोड़ना।"

लस्सी आ गयी तो सरदार ने चिन्तो को भी बुला लिया। दोनों ने लस्सी पी ली तो सरदार दाढ़ी में लगी हुई छाछ को साफ़ करता हुआ दुनीचन्द से बोला, "लालाजी, आपने मुझको तो चौधरियों के मुहल्ले में जाने से रोक दिया था, मेरी घरवाली तो जा सकती है न? इसपर तो रोक नहीं?"

दुनीचन्द खिसियाना-सा उसकी ओर देखने लगा। सरदार अपने पास खड़े लोगों की आँखों में आँखें डालकर देखता हुआ बोला, "एक दिन पहले मैं आया था तो लाला ने मुझे चौधरियों के मुहल्ले में जाने से मना कर दिया था।" फिर उसने दुनीचन्द की ओर देखते हुए कहा, "लालाजी, मैंने उस दिन भी कहा था, आज फिर कह सी कि बन्दा बन्दे का राजक नहीं है। जिस दिन यह हो गया तो समझो संसार खत्म। मेरी किस्मत में अगर किसी से लेना लिखा है वह कोई नहीं रोक सकता। वह हर होते मुझे मिल सी।"

गाँव के लोग सरदार को दिलचस्पी और हैरानी से देख रहे थे। उन्हें यह बहुत अजीब महसूस हो रहा था कि सरदार की पत्नी कपड़ा बेचेगी। उनका यह अनुभव तो था कि गाँव की स्त्रियाँ पशुओं के पानी-सानी का काम करती हैं। खेतों में हलवाहों के लिए रोटी ले जाती हैं। साग तोड़ती और कपास चुनती हैं। खेतों के और कामों में हाथ बटाती हैं। मगर यह समझ में नहीं आ रहा था कि औरत वणिज-व्यापार कैसे कर सकती है।

ताऊ ने जब सरदार की पत्नी को चौधरियों के मुहल्ले में जाने की आज्ञा दे दी तो दुनीचन्द बुदबुदाने लगा। सरदार ने रंग-बिरंगे लहँगे, दुपट्टे और छींट के कुछ थान एक कपड़े में बाँधकर गठरी बना दी। कुछ ओढ़ रंग के लहँगे नमूने के तौर पर उसके कन्धे पर रख दिये। वह गली की ओर जाने लगी तो सरदार गोपनीय स्वर में बोला, "दाम मालूम हैं न?"

अचिन्तकौर ने हाँ में सिर हिलाया तो वह साइकिल को थामता हुआ बोला,

"मैं गाँव के गोरे (बाहरी हिस्से) का चक्कर मार साँ। कपड़ा और चाहिए या कुछ पूछना हो तो यहीं आ जाना। मैं यहीं मिलूँ साँ।"

अचिन्तकौर चली गयी तो सरदार अपना सामान सँभालकर आगे बढ़ने लगा। ताऊ और बंसीलाल उसे रोकते हुए बोले, "सरदारजी, क्या बेच रहे हो, हम भी देखें ?"

"लो जी, बादशाहो, आप जैसे चौधरियों और लालों के लायक मेरे पास बहुत उमदा माल है।" सरदार ने साइकिल से गठरी उतार ली लेकिन उसे फिर से कैरियर के पीछे रखता हुआ बोला, "मैं लाला की दुकानदारी खराब नहीं करना चाहता।" उसने दुनीचन्द की ओर संकेत करते हुए कहा, "परे चलते हैं।"

"कोई फर्क नहीं पड़ता। तुम यहीं बैठ जाओ।" ताऊ ने कहा।

सरदार ने सामनेवाले मकान के चबूतरे के साथ साइकिल खड़ी कर दी और कैरियर से गठरी उतार ली। उसके नीचे एक चादर थी। उसकी तहें खोलकर सरदार ने उसे चबूतरे पर बिछा दिया और फिर उसके ऊपर उतनी ही लम्बी पर कुछ कम चौड़ी एक और चादर फैला दी और सबको बैठने का संकेत किया।

सरदार ने वाहगुरू का स्मरण करते हुए गठरी खोली और मोटी धोतियों, बारीक मलमल की किनारीदार धोतियों और पगड़ियों की तहें खोल-खोलकर दिखाने लगा।

"कपड़ा तो घना से।" ताऊ ने मलमल की धोती को मसलते हुए कहा।

"चौधरीजी, दिल्ली बाजार में जाकर खरीदसो तो यही धोती पाँच रुपये में मिल साँ। लेकिन मैं सवा चार रुपये में बेच साँ। बस इतना मुनाफा ले साँ कि दो टैम की दाल-रोटी चल जाये। हमें ज्यादा का लालच भी नहीं है। पहले जो जान मार-मारकर कमाई करके महल-बाड़ियाँ बनायी थीं वे नहीं रहीं तो अब लालच क्यों करें ?"

"सरदारजी, सवा चार तो ज्यादा है।" बंसीलाल ने कहा।

"लालाजी, इससे सस्ती तो तभी होगी जब मुफ्त में मिल जाये। मैं वाहगुरू की सौंह खाकर कहना पया ने सवा चार रुपये में बेचने में मुझे सिर्फ एक चवन्नी मिल सी। सस्ती चाहिए तो मोटी मारकीन की ले लो। सिर्फ सवा दो रुपये में मिल जा सी।" सरदार ने मोटे कपड़े की धोती बंसीलाल की ओर फेंकते हुए कहा।

"सरदारजी, ठीक-ठीक बोलो क्या लगाना है मलमल की धोती का ?" ताऊ ने आग्रह करते हुए पूछा।

"बादशाहो, मैंने तो ठीक दाम बता दिया है। आगे आप मालिक हैं।"

ताऊ ने बंसीलाल के कान में फुसफुसाते हुए कहा, "अपना दुनीचन्द ऐसी धोती साढ़े पांच से कम में नहीं देता। उधार लो तो चार-आठ आने और भी लगाये है।

मैंने दो महीने हुए इससे ऐसी ही धोती सवा पांच में ली थी।"

"दुनिये को बुलाते हैं। उससे पूछते हैं।" बंसीलाल ने कहा। फिर दुनीचन्द को आवाज़ दी।

दुनीचन्द उनके पास आकर रुखाई से बोला, "केहू ने ? जल्दी बोलो..."

"इस धोती का दाम क्या होना चाहिए ?" बंसीलाल ने धोती दिखाते हुए पूछा।

दुनीचन्द ने धोती को मसलकर देखा और मुंह बिचकाकर परे फेंकता हुआ बोला, "क्या दाम बताये से सरदार ?"

"सवा चार रुपये।"

"सवा चार रुपये !" दुनीचन्द का मुंह खुले का खुला रह गया। वह धोती को उठाकर एक बार फिर फेंकता हुआ बोला, "ठीक ही है। न सस्ती है न महंगी।"

"दुनिया, तूने बिलकुल ऐसी ही धोती मुझे तो लिहाज जताकर सवा पांच रुपये में दी थी।" ताऊ ने उत्तेजित स्वर में कहा।

"माल-माल का फरक होता है। वह धोती सिक्केबन्द माल था। उसके ऊपर मिल की मुहर लगी हुई थी।" दुनीचन्द ने भी उत्तेजित स्वर में उत्तर दिया।

"लालाजी, यह माल भी सिक्केबन्द है। इसमें भी गज-गज पर मिल की मुहर लगी हुई है।" सरदार ने झट से धोती की सब तहें खोल दीं और मिल की मुहर दुनीचन्द को दिखाता हुआ बोला, "लालाजी, ध्यान से पढ़ लो।"

दुनीचन्द ने सरसरी नज़र से मिल की मुहर देखी और नाक चढ़ाता हुआ बोला, "चोरी का माल होगा। इसीलिए सरदार कौड़ियों के मोल लुटा रहा है। इन धोतियों की थोक कीमत भी सवा चार रुपये से ज्यादा बनते हैं। चोरी का माल और लाठियों के गज ! जो घाटा सो घाटा !" ताना मारता हुआ दुनीचन्द हँसा।

"लालाजी, बोलो कितनी धोतियां चाहिए चार रुपये के हिसाब से। सौ, दो सौ, पांच सौ। हज़ार, दो हज़ार। न दे सकूं तो अपने पेशाब से मेरा मुंह धोना।" सरदार ने चुनौती देते हुए कहा। फिर गम्भीर स्वर में बोला, "मालिको, आप सोचो हम किसके लिए पाप कमा लें ? पता नहीं किस जन्म के पापों का फल मिलया ने कि अपना घर-बार, दोस्त-मित्र, रिश्तेदार, वतन सब छोड़ना पड़ा और लुटकर गिरते-पड़ते यहां पहुंचे हैं—तुम्हारी ये बातें सुनने, लाला !"

"तो फिर पुराना माल होगा। पहली धुलाई में ही मलमल छिदरी हो जायेगी।" दुनीचन्द ने ढीले पड़ते हुए कहा।

वे अभी इसी बहस में उलझे हुए थे कि मुखिया की पत्नी दो घाघरे उठाये आयी और बड़े तल्ख़ स्वर में बोली, "सुन रे दुनिया, तू दोनों हाथों से क्यों लूटे है। इस घाघरे का तूने सात रुपये मोल लगाया था !" उसने दुनीचन्द से खरीदा हुआ घाघरा आगे बढ़ाते हुए कहा और फिर उसे दूसरा घाघरा दिखाती हुई

बोली, "गली में एक पंजाबन कपड़ा बेच रही है। वह इस घाघरा के साढ़े पाँच रुपये माँगे से। इब उसने पाँच रुपये में ही दे दिया है।"

"चौधरानी, कपड़े-कपड़े का फरक होता है। जो घाघरा मुझसे ले गयी थीं उसका कपड़ा मजबूत है।" दुनीचन्द ने समझाते हुए कहा।

"उसमें लोहे की तारें लगी है क्या ?" चौधरानी ने भड़कते हुए पूछा।

"लोहे की तारें तो नहीं हैं। कपड़ा अच्छा है। साल-भर न चले तो दाम वापस ले लेना।" दुनीचन्द ने उसे टालने के लिए कहा।

"तू कैसे कहे है कपड़ा अच्छा है ? दोनों घाघरों का कपड़ा एक-सा है। रंग से रंग मिले से, बूटी से बूटी मिले से।" मुखिया की पत्नी ने क्रुद्ध स्वर में कहा।

"चौधरानी, इब मैं तुम्हें कैसे समझाऊँ कि दोनों घाघरों में बहुत फरक है।"

"दुनिया, तू मानता क्यों नहीं कि दाम ज्यादा लगावे है। औरत जात से बहस करते तुझे शरम नहीं आती ?" ताऊ गुस्से से बोला।

"अच्छा, चौधरी, तुम जीते और मैं हारा।" दुनीचन्द ने हाथ जोड़ दिये। फिर अफ़सोस-भरी आवाज़ में बोला, "आप लोगों को कैसे समझाऊँ कि अव्वल तो कपड़े में बहुत फरक है। दूसरे परमात्मा जाने चोरी का माल है या लूटपाट का। पंजाबियों ने आते ही मुसलमानों के मकान और दुकानें लूट ली हैं।...यह मेरी गुरगाबी देखो—" दुनीचन्द ने पाँव आगे बढ़ाते हुए कहा, "विलायती माल है, फलैक्स का ! छह रुपये में लाया हूँ। दुकान पर लेने जाओ तो पन्द्रह से कम में नहीं मिले से। मैंने चाँदनीचौक में पटरी पर बैठे एक पंजाबी से खरीदी थी। मैं मोल-तोल करता तो शायद चार रुपये में ही दे देता।...चौधरीजी, पंजाबियों के माल का कोई मोल नहीं। यह कोई दुकानदारी है, व्यापार है ? सीधी ठगी है !"

दुनीचन्द की बातें सरदार बहुत शान्ति से सुन रहा था। वह ताऊ, बंसीलाल और अन्य लोगों को सम्बोधित करता हुआ बोला, "चौधरीजी, आप इस बहस को छोड़ें। हम लुटपुटकर और बरबाद होकर आये हैं। हमारा कोई घर-घाट नहीं। हमारा कोई खानदान नहीं, क्योंकि हम रिफ्यूजी हैं। जितने मुँह उतनी बातें हैं। हमारा किसी से कोई झगड़ा नहीं। हम चोरी की रोटी खाते हैं या साधी की, ये हमारा वाहगुरू जानता है। हम उसके दरबार में सच्चे हैं। बाकी किसी की हमें परवाह नहीं।...आप धोती पसन्द करो। दो आने चार रुपये लगा लूंगा। इससे कम नहीं। एक धोती के पीछे दवन्नी तो कमाने दो।"

ताऊ और बंसीलाल ने एक-एक धोती ख़रीद ली तो गाँव के और लोग भी कपड़े देखने लगे। पहलादसिंह धोतियों और रंग-बिरंगे लहंगों को बड़ी दिलचस्पी से देख रहा था। वह बहुत शौक़ से धोती, कुरते का कपड़ा और लहँगा उठाता। फिर हसरत-भरी नज़रों से उन्हें देखता हुआ रख देता।

सरदार उठकर खड़ा हो गया और एक हाथ में खुली धोती और दूसरे हाथ

में शोख़ रंग का लहँगा फैलाकर ऊँची आवाज़ में पुकारने लगा, "ले लो, सस्ता अते सोहना माल। दूध जैसी सफेद और रेशम जैसी मुलायम मलमल की धोतियाँ और सतरंगी पींग जैसे घाघरे। रंग-बिरंगी छींटें। कमीज़-कुरते के लिए पक्के अते सुन्दर कपड़े...!"

ताऊ, बंसीलाल और अन्य लोग वहाँ से चले गये परन्तु पहलादसिंह खड़ा रहा। वह सोच रहा था कि उसके पास भी नकद पैसे होते तो वह अपने लिए एक बारीक मलमल की धोती, अंगूरी के लिए रंग-बिरंगा लहँगा और काकू के लिए छींट का कुरता खरीद लेता।

सरदार लहक-लहककर आवाज़ दे रहा था कि उसकी पत्नी अचिन्त कौर आ गयी। उसे देखते ही वह चुप हो गया और उसे खाली हाथ देखकर बोला, "विक गया सारा माल ?"

"नहीं सारा तो नहीं विका। मैं यह पूछने आयी हूँ कि कई औरतें कपड़ा खरीदना चाह रहीं लेकिन उनके पास नकद रकम नहीं है। उधार माँग रहीं।"

सरदार सोच में पड़ गया। फिर उसे समझाता हुआ बोला, "हमारा फेरी का काम है। बाद में इधर आना हो या न हो, किञ्ज कह सकें। मेरे ख्याल में उधार की रीत अभी न ही डालो। पैसा नहीं तो अनाज, गुड़-शक्कर, घी जो मिलता है ले लो। ये चीज़ें तो इनके पास होंगी। शहर में ले जाकर बेच सकें। नकद पैसे खरे कर सकें।"

"किञ्ज लै जा सकें ?" अचिन्त कौर ने पूछा।

"इसकी तू फिकर न कर। यह मेरा काम है। इतना ख्याल रखना कि हाथ आया गाहक खाली न जाये।" सरदार ने समझाया और उसके जाने के बाद एक बार फिर लहक-लहककर आवाज़ें देने लगा।

सरदार और अचिन्त कौर की बातचीत सुनकर पहलादसिंह की बाछें खिल गयीं। वह अपने घर की ओर दौड़ गया और अपनी पत्नी अंगूरी को बेतहाशा आवाज़ें देने लगा। वह अन्य स्त्रियों के साथ अचिन्त कौर के फैलाये हुए लहँगों-धोतियों और छींटों पर झुकी हुई थी। अपने पति की आवाज़ सुनकर वह दौड़ी हुई आयी और उत्तेजित स्वर में बोली, "एक पंजाबन कपड़े बेच रही है। बहुत सुन्दर और सस्ते हैं..." और फिर वह एकदम उदास हो गयी और निराशा-भरे स्वर में कहने लगी, "मेरे पास पैसे होते तो एक जोड़ा अपने लिए और एक जोड़ा तेरे लिए ज़रूर खरीदती।"

"तू यह बता कोठरी में नाज कितना है ? एक मन गेहूँ देकर एक लहँगा और धोती मिल जायेगी।"

"गेहूँ दे दिया तो खायेंगे क्या ? अभी नयी फसल आने में तीन महीने हैं।"

"बण्या से ले लेंगे।" पहले भी तो कई बार लिया है।"

"लाला एक मन देकर डेढ़ मन लेता है।...नाज दे दिया तो भूखे मरेंगे। भूखे तन पर सुन्दर से सुन्दर कपड़ा भी अच्छा नहीं लग से।" अंगूरी ने दृढ़ स्वर में कहा।

"अभी नाज देकर कपड़ा ले लें। बाद में किसी न किसी से नाज उधार ले लेंगे।" पहलादसिंह ने समझाते हुए कहा।

"नहीं-नहीं, मैं ऐसा नहीं करने दूँगी। हम कोई नंगे तो फिर नहीं रहे। तेरे पास दो धोतियाँ हैं। मेरे पास भी दो घाघरे हैं।"

"बाहर आने-जाने के लिए मलमल की धोती नहीं है।" पहलादसिंह ने कहा।

"तैं कौन-सा कचहरी-दरबार में जाना है!" अंगूरी व्यंग्य-भरे स्वर में बोली।

पहलादसिंह को अपने ऊपर और अंगूरी पर गुस्सा आने लगा। निराशा और झल्लाहट में हाथ मलता हुआ वह सोच में डूब गया। फिर एकाएक उसकी आँखों में चमक आयी और वह खुश होता बोला, "मैं लूंगा धोती और लहँगा। मैं सरदार से बात करता हूँ। शायद वह मुर्ग़ियाँ लेकर कपड़ा दे दे।"

"क्यों बेचते हो मुर्ग़ियाँ? और महीने-डेढ़ महीने बाद अण्डे देने लगेंगी।"

"इब तू चुप रह।" पहलादसिंह धोती का एक पल्लू हाथ में थामे बाहर को भागा। सरदार ने उसके प्रस्ताव पर विचार किया और मुर्ग़े-मुर्ग़ियों का पूरा ब्यौरा लेकर बोला, "अच्छा चौधरी, ले आ छह मुर्ग़ियाँ। तुम्हें निराश नहीं करूंगा।"

आधा दिन गुज़रने से पहले ही सरदार और अचिन्त कौर ने अपना बहुत-सा माल बेच दिया। सरदार के पास नक़द पैसों के अतिरिक्त डेढ़ मन नाज, दस सेर शक्कर और छह मुर्ग़ियाँ थीं। उसने अपना सामान गठरी में समेटकर कैरियर के पीछे बाँध लिया। नाज और शक्कर की गठरी को फ्रेम में फँसाकर दोनों पैडलों के ऊपर टिका दिया। गाँव के बच्चे, कुछ मर्द और स्त्रियाँ इस क्रिया को दिलचस्पी से देख रहे थे।

सरदार ने जाने से पहले लाला दुनीचन्द को फतेह बुलायी और नम्र स्वर में बोला, "लालाजी, कोई ऊँची-नीची बात मेरे से कही गयी हो तो माफी देना।"

दुनीचन्द ने घृणा से मुँह दूसरी ओर फेर लिया।

जब सरदार और अचिन्त कौर कुछ दूर चले गये तो दुनीचन्द ने चेतावनी देते हुए कहा, "आज पंजाबी मुहल्ले में घूम गया है। चोरी का सौदा माल सस्ता दे गया से। इब रोज आयेगा। औरों को भी राह बतायेगा। पंजाबी को एक बार मुँह लगा ले तो वह तुरत पेट में उतर जावे से। मेरी बात याद रखना, आज तुमने पंजाबी की औरत की बेशर्मी देखी है। कल तुम्हारी औरतें भी यही कुछ करेंगी। हाट-बाट लगायेंगी और...।" दुनीचन्द के मुँह से झाग बहने लगा।

आसपास खड़े लोगों ने दुनीचन्द की भविष्यवाणी को हँसी में उड़ा दिया तो वह गली में थूककर दुकान के अन्दर चला गया।

पाँच—

अतरसिंह साइकिल को घसीटता हुआ आगे-आगे चल रहा था। अचिन्त कौर साइकिल के कैरियर पर बँधे सामान को पकड़े पीछे-पीछे आ रही थी। नजफगढ़ रोड पर आकर वे घनी छाँववाले पेड़ के नीचे रुक गये। अतरसिंह ने साइकिल पेड़ के तने के साथ टिकाकर खड़ी कर दी और अचिन्त कौर की ओर देखता हुआ बोला, "मैं आख सां तुसी थक गये सो। थोड़ी देर छाँव में बैठने ले।"

अतरसिंह पेड़ के तने का सहारा लेकर बैठ गया। उसने सिर से पगड़ी उतारकर साइकिल की काठी पर रख दी और बाल खुजाता हुआ सोच में डूब गया।

अचिन्त कौर उससे कुछ हटकर बैठी उसे ध्यान से देखती रही। फिर नम्र स्वर में पूछा, "कँह सोचने पँये ओ?"

अतरसिंह ने हड़बड़ाकर अचिन्त कौर की ओर देखा और एक बार फिर बाल खुजा और दाढ़ी पर हाथ फेरकर बोला, "करमावालयो, मैं सोचना कि सारा समान सैकल ते लद के खड़ना बहुऊँ मुश्किल ए। तुसीं लारी विच जाओ। अनाज दी बोरी ते बक्कर दी गँठली नाल लय जाओ। बाकी समान मैं सैकल ते लय आ सी।"

अतरसिंह कुछ पल ध्यान से उसकी ओर देखता रहा। अपने सुझाव का कोई उत्तर न पाकर उसने पूछा, "कँह सोचनी ए? मेरी गल ते भी गौर कर?"

"सोचनी आँ इजँ ही ठीक रहू सी।" अचिन्त कौर ने कहा।

वे फिर अपने-अपने विचारों में डूब गये। कुछ देर के बाद अचिन्त कौर ने पूछा, "लारी केहड़े वेले आ सी?"

"करमावालयो कँह आखाँ। कोई टैम ना।" अतरसिंह ने सूरज की ओर देखकर कहा, "पर औंदी-जान्दी रहँदी ए। दोपहर तोकर जरूर आ जा सी।"

अचिन्त कौर ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह सिर झुकाये बैठी दोनों हाथों से पिण्डलियाँ दबाने लगी। अतरसिंह उसकी ओर ध्यान से देखता रहा। फिर कुछ चिन्तित स्वर में पूछा, "करमावालयो, कँह गल ए। थक गये ओ? मैं घुट दवाँ?"

"तरकी न। कँह ध्याडी मत मारी गयी ए।" अचिन्त कौर ने उसकी ओर

तीखी निगाह से देखते हुए तीखी आवाज में कहा।

अतरसिंह चुप हो गया। उसने पेड़ के तने से पीठ टिकाकर आँखें
कर लीं तो अचिन्त कौर भी दुपट्टा जमीन पर बिछाकर लेट गयी और बो
"तक्को नाँ।"

अतरसिंह ने आँखें खोल दीं तो उसने कहा, "लारी आये ताँ दस देना।
अचिन्त कौर ने दुपट्टे का एक किनारा सिर पर ले लिया।

अतरसिंह कुछ समय तक ऊँघता रहा। फिर सचेत होकर बैठ गया। उ
कमीज की झोली फैला दी। जेबों से सब रुपये-पैसे निकालकर झोली में
दिये। पहले नोटों को इकट्ठा किया। उनकी दस-दस, पाँच-पाँच और एक-
की अलग-अलग गड्डियाँ बनायीं और तीन बार गिनकर जेब में रख लि
फिर उसने सिक्कों को भी अलग-अलग छाँटकर एक-एक रुपये की ढेरियाँ बन
और उन्हें गिना। उसके बाद नाज-शक्कर और मुर्गियों आदि का हिसाब लगा
कई बार हिसाब जोड़ने के बाद उसने अचिन्त कौर की ओर देखते हुए क
"तक्को नाँ...मैं आखनाँ।"

अचिन्त कौर ने चौंककर उसकी ओर देखा और तीखी आवाज में पूछा, "
आखने ओ?"

"तक्को नाँ, हिसाब ठीक नहीं बैठना पया ए।"

"सौंह वाहगुरु दी, मेरे पास कुझ नहीं।" अचिन्त कौर ने दोनों हाथ झट
हुए कहा।

"करमावालयो, अपनी बोझा तक्को न। हथ मार वेखो मताँ कोई अ
दवान्नी, चवान्नी, अठान्नी अन्दर फसी पयी होवे।" अतरसिंह ने आग्रह क
हुए कहा।

"नाँ, बोझा मैं तक बैठी आ। कुझ नहीं।" अचिन्त कौर ने जेब को बा
उलटकर दिखाते हुए कहा।

"मताँ रुमाल विच कोई रुपया-पैसा होवे।"

"न...तुसाँ आप वेख लो।" अचिन्त कौर ने जेब से रूमाल निकाला
उसके सिरे में बँधे रुपये को मुट्ठी में दबाकर रूमाल हिला दिया, "तक्को
बिल्कुल खाली ए।"

"अच्छा...!" अतरसिंह ने होंठ बिचकाकर मायूसी से हाथ हिला दि
और सोचने लगा।

अचिन्त कौर रूमाल को सलवार के नेफ़े में खोंसकर फिर लेट ग
अतरसिंह ने सब नोट एक थैली में डालकर अपनी फतूही की भीतरी जेब में
लिये और रेजगारी दूसरी थैली में करके दूसरी जेब में। फिर वह तने से
टिकाये टाँगें पसारकर बैठ गया।

अचिन्त कौर को नींद आ गयी और वह हलके-हलके खर्राटे लेने लगी। उसके जम्पर का पल्लू ऊपर उठ गया था और नेफे में खोंसे हुए रूमाल में बँधा रुपया अपनी पूरी गोलाई में नजर आ रहा था। अतरसिंह मूँछों में मुसकरा दिया और बुदबुदाने लगा कि करमांवाली की यह पुरानी आदत है। आना-दुअन्नी भी हाथ लगे तो उसमें से भी धेला-दमड़ी जरूर बचा लेनी थी। यह सोचकर वह गद्गद हो उठा कि अचिन्त कौर की इसी आदत की बदौलत आज वे अपने पाँव पर खड़े हो रहे हैं। जिस तरह लुट-पुटकर घर से निकले थे, पाँव जमाने में कई साल लग जाते। इसी की बचत से यह छोटा-मोटा काम शुरू किया जा सका है।

अतरसिंह उसे स्नेह से निहारता रहा। उसे महसूस हुआ कि उसके चेहरे की सफेदी अब सिर के बालों में झलकने लगी है और चेहरे का रंग तांबे जैसा हो रहा है। आँखों के नीचे काले गड्ढे बन गये हैं और शरीर भी पहले से कुछ दुबला गया है। अतरसिंह को यह देखकर दुःख हुआ और वह मन ही मन कहने लगा कि जब यह ब्याही आयी थी तो इसका दूध जैसा गोरा रंग था और गुलाब जैसी सुर्खी थी। लड़की मुटियार बिलकुल काबुल-कन्धार की पठानी लगती थी।

सोच में डूबे-डूबे अतरसिंह ऊँघने लगा। दूर मोटर की पूँ-पूँ सुनकर वह हड़बड़ाकर उठा और सड़क के बीचों-बीच खड़ा होकर दोनों ओर दूर-दूर तक देखने लगा। जहाँ तक सड़क नज़र आती थी, कहीं कोई मोटर दिखाई नहीं दे रही थी। दूर नजफगढ़ की ओर से एक साइकिल सवार जरूर आ रहा था। 'मेरे मन बज्जे हो सन'—वह बुदबुदाया और फिर तने से पीठ टिकाये टाँगें पसारकर बैठ गया।

जब साइकिल सवार काफी नजदीक आ गया तो अतरसिंह उसकी ओर देखने लगा। साइकिल सवार उसके पास आकर साइकिल से उतर गया तो अतरसिंह घबराया। उसने जल्दी से पगड़ी सिर पर रखी और बोला, "करमांवा-लयो, तक्को ना।"

अचिन्त कौर भी उठ गयी और लाल-लाल आँखों से अतरसिंह की ओर देखने लगी। साइकिल सवार को देखते ही वह एक ही झटके में उठी, दुपट्टा झाड़कर सिर पर लिया और जम्पर का अगला हिस्सा ठीक करके एक ओर को हो गयी।

साइकिल सवार कोई छह फुट ऊँचा था। उसने चौड़े घेरेवाली सलवार, घुटनों तक लम्बी कमीज और सिर पर पगड़ी लपेटी हुई थी। उसके कपड़े मैले थे और उनपर कहीं-कहीं काले-चिकने धब्बे पड़े हुए थे। दाढ़ी बढ़ी हुई थी। अतरसिंह की ओर साइकिल मोड़ते हुए उसने कुछ ऊँची आवाज में कहा, "सरदारजी, सत सिरी अकाल!"

"सत सिरी अकाल जियो...सत सिरी अकाल!" अतरसिंह ने नम्र स्वर में

उत्तर दिया और जल्दी से फतूही की दोनों जेबों को टटोला।

नवागन्तुक उसके नज़दीक आकर रुक गया और अतरसिंह के हुलिये और साइकिल पर रखी कपड़ों की गठरी और दूसरी चीज़ों को देखता हुआ बोला, "रिफ़ूजी जाप दे ओ ?"

"सच आखने ओ...बिल्कुल रिफ़ूजी आँ...।" अतरसिंह ने कहा। फिर निराश स्वर में बोला, "हिन्दुस्तानी हुन्नै तो सिखर दोपहरे बाहर सड़क ते खज्जल ख्वार क्यों पये हुन्ने।"

अतरसिंह ने ध्यान से नवागन्तुक की ओर देखा, "तुसाँ भी रिफ़ूजी ओ ?"

"हाँ साईं।" उसने साइकिल को अपने कूल्हे के सहारे खड़ा करते हुए कहा।

"पिच्छों कित्थे ने ओ ?" अतरसिंह ने पूछा।

"गरीबख़ाना डेरा ग़ाज़ीखाँ विच हाईं। तुसीं तौंसा दा नाम ज़रूर सुनया होसी। तहसील है।"

"हाँ-हाँ...सुनया ए, ज़रूर सुनया ए।" अतरसिंह ने गर्मजोशी से उत्तर दिया।

"उत्थाईं मेरा ग़रीबख़ाना हाईं।" नवागन्तुक ने बताया। फिर पूछा, "साईं, आप जी दा दौलतख़ाना कुत्थाँ हाईं ?"

"असाँ दा ग़रीबख़ाना ख़ास पिण्डी सी।" अतरसिंह ने पिण्डी पर विशेष ज़ोर देकर कहा।

"मैं वी गुचेना पयाँ के तुसाँ पुठोहारी हो।" नवागन्तुक ने ख़ुश होते हुए कहा।

"शाह जियो, कैंह पुछने ओ केही बोली ते केहा मुलख। मुलख छुट गया ने...बोली भी छुट जा सी...हुन सब हिन्दुस्तानी ने।" अतरसिंह ने पीड़ा-भरे स्वर में कहा।

"साईं उत्थाँ त्वाडा क्या कारोबार हाईं ?"

"शाह जियो, कैंह पुछने ओ।" अतरसिंह ने एक गहरी साँस छोड़ते हुए उसी स्वर में कहना शुरू किया, "हुन ताँ दसनयाँ शर्म पयी औंदी स...पिण्डी छौनी, सदर बजार विच कपड़े दी वड्डी दुकान सी...चाये पये फ़ौज दे अफ़सर...कर-नैल ते जरनैल...चाये पये गोरे सी या देसी ते कैंह सिविल दे अफ़सर...सब कपड़ा लैण वास्ते साडी दुकान ते आने सन।" कहते-कहते अतरसिंह की आँखें भीग आयीं—"हर वेले लख-सवा लख दा माल दुकान अन्दर पया हुन्ना सी... भरी-भराई दुकान छोड़के आ गये साँ। गज़ तक न चुक (उठा) सके ! पिण्डी शहर विच तिन मंज़िला मकान सी। इक निकूणी सुई ताईं न चुक सके। तिन कपड़या विच निकल आये।" अतरसिंह ने आँखें पोंछी—"वाहगुरु दा शुक्र है जान्ना बच गइयाँ ने !"

नवागन्तुक अनुमोदन में सिर हिलाता रहा। फिर अतरसिंह की ओर देखता हुआ बोला, "सब दी हिक्को जई विस्ता गई...लोकों विच साडे दो दुकानां हाईं, हिक कचहरी विच ते हिक वडे बाजार विच। रोज दुध-मिठाई दी विक्री दा रुपया दू-ढाई सौ बिन थाई...साह बारह हजार रुपये दे ते कड़ाहे...आलटियाँ-माल दी दौलत...शहर विच दो हवेलियाँ हाईं...सब कुछ छोड़-छाड़ के नंगे सिर तां नंगे पैर निकल गई। सुई वी नयी लिन हाई।"

अपने-अपने दुखों की याद हो आने पर दोनों के सिर नीचे को झुक गये और देर तक वे अपने में डूबे रहे। नवागन्तुक ने अतरसिंह की ओर देखा और उसका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के लिए ऊँची आवाज में पूछा, "साईं, तुस्सां केह धन्धा करेंदे पेओ ?"

"फेरा लाने पये ने।" अतरसिंह ने साईकिल की ओर इशारा करते हुए जवाब दिया।

"इत्थाईं तुसी हाली तक दुकान क्यों न बनायी ?"

"दुकान तां अजे मिलनी नहीं पई ए। चाँदनी चौक विच इक कपड़े दी दुकान दे सामने पटरी ते मेरा वडा भरा बैठ सी। उन्हां तों थोक कपड़ा लै के परचून वेचनाए।" अतरसिंह ने बताया।

"साईं, मैं जनाब दा इस्म शरीफ पुछना ते भुल गया।"

"शाह जियो, मेरा नाम अतरसिंह ने। जात दा खत्री हां—भसीन।" अतरसिंह ने बताया।

"साईं, फेर तां तुसीं मेरे भिरा हो। मेरा नां रामदयाल है। मैं भी खत्री हां—सूरी।" कहते-कहते वह जैसे खुशी से फूल उठा।

"शाह जियो, फेर तां तुसी साडे सके भरा हो। खोखराइन बिरादरी जो होई।" अतरसिंह ने उमगकर रामदयाल के दोनों हाथ पकड़ लिये।

"साईं, असीं चार हमजुल्फ(साढू) हां। दो सिख ते दो मोने हिन। मेरा सौरा मोना ते साला सिख है।" रामदयाल ने अतरसिंह से अपना रिश्ता मजबूत करने के लिए अपने सम्बन्धियों का ब्योरा दिया।

अतरसिंह बड़े ध्यान और दिलचस्पी के साथ रामदयाल की बातें सुन रहा था। संजीदगी से बोला, "शाह जियो, जेकर हिन्दू और सिख इक न हुन्दे ते दोनों दी मार-काट लाज़मी क्यों हुन्दी।" फिर एक-एक शब्द पर जोर देकर आगे कहा, "हिन्दू और सिख तां इक मां जाये जौड़े भरा ने। इन्हां दा ते नहु-मास दा रिश्ता ए।"

दोनों को बड़े अपनेपन से बातें करते पाया तो अखिन्न कौर ने आँख भरकर उनकी ओर देखा। वे दोनों बातें करते-करते कभी अतीत में खो जाते और कभी अपनी आज की स्थिति पर दुख प्रकट करने लगते।

अतरसिंह ने वाहेगुरु को स्मरण करते हुए पूछा, "शाह जियो, ए ताँ दस्सो तुसीं हुन केह धन्धा करने ओं ?"

"हलवाई दा कम शुरू करण दा विचार वणाया हे लेकिन कम दा ठिकाणा नहीं मिल दा पया।" रामदयाल ने कहा। फिर अतरसिंह की आँखों में झाँकता हुआ बोला, "साईं, तुसीं जाणदे ओ विना ठिकाने दे हलवाई दा कम चलदा कोई नाँ। सोचदा सी एधर वत कोई ढंग दा अड्डा मिल वँजे।"

"जखीरा अच्छा अड्डा ए। ओथे दो सड़काँ मिलनी ने। चुंगी भी ए। ट्रक-मोटर ते रेढ़ा-ठेला सब ओथे रुकने ने।" अतरसिंह ने वताया।

"एह ठिकाना ते है पया। लेकिन उत्थाई वह ऊँ सारे दुकानाँ पहले हिन। ऊँए हिक खोखा उत्थई वणायाँ होया हे। छोटा भिरा उत्थई वांदे।" रामदयाल ने वताया।

अतरसिंह सोचकर बोला, "शाह जियो, मैं इस सड़क ते तिहाड़, खयाला और धौली प्याऊ तीकर हो आया। एस पासे कोई कम दा अड्डा डिठा नहीं।"

रामदयाल अपने दायें-बायें हाथ फहराता हुआ बोला, "साईं, सुणया ए सरकार इत्थाई वी क्वाटर वणोंदी पयी ऐ। जे हुणे नाल ठिकाना वण वँजे ते ठीक ऐ।"

"क्वाटर ताँ चारों पासे वन रहे ने। इन्ना आदम अपना वतन छोड़ के औंदा पया ने सरकार किते ताँ उन्हाँ वसा सी।" अतरसिंह ने कहा। फिर पूछा, "तुसीं एधर अड्डा किथे जमा सो ?"

"इत्थाउँ थोड़ी दूर सड़क दे किनारे हिक खुई हे।" रामदयाल ने अपनी बायीं ओर इशारा किया।

"जित्थे वान्दर वहऊँ ने ?" अतरसिंह ने पूछा।

"हाँ साईं...उत्थाई गड्डे-ठेले, ट्रक-मोटर पानी पीण वास्ते रुक दे हिन। उत्थाई हिक छोटा जया शिवाला वी सुंज थया पे।..."

"हाँ हे।"

"उत्थाई चा दी दुकान होवे ताँ कोई चा पी सी ते नाल कुझ खा सी : पकौड़े, बर्फ़ी। आबादी वण वँजे ते मौज ही मौज हो सी।" रामदयाल ने विश्वास के साथ कहा।

अतरसिंह ने इस योजना पर कुछ क्षण विचार किया। फिर रामदयाल की ओर देखता हुआ बोला, "शाह जियो, कर वेखो। सतगुरु सच्चे पादशाह दी मेहर हो गयी ताँ सब कारज सिद्ध हो जा साँ।"

"खुई सामनेवाली वस्ती विच हे। ठिकाना वणाया ताँ पहलाँ मालकाँ कोलूं पूछणा पौसी।" रामदयाल ने अतरसिंह की ओर देखते हुए कहा, "जे त्वाडी गाँव विच जान-पहचान होवे ताँ गाल कर देखदे हें। मन वंजन ते सोहणी गाल हे।"

अतरसिंह सोच में पड़ गया। रामदयाल को अपनी ओर आशा-भरी नज़रों देखता पाकर वह अटकते-अटकते हुए बोला, "जान-पहचान कुझ ख़ास नयी। असीं दा उन्हाँ नाल केह रिश्ता ए...अज पहली वार कपड़ा वेच के आ सां। इक दिन पहला गया सी। मालकाँ ने गलियाँ विच आण तों मना कर दित्ता सी। अज—" कहते-कहते अतरसिंह ने बात बीच में ही छोड़ दी और तड़पकर उठ बैठा। दायीं टाँग पर सलवार का पाँयचा ऊपर खींचकर उसने पिण्डली पर चिपटे मकौड़े को नोचकर परे फेंक दिया।

"मैं आख सां, केह हो गया ने? किउं तड़फदे पये हो?" अचिन्त कौर लपक-कर उसके पास आ गयी।

"तक्को ना, करमावालियो, मकौड़ा लड़ गया ने। डाढी पीड़ हुन्दी पयी ने।" अतरसिंह पिण्डली दिखाता हुआ अँगूठे से उसपर ज़ोर-ज़ोर से मालिश करने लगा।

अचिन्त कौर ने पेड़ की जड़ के पास ही मकौड़ों का भौन देखा तो तल्ख़ स्वर में बोली, "तक्को ना, तुसीं भी तां कमाल करदे पये ने। भौन उप्पर बैठे सी। मकौड़ा न लड़ सी तां केह प्यार कर सी?" फिर कहने लगी, "कुत्ता ज़मीन ते बैठ सी तां पोछ नाल पहलां जगह साफ़ कर सी। तुसीं तां कुझ भी नयीं तक्के... पटोसा मार बैठ जाने ने।"

अतरसिंह पिण्डली को दबाता हुआ वहाँ से हट गया और वे दोनों एक दूसरे पेड़ के नीचे जा बैठे। रामदयाल ने दोनों साइकिलें उठाकर उधर पास ही टिका दीं।

"अजे पीड़ हुन्दी पयी ने?" अचिन्त कौर ने चिन्ता के स्वर में पूछा।

"ठीक थींवे सी। भैणजी, फ़िक्र न करो, काला मकौड़ा लड़या है कुझ देर तां पीड़ थी सी।" रामदयाल ने कहा।

अतरसिंह ने सलवार का पाँयचा नीचे गिरा दिया और खिन्न हँसी के साथ बोला, "अपने वतन विच भी मकौड़े-सी। लड़ सी तां मिट्टी जेही पीड़ हो सी। लेकिन एथे दे मकौड़े भी वसनीकाँ (यहाँ के बाशिन्दा) दी तरह ख़ोरे ने। लड़ने ने पे डाढी पीड़ कर सी।"

"साईं, इत्थाईं दे लोक डाढे कौड़े हिन। कुसे वागों वट खिद दें हिन। गाल इवें करेनन जियें भिड़ दे पये होवन।" रामदयाल ने बुरा-सा मुँह बनाते हुए कहा। फिर अतीत में डूबी आवाज़ में बोला, "साडे वतन दे लोग डाढे चंगे थाई। चाये हिन्दू चाये मुसलमान—डाढे शरीफ़ हाई। जिस वेले मुस्लिम लीग कोई न हाई तां एथी लोक सकके भिरावाँ वांग रेंहदे थाई। सब दी इज्जत सांझी हाई। गाल जो करेंदे तां कलेजा ठरदा (ठण्डा) हाई।"

"ठीक आख सो शाह जियो। अपने वतन विच तां ते सरकारी अहलकार भी

असाँ दी गल नूँ हलफ़ी ब्यान तों पक्का समझने साँ। एथे दो-दो आने दे आदमी नूँ दसना पैंदा ने कि असाँ कौन ने, कित्थों आये ने। गल सुन असाँ नूँ इंज तकने ने जिवें असाँ कुफ़ तोल रहे ने।" अतरसिंह ने तल्ख़ आवाज़ में कहा।

कुछ देर तक रामदयाल ख़ामोश बैठा रहा। फिर अतरसिंह की ओर झुकता हुआ बोला, "साईं, मेरी अर्ज़ ते भी ग़ौर कीती वंजो। वस्ती विच जान-पहचान होवे ताँ गाल कर देखो।"

"शाह जियो, चल साँ, जरूर चल साँ।" अतरसिंह ने रामदयाल को आश्वासन दिया। फिर गम्भीर स्वर में बोला, "आखने ओ ताँ मैं जरूर चल साँ। पर फैंदा कोई न हो सी।......मेरी मन्नों तो चुपचाप अड्डा बना छोड़ो। जद कोई पुछ्छन आये ताँ वेख लय साँ।"

यह सुनकर रामदयाल निराश हो गया और अतरसिंह को समझाते हुए बोला, "साईं, जे ठिकाना वणा सी ते थोड़ा-वहऊँ खर्च हो सी। पंजाह-सौ रुपये लग सन, मालिक मना कर देवन ताँ वेगुनाऊ डज लग सी।"

"शाह जियो, डरने ओ ताँ कम किज कर सो।" अतरसिंह ने चेताते हुए कहा।

"पहलों मैं एस गाँव विच गया तो मैंनूँ गली विच भी न घुसने दिन्ना। अज ओथे ही सौ रुपये दा माल वेच के आवाँए। तुसाँ आखने ओ ते मैं जरूर चल साँ।" अतरसिंह ने फिर आश्वासन दिया और हँसता हुआ बोला, "मुंशी सवक न दे सी...घर ते आण दे सी।"

अतरसिंह को गाँव जाने के लिए तैयार देख अचिन्त कौर बेचैन-सी हुई। अतरसिंह ने उसके मन की स्थिति भाँप ली और उठकर उसके पास गया। अचिन्त कौर तल्ख़ स्वर में बोली, "तक्को नाँ, दिन ढल गया ने। लारी अजे वी नहीं आयी ने। पैदल ही चल सी। न रुकदे ताँ आधा रास्ता निक्कल गये हुन्नो।"

"करमावालयो, सबर करो। वस लारी औन्दी पयी ने। टैम भी हो गया ने।" अतरसिंह ने उसे ढाढ़स दिया और रामदयाल के पास आ बैठा।

अचिन्त कौर बेचैन-सी घूमने लगी तो रामदयाल ने पूछा, "भैण दी तबीयत ते ठीक है?"

"हाँ, चित ताँ ठीक ने।" अतरसिंह ने कहना शुरू किया, "छोटे दो बच्चे स्कूल जान्दे ने। उनहाँ दे औण दा टैम हुन्ना पया ने। माँ ए ना—उनहाँ दी भुख इन्हाँ नूँ सता रही ने।...बच्चे बहुत सबर-सन्तोख वाले ने।" दो क्षण रुककर फिर बोला, "शाह जियो, आप सोचो जेहड़े बच्चे बग्घी विच बैठ के स्कूलाँ जा साँ, हुन ओ धुप होवे या छाँ, मेहँ होवे या झक्खड़ पैरा टुर के जान्दे ने। फिर केलियाँ दी टोकरी लय के बैठने ने। शाम ताईं रुपया-सवा रुपया कमा लयांदे ने।"

"मैं भी [त्वाकू तकलीफ़ देन्दा पया ।" रामदयाल ने क्षमा-याचना करते हुए कहा ।

"ना शाह जियो, केह पये आखने ओ । एह तां मेरा अपना कम ए । मरा इक दूजे दी मदद न कर सां ते केंह पराये कर सां ?"अतरसिंह ने रामदयाल का हाथ पकड़ते हुए कहा ।

दूर पर बस की घूँ-घूँ सुनकर अतरसिंह के कान खड़े हो गये । वह सड़क की ओर लपकता हुआ बोला, "शायद सारी औन्दी पयी ने ।"

रामदयाल भी उसके पास चला गया । दोनों सड़क के बीचों-बीच खड़े होकर नजफ़गढ़ की ओर से आनेवाली सड़क पर देखने लगे । बस को देखकर अतरसिंह चिल्लाया, "तकड़ी हो करमावालयो, सारी औन्दी पयी ने ।"

अतरसिंह की साइकिल को घसीटकर वे सड़क के किनारे ले आये । दोनों ने मिलकर शक्कर की गठरी और अनाज की बोरी अलग रख ली । जब बस नज़दीक आ गयी तो अतरसिंह और रामदयाल बस को रुकने का इशारा करते हाथ हिलाने लगे । रुक गयी बस तो अचिन्त कौर ने शक्कर की गठरी उठा ली और अतरसिंह ने नाज की बोरी । रामदयाल बस की छत पर चढ़ गया । अतरसिंह ने बोरी ऊपर उठा दी और खींचकर उसे रामदयाल ने छत पर टिका दिया ।

"केह तकदे करमावालयो, सारी विच बैठो ना ।" अतरसिंह ने अचिन्त कौर से कहा ।

"भाड़े दे पैसे तों दे सो ?" अचिन्त कौर उसकी ओर हाथ फैलाती हुई बोली ।

"तुसी अपना रुपया भुना लो ना । घर आके मैं होर पैसे दे सां ।" अतरसिंह ने मुसकराते हुए कहा ।

"वाहगुरु दी सौंह । मेरे पास तां फुट्टी कौडी भी नहीं ।" अचिन्त कौर बोली ।

बस को देर लगी तो लोग शोर मचाने लगे । ड्राइवर ने पीछे मुड़कर ऊँची आवाज में क्लीनर से कहा, "प्यारसिंह, मोटी दे न ?"

"उस्ताद, एक पजाजन सवारी सै । उसका सामान रखा जा रिहा ए ।" प्यारसिंह ने बताया ।

"क्या पीहर से आवे सै जो इतना सामान है ?" एक सवारी ने पूछा ।

"आजकल तो सारा मुलक ही इनका पीहर सै । दूसरी सवारी ने उत्तर दिया और बस लोगों के ठहाकों से गूंज उठी ।

अचिन्त कौर और अतरसिंह को बहस करते देख क्लीनर ने ऊंची आवाज में कहा, "सारी में चढ़ो । तकरार घर जाकर करियो ।"

अतरसिंह ने अचिन्त कौर को एक अठन्नी दे दी तो वह शक्कर की गठरी

थामे बस में घुस गयी। बस सवारियों से खचाखच भरी हुई थी। बहुत-से लोग खड़े थे। बस में बीड़ी-सिगरेट का धुआँ भरा हुआ था। अचिन्त कौर ने नाक पर कपड़ा रख लिया और कड़वे धुएँ के कारण आँखें झपकती हुई लोगों की टाँगों-पैरों में फँसती-फँसाती एक सीट तक पहुँच गयी।

"वीरजी, थोड़ा पासा मोड़ सो ?" अचिन्त कौर ने वहाँ बैठे एक अधेड़ उम्र के व्यक्ति से कहा और थोड़ी-सी जगह पाकर धप्-से बैठ गयी। शक्कर की गठरी उसने अपनी गोद में रख ली।

अतरसिंह बाहर से चिल्ला रहा था, "पहाड़गंज थाने दे सामने उत्तर जाना। बोरी सामने दुकान ते रख देना। मैं आके चुक लय सी।"

बस चली गयी तो वे अपनी साइकिलों के पास आ गये। अतरसिंह ने सामने गाँव की ओर देखा। फिर अपनी साइकिल उठाता हुआ रामदयाल से बोला, "शाह जियो चलो, चल वेखिये...गल कर वेखिये।"

दोनों साइकिलों पर सवार होकर गाँव की ओर चल पड़े। अतरसिंह दुनीचन्द की दुकान के सामने से होता हुआ मुखिया की चौपाल में नहीं जाना चाहता था। इसलिए वे बड़े रास्ते से घूमकर दक्षिण की ओर बढ़ गये। फिर मुखिया की चौपाल को जानेवाली गली में घुस गये। गली में उन्हें एक व्यक्ति ने रोक दिया और बड़े बेहूदे और अपमानजनक ढंग से पूछने लगा, "राना झोटा की तरह कित्त मुँह उठाये जा रिहे हो ?"

"चौधरीजी, मुखियाजी से मिलना ने।" अतरसिंह ने नम्रता से उत्तर दिया।

"मुखिया से मिलना सै तो गलियारे में साइकिल पर चढ़कर जाना है ? क्या पाँव में दर्द सै ?" उस व्यक्ति ने उसी स्वर में कहा। फिर डाँटता हुआ बोला, "गली को बाबा की बैठक समझ रखा है। साइकिलों से उतरकर जाओ। यों घुसे आ रहे हैं जैसे डेढ़ सौ गाँवों की पंचायत के मालिक हों।"

अतरसिंह और रामदयाल साइकिलों से उतर गये। वह व्यक्ति आगे बढ़ गया तो रामदयाल ने साइकिल मोड़ते हुए कहा, "साईं जी, सैकल मोड़ वंजो।"

"क्यों ? मुखिया से न मिल सो ?" अतरसिंह ने हैरानी से पूछा।

"औंदा कोई फैदा न थी सी।" रामदयाल ने निर्णय-भरे स्वर में कहा।

दोनों साइकिल घसीटते हुए गली से बाहर आ गये। कुछ दूर पैदल चले। फिर साइकिलों पर सवार हो गये। रामदयाल बहुत गम्भीर था। उसका मुँह फूला हुआ था। वह जैसे फूट पड़ा, "साईं, डिट्ठे वे ? मा दा यार पागल कुत्ते आली कार कट्टन कू वज्जया। मुखिया दे कोल वेंदे ते शायद हथ-पैर वध के कोठे विच डक दिन्दा।"

"शाह जियो, मैं ताँ पहले ही आख साँ, कोई फैदा ना हो सी। तुसाँ अपनी

अपणी जान तक लगा के, बन्दा जान गुन लगा के।" अमरसिंह ने अपनी बात को सच साबित करने के लिए एक-एक शब्द पर ज़ोर देते हुए कहा।

सड़क पर आकर दोनों रुक गये। रामदयाल खुई की ओर देखकर बोला, "साईं, टैम तो बरबाद की सी। चल के मेरे नाल इक वारी ठिकाना देख लिन्दो।"

"मैं चल सां, शाह जियो, ज़रूर चल सां।" अमरसिंह ने कहा।

और साइकिलों पर सवार होकर वे खुई की ओर बढ़ गये। वहाँ पहुँचने पर उन्होंने साइकिलें खड़ी कर दीं और खुई के अन्दर झाँकने लगे। पानी बहुत गहराई में था और तारे की तरह चमक रहा था।

खुई से हटकर वे मन्दिर की ओर आ गये। मन्दिर की बाहरी चारदीवारी कहीं-कहीं टूट गयी थी। दरवाज़े के दोनों पल्ले ग़ायब थे। वे आँगन में पहुँचे। जगह-जगह से वहाँ का फ़र्श टूटा हुआ था। उन हिस्सों में बरसात का पानी रहने से काई जम गयी थी। आँगन के एक कोने में एक कमरा था जिसकी छत गिरकर ढेर हो चुकी थी। दरवाज़ा चौखट समेत ग़ायब था। रामदयाल ने अन्दर झाँका। छत के मलबे पर घास-फूस उग आया था। एक खूँटी पर मोटे मनकोंवाली माला लटक रही थी।

रामदयाल फिर दूसरे कोने की ओर गया। वहाँ आँधी-तूफ़ान का लाया हुआ तमाम कूड़ा-कचरा पड़ा था जिस पर बैठा हुआ एक बूढ़ा बन्दर पंजों से शरीर को खुजा रहा था। उन्हें देख एक क्षण के लिए उसके पंजे रुके। वे भी ठिठक गये। बन्दर ने खूँ-खूँ की तो वे पीछे हटकर दरवाज़े की खुली चौखट में आ गये। बन्दर फिर पहले की तरह खुजाने लगा तो वे दबे पाँव आहिस्ता-आहिस्ता आगे बढ़ आये। मन्दिर की परिक्रमा की। देखा—सीमेन्ट का पलस्तर कई जगह से उखड़ गया है जहाँ बचा हुआ है वहाँ काला पड़ गया है, और मूर्तियों की हालत तो इतनी बिगड़ गयी थी कि उन्हें पहचानना असम्भव था।

वे मन्दिर के दरवाज़े के सामने आ गये। दरवाज़ा बन्द था और साँकल चढ़ी हुई थी। रामदयाल ने डरते-डरते साँकल खोली और दोनों पल्लों को पीछे धकेला। दरवाज़ा खुलते ही बदबूदार हवा का झोंका उनके नथुनों से टकराया। वहीं खड़े-खड़े रामदयाल अन्दर झाँकने लगा। सामने दीवार पर हनुमान्‌जी की सीमेण्ट की मूर्ति बनी हुई थी। सिन्दूर का रंग एकदम उतर गया था, कई जगह तो काला पड़ा था। नीचे कुछ सूखे हुए फूल पड़े थे, मिट्टी के कई दीपक भी रखे थे। छत से लम्बे-लम्बे जाले और लोहे की एक मोटी जंजीर लटक रही थी, लेकिन घड़ियाल नहीं था। फ़र्श भी टूटा हुआ था और कीड़े-मकोड़ों से भरा हुआ।

रामदयाल पीछे को हट आया और कानों को छूता हुआ बोला, "आखन नूँ तो भगवान दा घर है लेकिन हालत फ़कीर दी कुटिया कोलों भैड़ी है। इथाईं लोक बड़े नास्तक हो सन जिन्हा हनुमानजी दी एह दुर्दशा कर रखी है।"

मन्दिर से दोनों फिर खुई की ओर आ गये। वहाँ भूसे से लदी तीन ऊँट-गाड़ियाँ खड़ी थीं और दो आदमी खुई से पानी खींच रहे थे। वे उनके पास चले गये। रामदयाल ने 'राम-राम' बुलायी और विनीत स्वर में बोला, "चौधरीजी, साकू की पाणी पले सो ?"

गाड़ीवालों ने उनकी ओर ध्यान से देखा और एक ने अपनी ओर आने का इशारा किया। रामदयाल और अतरसिंह ने वारी-वारी ओक से पानी पिया। अतरसिंह गीले हाथ दाढ़ी पर फेरता हुआ बोला, "पानी ते मिट्ठा ने।"

"हाँ, पाणी ढाडा ठरया ऐ।" रामदयाल ने कहा।

गाड़ीवालों ने अपनी रस्सी और बालटियाँ समेट लीं तो रामदयाल उनकी ओर बढ़ गया, "चौधरी जी, ए मन्दिर वेचिराग़ क्यों थिड़ पया हिन।"

उनमें से एक ने बताया, "यहाँ कभी बहुत रौनक़ होती थी। जब तक जौहड़-वाले बाबाजी ज़िन्दा रहे यहाँ हर साल दशहरे के दिनों में दस दिन तक साँग होता था। एक दिन मन्दिर के अन्दर बाबाजी की लाश मिली। उस दिन से यह मन्दिर उजड़ गया। चोर-उचक्के काँसे-पीतल का घड़ियाल, दरवाज़ों के पल्ले तक उतारकर ले गये।"

रामदयाल सुनकर भीतर ही भीतर कुछ चौंका। फिर उसने पूछा, "चौधरीजी, ए दस्सो इत्थाई चा दी दुकान चल पोसी ?"

"दुकान तो चल सै। लेकिन चोर-उचक्के दुकान लूट लेंगे।" गाड़ीवान ने बताया।

रामदयाल सोच में पड़ गया। फिर उसकी ओर देखता हुआ बोला, "चोर साकू पोसन ते असे उन्हाँ कू पय वेस्। ए दस्सो इत्थाँई भूत-प्रेत तो नयी रहेंदे।"

"भई, देखा-सुना तो नहीं सै। आगे भगवान जाने सै!" गाड़ीवान ने कहा।

गाड़ीवाले सब अपनी गाड़ियों की ओर चले गये। बहुत-से बन्दर गाड़ियों के ऊपर चढ़े हुए खूं-खूं करते, आपस में लड़ते-झगड़ते, भूसे में से चने और गेहूँ के दाने बीन-बीनकर खा रहे थे। गाड़ियाँ चल दीं तो कुछ बन्दर उतर गये, कुछ उसी तरह बैठे भूसे को कुरेदते-बखेरते रहे। जब दूर चली गयीं गाड़ियाँ तो वे एक-एक, दो-दो करके उतर आये।

रामदयाल और अतरसिंह एक पेड़ के नीचे आ गये। रामदयाल ने सोचते हुए कहा, "साईं; मैं सुचेना कि हाली खोखा न वणावा। द्रख़्त दी टैनिया दे नाल चादर बध के छत लगा के गुज़ारा करेसाँ। सवेरे सैकल ते समान घिन आ साँ ते शाम कू वत सब कुझ वध-वधा के जखीरे घिन वेसाँ। त्वाड़ी केह सलाह हे, मेकू दस्सो।"

अतरसिंह ने दाढ़ी में हाथ की उंगलियों से कंघी जैसे करते हुए आधेक मिनिट सोचा, फिर एक निगाह उधर देखते बोला, "शाह जियो, जगह उजाड़ ने। अजे

इलाज कर वेखो। कम चल सी ते खोगा कहै, पसली हड्डी भी बच जा सी।"

"फिर इवें ई कर वेखे हैं।" रामदयाल ने निर्णय किया।

वे बातों में ही लगे थे कि खूँ-खूँ की तेज आवाजों ने उनका ध्यान खींचा। बहुत-से बन्दर मुर्दई की ओर यूँ भागे आ रहे थे जैसे किसी इनामी दौड़ में हिस्सा ले रहे हों। वे पेड़ों पर चढ़ गये। उनकी खूँ-खूँ और टहनियों के हिलने से ऐसा लगता जैसे कोई आंधी-तूफान आ गया हो।

रामदयाल और अतरसिंह मुँह उठाये देख रहे थे।

"इत्थाई ते बहुतै बान्दर हिन। इंजे मलूम थींदे कि हनुमानजी अपनी सारी सेना इत्थाई छोड़ रयी है।" रामदयाल ने हँसते हुए कहा—"भाई, है कम करण देसन, चीजा पिन के इत्थी ते चढ़ वंजन।" रामदयाल ने अपनी शंका व्यक्त की। फिर आप ही हँसता हुआ बोला, "कोई गाल नयी। मैं इत्थाई रह सी ते इन्हां नाल आपे ई भाई-चारा थी वेसी।"

उसने एक बार फिर चारों ओर नजर दौड़ाकर एक जायजा लिया और फिर अतरसिंह से अन्तिम फैसले के स्वर में बोला, "भाई, जो हो सी, देख सी। कल-परसों परमात्मा दा नाँ लय के इत्थाँ अँगीठी जला सी।"

एक बार फिर मन्दिर की तरफ देख दोनों अपनी-अपनी साइकिलों पर सवार होकर दिल्ली की ओर बढ़ने लगे।

छह—

कई लोग मुखिया की बैठक की छत पर खड़े करोलबाग की ओर देख रहे थे। उधर ठीक उसी जगह जहाँ कई दिन पहले जोरदार धमाके हुए थे, चार ऊँचे-ऊँचे स्तूप-से उठ आये थे। वे इतने ऊँचे थे कि नजफगढ़ रोड पर पेड़ों के ऊपर से झाँकते दिखाई देते थे।

ताऊ ने असमंजस-भरी आवाज में पूछा, "ये क्या बन रहा है?"

"आसमान को सीढ़ी लगायी जा रही है ताकि लोग जीते जी स्वर्ग देख सकें।" बंसीलाल ने मजाक किया।

"बाह्मण, तू सारा दिन कभी मेरे घेर में, कभी मुखिया की बैठक में, कभी दुनिये की दुकान पर और कभी चौपाल में बैठा स्वर्ग का धन्धा करे है। यह सीढ़ी चढ़कर एक चक्कर लगा क्यों नहीं आता?" ताऊ ने हँसते हुए कहा।

"ताऊ, विना मरे स्वर्ग कोई न देखे।" वंसीलाल ने जवाव दिया।

मुखिया परतापसिंह उन स्तूपों को ध्यान से देखता हुआ गम्भीर स्वर में वोला, "मज़ाक़ छोड़ो। ये वताओ ये इस्तूप हैं क्या ?"

"अगर ये सीढ़ी नहीं वन रही है तो फिर देश का नया राजा कुतुव के मुकावले में वड़ा मीनार वना रहा है।" वंसीलाल ने अनुमान दौड़ाते हुए कहा।

मुखिया ने घूरकर वंसीलाल की तरफ़ देखा लेकिन कहा कुछ नहीं। तभी उसने एक साइकिल के पीछे और आगे टीन के वड़े-वड़े डव्वे वांधे हुए किसी को सड़क से गांव की ओर मुड़ते देखा और जरा आगे वढ़कर उसे पहचानने की कोशिश की —"कोई ग्वाला आ रहा है।"

"यह तो शामा अहीर है !" वंसीलाल ने कहा।

"अच्छा ! यह तो थोड़ी देर पहले ही मेरे घर से दूध लेकर गया था।" ताऊ ने हैरानी से कहा, और इव लौट भी आया से।"

"इसे आवाज दो। रोज सहर जाता है, इसे पता होगा ये इस्तूप कैसे हैं।" मुखिया ने कहा।

आवाज सुनकर शामा ने साइकिल मुखिया की वैठक की ओर मोड़ दी। दीवार के साथ उसे टिकाकर वह ऊपर छत पर आ गया।

"राम-राम, मुखियाजी," उसने प्रसन्न भाव से कहा।

"राम-राम," मुखिया ने उत्तर दिया।

"शामलाल, तू दूध वेच आया ?" ताऊ ने हैरानी से पूछा।

"हाँ ताऊ, इव कामं आसान हो गया सै। हादीपुर में एक पंजावी हलवाई ने दुकान खोली से। वही सारा दूध उठा लेवे है।" शामलाल ने उत्तर दिया।

"अच्छा !"

"हां ताऊ, दर-दर घूमने से वच गया और रकम भी ज्यादा मिले है। शादीपुर में तो पूरा वाजार वन गया से। हलवाई, नानवाई, पकौड़ों की दुकानें—सव तो हैं।" और फिर हँसता हुआ वोला, "सराव भी सस्ती विकै है : दो रुपये की वोतल। पंजावी खुले आम वेचते हैं।"

मुखिया ने उन स्तूपों की ओर संकेत करते हुए पूछा, "शामलाल, तुमने ये इस्तूप भी देखे होंगे ?"

"हां चौधरीजी, तीन महीने से देख रहा हूँ। यहाँ से ये इतने ऊँचे दिखाई नहीं देते। वहाँ से देखो तो गरदन अकड़ जाये, पगड़ी सिर से नीचे गिर जाये।... शादीपुर के सामने पहाड़ी के नीचे एक वहुत वड़ी वस्ती वन रही से। पूरा गेट तक पक्की सड़क वन गयी है। चौधरीजी, एक वार जाकर तो देखो...पहचान नहीं सकोगे कि यह वही पथरीला वंजड़ से जहाँ गादड़-लोमड़ी और सांप-विछुए होते

थे।" शामलाल ने आँखें और दोनों हाथ फैलाकर प्रभावपूर्ण लहजे में कहा।

"ये इस्तूप कैसे हैं?" मुखिया ने पूछा।

"ये तो मुझे पता नहीं। कुछ बने से।" शामलाल ने हाथ मलते हुए कहा, "कहो तो पता कर आऊँगा।"

शामलाल साईकिल उठाकर चला गया तो मुखिया बोला, "शामलाल को देखा! हाथ पर घड़ी बाँध रखी है! इब बारीक किनारी की धोती पहने से!"

"हाँ चौधरी, कमाई हो तो सब ढंग आ ही जावें हैं।" बंसीलाल ने कहा।

"शामा तेरे घर से भी दूध उठाता है?" मुखिया ने बंसीलाल से पूछा।

"हाँ चौधरी, इसी महीने से शुरू किया है।" बंसीलाल खिसियाना होकर बोला।

"देख लो, जमाने के फेर। बाहमण भी दूध बेचने लगे हैं!" मुखिया ने भौंहें ऊपर चढ़ाकर ताऊ को सम्बोधित करते हुए कहा।

"हाँ चौधरी, बाहमण दूध बेचने लगा है। छिब्बे ने खेती छोड़ दी है। कहता है मैं खेतों में दिहाड़ी पर काम नहीं करूँगा।" ताऊ ने खिन्न स्वर में कहा।

"क्यों?" मुखिया ने पूछा।

"कहता है पैसे कम मिलते हैं और जोखम ज्यादा है।" ताऊ ने बताया।

"असल में बात यह है कि उसके दो लड़के कहीं बाहर मजूरी करने लगे हैं। सुना है सवा-डेढ़ सौ रुपये कमा लाते हैं। चौधरी, तू आप सोच जिस आदमी के घर में हर महीने बँधे डेढ़ सौ रुपये नकद आ जावें वह खेत में दिहाड़ी क्यों लगायेगा? तुम उसे क्या देते हो? दो सूखी रोटियाँ सबेरे अचार और लस्सी के साथ, चार सूखी रोटियाँ दोपहर में दाल के साथ और आठ आने पैसे।" बंसीलाल ने कहा।

"हूँ, यह बात है!" मुखिया ने सिर हिलाते हुए कहा। "मैं भी सोच रहा था कि जो आदमी दिहाड़ी के लिए माथा रगड़ता था उसे इब इस काम में गुलामी की बू क्यों आने लगी है?"

"चौधरी, कम्मी गरीब को पेट-भर रोटी मिलने लगे तो उसकी आँतों की सारी हवा सिर में चढ़ जाये है। दिमाग तो खराब होणा ही।" ताऊ ने कहा।

वे अपनी बातों में मगन थे कि बैठक के दरवाजे पर पटवारी नन्दलाल की आवाज सुनाई दी।

"पटवारी आया है।" बंसीलाल ने कहा।

"कहाँ?" कई आवाजें एक साथ उठीं।

"नीचे है।" बंसीलाल ने मुंडेर से झुककर नीचे झाँकते हुए बताया।

इतनी देर में पटवारी नन्दलाल ने आवाज दी, "चौधरी, कहाँ हो?"

"पटवारी महाराज, आ रहा हूँ।" मुखिया ने उत्तर दिया और जल्दी-जल्दी

सीढ़ी उतरने लगा। और लोग भी पीछे-पीछे आ गये। सबने पटवारी को जय रामजी की बुलायी।

"चौधरी, इतनी धूप में छत पर सब जने क्या कर रहे हैं ?" पटवारी ने पूछा।

"उधर करौलबाग की तरफ बड़े-बड़े इस्तूप बने हैं। उन्हें देख रहे थे। पटवारीजी, आपको ज़रूर पता होगा ये इस्तूप कैसे हैं ?"

"कोई बात नहीं हैरानी की। आते बरस तुम्हारी ज़मीनों में भी ऐसे ही स्तूप बन जायेंगे। फिर जी भरकर देख लेना।" पटवारी ने हँसते हुए कहा।

"एह छोरे, पटवारीजी के लिए खाट तो बिछा दे और लस्सी-पानी भी ला," मुखिया ने पास खड़े अपने लड़के दलील को कहा।

"नहीं, मुझे बैठना नहीं। मैं सिर्फ़ आप लोगों को इतलाह करने आया था कि आज तहसीलदार साहब तुम्हारे गाँव आ रहे हैं। साथ में सदर कानूँगो, गरदावर, मैं और कुछ और अहलकार भी होंगे।" पटवारी ने कहा।

तहसीलदार साहब हमारे गाँव आ रहे हैं ? हे राम जी। ऐसे भाग हमारे कहाँ कि हाकिम हमारे गाँव में आयें।" मुखिया ने कानों को छूते हुए कहा और फिर घबरायी हुई आवाज़ में पूछा, "पटवारी जी, हाकिम खुशी-खुशी आ रहे हैं ना ? ठीक-ठाक है न ?"

"चौधरीजी, मैं तो इतना जानता हूँ कि हाकिम और सांप जब बाहर निकलते हैं तो कुछ भी कर सकते हैं। हो सकता है विचरकर ही वापस चले जायें। हो सकता है किसी को दण्ड दे दें।" पटवारी ने एक अर्थ-भरी नज़र से सबकी ओर देखते हुए कहा।

पटवारी की बात सुनकर मुखिया और अन्य लोग घबरा गये। उनके मन में अचम्भा और घबराहट दोनों होने लगे।

"पटवारीजी, आपको पता ही होगा। हाकिम हमारे गाँव का दौरा क्यों कर रहा है ?" मुखिया ने गिड़गिड़ाते हुए पूछा।

"ख़ास तो पता है नहीं। लेकिन मेरा विचार है, वह आपके गाँव की ज़मीन का मौक़ा देखने आ रहा है। शायद सरकार ये ज़मीनें ख़रीदना चाहती है—" पटवारी ने अपने आसपास बैठे लोगों की ओर देखते हुए कहा। फिर बात पलटता हुआ बोला, "मुझे पक्का पता नहीं, सिर्फ़ मेरा ख़्याल है। वह इसलिए कि कोई एक साल पहले बसई, दारापुर, तातारपुर, खयाला, महदीपुर गाँवों की ज़मीन के नक़्शे, गोशवारे और फ़रदें, खतौनियाँ तहसील में तलब किये गये थे। ऐसा कई बार होता है, इसलिए मैंने कोई दिलचस्पी नहीं ली। लेकिन आज सवेरे ही गिर्दावरजी ने मुझे बताया कि साहब मौक़ा देखने आ रहा है।"

पटवारी की बात सुनकर सबकी सांस जैसे रुक गयी। फैली-फैली आँखों सब

मुखिया की तरफ़ देखने लगे। वह डरे हुए स्वर में बोला, "अगर सरकार ने हमारी जमीनें ले लीं तो गजब हो जायेगा। पटवारीजी, हम भूखे मर जायेंगे। ...कहाँ जायेंगे...कहाँ रहेंगे...क्या काम करेंगे?"

"चौधरी, कोई लूट तो मची नहीं! सरकार जमीनें लेगी तो मुआवजा भी देगी—नक़द पैसा! सौ-सौ के करारे नोट बाँटेगी।" पटवारी ने हँसते हुए कहा, "चौधरी, तू समझो, सरकार सोने के मोल मिट्टी-पत्थर-बंजड़ लेगी।"

"ना पटवारी जी, सरकार अपना सोना अपने पास रखे। हमारा मिट्टी-पत्थर का बंजड़ मत ले। स्याने कहैं—अन्न-धन, अनेक धन, सोना-रूपा कितेक धन!" मुखिया ने विनीत स्वर में कहा।

पटवारी ने वहाँ बैठे लोगों के चेहरों पर नज़र डाली। उनके उदास, उतरे हुए और डरे-डरे चेहरे देख उन्हें दिलासा देने के लिए वह बोला, "मैं तो सुनी-सुनायी बात कह रहा हूँ। जब से हिन्दुस्तान-पाकिस्तान बने हैं, तभी से सुन रहे हैं कि सरकार दिल्ली के आसपास के सब गाँवों की जमीनें ले लेगी। लेकिन कितने गाँवों की ली हैं?...सरकारी काम ऐसे ही चलते हैं। तुम लोग चिन्ता मत करो।"

"लेकिन पटवारीजी, तहसीलदार अकारन तो आयेगा नहीं! कुछ बात होगी ही जो हाकिम आ रहा है।" मुखिया ने कहा।

"फ़सल की हालत देखने के लिए भी मौक़ा पर आ सकता है। यह भी सुना है कि सरकार अच्छी फ़सल उगाने के लिए किसानों को सुविधाएँ देना चाहती है। तहसीलदार साहब शायद इसी काम से आ रहे होंगे।" पटवारी ने सबकी तरफ़ देखते हुए कहा। फिर उठता हुआ बोला, "आप लोग अपनी ओर से पूरी तैयारी रखें, कहीं दूर न जायें। हाकिम का क्या भरोसा कब आ धमके।"

मुखिया उचककर पटवारी के बराबर आ गया और हाथ जोड़ता हुआ बोला, "पटवारीजी, कुछ तो बताओ—सही बात पल्ले में डालते जाओ।"

"चौधरी, तू ख़ुद अंगरेज के वक्त का सफ़ेदपोश है। तू बता, भरी सभा में सरकारी राज कैसे बता दूँ? अगर कुछ हुआ तो जरूर बताऊँगा।" कहकर पटवारी आगे बढ़ गया।

सब लोग पटवारी के पीछे-पीछे कुछ दूर तक आये। उनके गले ख़ुश्क और दिल बैठे हुए थे। चमकती धूप में भी उन्हें कुछ नज़र नहीं आ रहा था।

"चौधरी, आप जाकर तैयारी करो। क्या पता हाकिम कब आ जाये।" पटवारी ने रुककर कुछ कड़े स्वर में कहा।

मुखिया और अन्य लोग सिर झुकाये अनमने-से वहीं रुक गये। फिर छोटे-छोटे क़दम धीरे-धीरे उठाते हुए यों वापस मुड़े जैसे किसी पाले जवान को किरिया करके लौट रहे हों।

जब सब मुखिया की बैठक में पहुंचे तो वहाँ गाँव के कुछ और लोग और बच्चे भी आकर जमा हो गये थे। स्त्रियाँ घूँघट निकाले दरवाजों की ओट में खुसर-फुसर कर रही थीं। मुखिया ने खाट पर गिरते हुए ज़ोर से जम्हाई ली और भगवान् को याद करता हुआ बोला, "बैठे-बिठाये पता नहीं यह क्या मुसीबत पड़ने लगी है। जब से पटवारी की बात सुनी से हाथ-पाँव सुन हो गये हैं। दिमाग में कुछ आता ही नहीं। चौधरी, तू बता अगर जमीनें सरकार ने ले लीं तो हम कहाँ जायेंगे ? क्या करेंगे ? किस कुएं में छलांग मारेंगे ?" मुखिया ने ताऊ हरीराम से दुख-भरे लहजे में पूछा।

ताऊ ने कोई उत्तर नहीं दिया। गरदन झुकाये पाँव के अँगूठे से ज़मीन कुरेदता रहा। मुखिया ने अपना प्रश्न दोहराया तो मुंह ऊपर उठाते हुए बेबसी के साथ बोला, "चौधरी, मैं क्या जानूँ। जब से यह बात सुनी है मन-प्राण खुश्क हो गये हैं। कुछ नहीं सूझता। भरी दोपहरी में आँखों के आगे अँधेरा छा रहा है।"

"सरकार हमारी जमीनों को लेकर करेगी क्या ? क्या खुद खेती करेगी ?" बंसीलाल बोला।

"हाकिम खेती नहीं करेंगे। वहाँ पंजाबियों के लिए मकान बनायेंगे, दुकानें बनायेंगे। मैं पहले ही कहता था कि सरकार हमारे और हमारे बच्चों के मुंह से रोटी छीनकर इन पंजाबियों को दे रही है, जो अपनी तबाही और बरबादी की फर्जी कहानियाँ सुना-सुनाकर सरकार को दोनों हाथों से लूट रहे हैं।" दुनीचन्द ने हाथ लहराते हुए कहा और फिर उन सबकी ओर देखकर उलाहने के भाव में बोला।

"चौधरी, पंजाबी ने मेरी रोजी पर हाथ मारने की कोशिश की तो आप लोगों ने खुसियाँ मनायीं। मुझे झूठा और उसे सच्चा माना। जिन गलियों में कभी किसी परदेसी की परछाई नहीं पड़ी थी वहीं वह डौंडी पीट-पीटकर कपड़ा बेचता रहा ! उन चौधरानियों से मटक-मटककर बातें करता रहा जिन्होंने कभी घूंघट नहीं उतारा था और गैर आदमी तक आवाज नहीं पहुँचने दी थी।"

सब लोग चुपचाप दुनीचन्द की बातें सुन रहे थे। वह धीरे-धीरे उनके ज़ख़्म कुरेद रहा था। फिर वह ऊँचे स्वर में बोला, "मैंने तो पहले ही कहा था कि पंजाबी तुम्हारे घरों में सेंध लगा रहे हैं और तुम खुद उन्हें राह बता रहे हो। नूं कहूँ कि यह सारी शरारत ही पंजाबी सरदार की है। उसी ने हाकमों को बताया होगा कि दारापुर की जमीन ले लो। बार-बार चक्कर लगाकर सारा भेद जो ले गया था।"

दुनीचन्द बोलता जा रहा था। सब लोग बे-जवाब हुए बैठे थे। पहले तो वह मन ही मन ख़ुश हुआ कि चौधरियों को अपने किये पर पछतावा हो रहा

है। पर जब उनकी चुप्पी लम्बी होती गयी और उधर से कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई तो उसे गुस्सा आने लगा। वह बुदबुदाया, "मुझे तो कोई फरक नहीं पड़ता, मेरी कौन-सी जमीन-जायदाद है जिसे उठाने में दिक्कत होगी। मुझे तो सौदा बेचना है। पंजाबी आ बसेंगे तो उनके पास बेचूंगा।" दुनीचन्द ने उठते हुए उकताहट-भरी आवाज़ में कहा।

दुनीचन्द को किसी ने रोका नहीं। किसी ने मुँह उठाकर उसे जाते हुए देखा नहीं। मुखिया ने एक बार फिर ज़ोर से जम्हाई ली और भगवान् को याद करता हुआ बोला, "अच्छा देश आजाद हुआ ! सरकार पुश्तों से बसे हुए लोगों को उजाड़ने लगी है। बड़े लाट साब ने जब नयी दिल्ली बसायी थी तो मेरे सासुराल का गाँव रायसीना उजड़ा था। उन लोगों ने रिवाड़ी के पास जाकर जमीनें खरीद ली थीं। लेकिन उनके पाँव नहीं जम सके।"

बंसीलाल बोला, "आदमी एक बार उखड़ जाये तो मुश्किल से सँभलता है।"

ये सब लोग बैठक के आँगन में चुपचाप खड़े थे कि गली में किसी लड़के के ज़ोर-ज़ोर से रोने की आवाज़ सुनाई दी।

"कौन रो रहा है ?" बंसीलाल ने पूछा। पहलादसिंह दरवाजे की ओर बढ़ गया। गली में झाँककर उसने आकर हँसते हुए बताया, "दुनिये का लड़का सुखदयाल रोता हुआ भाग रहा है। पीछे-पीछे दुनीचन्द हाथ में जूता उठाये आ रहा है।"

सब लोग कारण जानने के लिए दरवाजे पर आ खड़े हुए। दुनीचन्द ने दौड़कर लड़के को गरदन से पकड़ लिया और हाँफते हुए बोला, "मार-मारकर तेरा मसरा टेढ़ा कर दूँगा।"

उसने लड़के को मारने के लिए जूता उठाया तो बंसीलाल ने लपककर उसका हाथ थाम लिया और उसे पीछे खींचता हुआ कहने लगा, "क्यों मार रहा से छोरे को।"

"पण्डित, छोड़ दे मेरा हाथ। इसका अभी यह हाल है तो बड़ा होकर परमात्मा ही जाने क्या करेगा !"

"क्या हो गया, क्या गुसताखी की है छोरे ने ?" मुखिया ने पूछा।

"चौधरीजी, यह बहुत बिगड़ गया है। बुरी संगत में पड़ गया है। बेड़ा गरक हो इन पंजाबियों का...ये लोग तो किसी के बेटे-बेटी को शरीफ नहीं रहने देंगे।"

"दुनिये, क्या किया है इसने ? कुछ बतावे भी या अपनी धुने है ?" ताऊ ने आग्रह से पूछा।

"चौधरी, जब से यह शकूरबस्ती के स्कूल में भरती हुआ है इसके तौर-

तरीके बदल गये हैं। उस स्कूल में बहुत-से पंजाबी लड़के भी पढ़ें से। यह भी उन बदमाशों की नकल करना चाहे है।" दुनीचन्द ने थूकते हुए कहा।

"क्या किया है इसने ? कुछ बता तो सही।" बंसीलाल ने तुनककर पूछा।

"मुझे कहता है कि पतलून सिलवा दे। स्कूल में बहुत-से लड़के पतलून पहने हैं। कहता है कि उसे पाजामा पहनने में सरम आवे से।" दुनीचन्द ने बहुत गम्भीर होकर कहा।

सब लोग उसकी बात सुनकर खिलखिला पड़े तो वह और भी गम्भीर स्वर में बोला, "चौधरी, आज यह पतलून माँगे है क्योंकि पाजामा पहनकर इसे सरम लगती है। कल को कहेगा कि माँ को भी चण्डी ला दूं क्योंकि पंजाबिनें चण्डी पहनती हैं।" आवेश में आते हुए वह कहता गया, "चौधरी, इन पंजाबियों ने बहुत गन्द फैला दिया है। अपनी इज्जत तो पाकिस्तान में लुटा-पुटा आये हैं। इब हमारा बेड़ा गरक करने पर तुल गये हैं। हेराफेरी, धोखाधड़ी और बेगैरती में इनका कोई जोड़ नहीं। इतने बेसरम लोग मैंने जिन्दगी में कभी नहीं देखे थे। सहर चले जाओ—करोलबाग हो या पहाड़गंज, चाँदनी चौक हो या सदर बाजार, कनाट प्लेस हो या कश्मीरी गेट—पंजाबी साग-भाजी की तरह अपनी बहू-बेटियों की इज्जत बेचें हैं, मण्डी के माल की तरह जवान छोरियों के सौदे करे हैं।" दुनीचन्द ने घृणा से कहा।

"दुनिया, बणियानी जवानी में ही बूढ़ी हो गयी है। तू भी कोई कोमल कली-सी पंजाबिन क्यों नहीं ले आता ?" बंसीलाल ने शरारत से मुसकराते हुए कहा।

सब लोग हँसी से लोटपोट होने लगे तो दुनीचन्द खिसियाना होकर गुस्से से बोला, "बाह्मण, तुम्हें इस वखत मसखरी सूझे है। लेकिन मेरी बात पल्ले बाँध ले कि एक दिन ये पंजाबी हमारी बहू-बेटियों को भी मण्डी का माल बना देंगे।...इनका कोई धरम-इमान नहीं है। हाथ पर हाथ मारकर पैसा उड़ा ले जावे हैं ये। बण्ज-व्यापार इन्होंने बिगाड़ दिया है। खरे-खोटे की पहचान खतम करा दी है।...परसों मैं शहर गया था। पहाड़गंज के चौक में थाने के पास एक पंजाबी रेढ़ी पर लाल साबुन का ढेर लगाकर बेच रहा था। कम्पनी के अँगरेज़ी साबुन की तरह ही रंग, वैसा ही ऊपर कागज, लेकिन कीमत आधी। मैं भी दो दरजन टिकियाँ खरीद लाया। घर आकर उनसे नहाने लगा तो सरीर की चमड़ी उधड़ गयी लेकिन मजाल है झाग बनी हो ! पता नहीं उसमें कौन-सा पत्थर डाला था।"

दुनीचन्द का भाषण सुनकर सब चुप रहे तो उसका साहस बढ़ गया। वह सबको सम्बोधित करता हुआ बोला, "उस दिन पंजाबी सरदार के कहे-कहाये तुम मेरे साथ बिगड़ गये थे लेकिन मैं सच कहूँ हूँ कि हर पंजाबी खोट से भरा हुआ

है। खुद सोचो, अगर इनमें खोट न होता तो मुसलमान इन्हें पाकिस्तान से क्यों निकालते ?..."

"लाला, तू सच कहता है। न पाकिस्तान बनता और न ये पंजाबी यहाँ आते और न सरकार हमारी जमीनें खरीदने के बारे में सोचती।...मनो, जो करमों में लिखा है वह हर हीले मिलेगा—" मुखिया ने एक ठण्डी आह भरी और कमर पर दोनों हाथ रख पीछे मुड़ता हुआ बोला, "क्या पता हाकम कब आ जायें। थोड़ी-मोत तैयारी कर लें।"

मुखिया ने तबेले में काम करते कोडे और रीठे को आवाज़ दी, "ओ छोरयो, चार-छह खाटें बैठक में बिछा दो। रंगदार सूतली खाटें एक तरफ़ बिछाना। बाकी उनके सामने और दायीं और बायीं तरफ।" फिर वह दलेलसिंह से बोला, "काका, जा अन्दर जाकर अपनी माँ से तीन-चार बड़े-बड़े बूटीदार खेस लाकर सूतली खाटों पर बिछा दे। बाकी खाटों पर सफ़ेद खेसियाँ बिछा देना।"

मुखिया कुछ देर चुप रहा। फिर सोचता हुआ बोला, "चोधरी पहनावा कैसे रखें ?"

"हाकिम से अरज-फरियाद करनी है: कपड़ा-लत्ता साधारन ही होना चाहिए।" ताऊ ने सलाह दी।

"नूँ कहूँ, इन्हीं कपड़ों में पेश हुए तो अफसर समझेंगे कि गाँव वालों ने इत्तलाह होने के बावजूद हमारी परवाह नहीं की। पहनावा इतना बढ़िया भी न हो कि हम सब बराती लगें। क्यों सूबेदार ?" बंसीलाल ने अपने सुझाव के अनुमोदन के लिए माड़ सिंह की ओर देखा।

"बंसी ठीक कहे से।" माड़ सिंह ने कहा।

"सूबेदारजी—" मुखिया ने खाट पर शरीर ढीला छोड़कर बैठे माड़ सिंह की ओर देखते हुए पुकारा। सूबेदार सतर्क होकर सीधा बैठता हुआ मुखिया की ओर देखने लगा।

"सूबेदारजी, आपने कई जगें लड़ी हैं। बसरा-बगदाद तक हो आये हो। कई तमगे जीते है। आप फौजी वर्दी पहनकर, सब तमगे छाती पर लगाकर साहब से मिलना। उससे कहना कि सरकार हमें सेवा का यह फल दे रही है ?"

मुखिया का सुझाव सबको पसन्द आया। सूबेदार माड़ सिंह ने कुछ आनाकानी की तो बंसीलाल उसको समझाता हुआ बोला, "सूबेदारजी, तै तो पद सरकारी अहलकार रहे है। तैं फौज के पिनसनिया अफसर हैं। आप बात करेंगे तो उसमें वजन होगा।"

और लोगों ने भी आग्रह किया तो सूबेदार राजी हो गया। सब लोग फिर हाकिम के स्वागत के लिए अपनी-अपनी तैयारी करने को चलने लगे।

"अच्छा चोधरी, हम अभी आते हैं। कोई चादर-खेस चाहिए तो बता दो,

अपने घर से भेज दूँ।" बंसीलाल ने कहा।

"नहीं, सब कुछ है। हाँ, यह बताओ, हाकमों को चाय-पानी तो पूछना ही चाहिए। दूध घर में है। खाने के लिए बर्फी शहर से मँगवा लेते हैं।" मुखिया ने कहा।

"हाँ, अपने बनिये के पास तो पत्थर जैसे सख्त बिस्कुट ही मिलेंगे। जखोरे भेज दो किसी को।" बंसीलाल ने सुझाव दिया।

पहलादसिंह पीछे खड़ा उनकी बातें सुन रहा था। झट बोला, "चाचा, इब जखोरा, किशनगंज या सिराए राहेला जाने की जरूरत नहीं सै। बाबाजी के जोहड़ के मंदिर के पास एक पंजाबी बैठा सै—पटरी पर ही—चाय-पकौड़े, मिठाई बेचे सै।"

"अच्छा! तैंने कब देखा?" मुखिया ने हैरत से पूछा।

"एक दिन उधर गया था, तब देखा था।" पहलादसिंह ने कहा। फिर हँसता हुआ बोला, "चाचा इब तो घर में ही जमुना बहे है।"

"और जमुना की इन्हीं लहरों में हम एक दिन डूब जायेंगे।" दुनीचन्द ने कटाक्ष किया और फिर कहा, "तुम्हारी जमीन में पंजाबी दुकान बनावे, तुम्हारी जगह पर कब्जा करे—तुम्हें खबर न हो! कल को घर में घुस आये तो भी तुम्हें पता नहीं चलेगा!"

"दुनिया, पंजाबी सड़क के किनारे बैठा सै। तैं ने पेट में क्यों मरोड़ उठे सै?"

"आज यह सरकार की जगह घेरे सै, कल को गाँव की जगह पर भी कब्जा करेगा।" दुनीचन्द ने चेतावनी देते हुए कहा।

किसी ने उसकी बात पर ध्यान नहीं दिया। मुखिया सोचकर बोला, "पहलाद, जा दौड़कर सेर-भर बरफी और पकौड़े ले आ। क्या पता हाकम के संग ज्यादा अहलकार हों।"

पहलादसिंह दालान में चला गया और दलीलसिंह से बोला, "दलील, साइकिल दे।"

दलीलसिंह के उत्तर की राह देखे बिना ही उसने साइकिल के ऊपर से कपड़े का बुग उठा दिया और उसे कमर के सहारे खड़ा करके पैसों और थैले का इन्तजार करने लगा।

"सँभालकर चलाना। कहीं टक्कर न मारना," दलीलसिंह ने ताकीद की।

पहलादसिंह गाँव की गली में साइकिल को सावधानी से पकड़े हुए पैदल चलकर गया। लेकिन बड़े रास्ते पर पहुँचते ही वह साइकिल पर सवार हो गया। बार-बार वह साइकिल की घण्टी को टुनटुनाता हुआ कभी इधर से लहराकर निकलता कभी उधर से। साथ में मुँह से वह सीटी भी बजा रहा था।

कुछ ही मिनटों में पहलादसिंह बाबाजी के जोहड़ पर पहुँच गया। सावधानी

से साइकिल खड़ी करके रामदयाल की तरफ़ को बढ़ा। उसे देख रामदयाल उठकर खड़ा हो गया। उसकी सलवार का एक पाँयचा घुटने के ऊपर फँसा हुआ था। उसके सब दाँत नज़र आ रहे थे। हाथ जोड़े हुए उसने आवभगत करते हुए कहा, "आओ चौधरीजी, जी आयाँ नूं।" फिर कुएँ पर गिलास धोते हुए लड़के को डाँटकर बोला, "ओये महावीरा, देख चौधरी साब आये हिन! ओहना दे बैठने लयी जगह साफ़ कर, कपड़ा झाड़ के विछा।"

लड़का मिट्टी के चबूतरे पर से टाट का टुकड़ा उठाकर वहीं झाड़ने लगा तो रामदयाल ने डाँटा "हे, केह कर सी। दखेंदा नहीं चौधरी साब खड़े हिन! परे जा के तप्पड़ झाड़।"

लड़के ने टाट बिछा दिया तो रामदयाल बोला, "चौधरी साहब, बैठो।"

अपने लिए चौधरी का बार-बार सम्बोधन सुनकर और बैठने के लिए इतना जतन देख पहलादसिंह भीतर ही भीतर फूल उठा। उसने टाट पर बैठते हुए बर्फ़ी-बदाने और पकौड़ों के थाल पर नज़र डाली तो जी ललचा गया। उसने होंठों पर जीभ फेरते हुए कहा, "एक सेर बर्फ़ी और एक सेर पकौड़े!"

"चौधरी जी, अभी लो!" रामदयाल ने फुरती से तेल की कड़ाई को अँगीठी पर रखते हुए कहा, "चौधरीजी, इत्थाई बैठ के खो सी या घर ले जा सी?"

"हमारे गाँव में आज हाकम आ रहे हैं।" पहलादसिंह ने कहा।

"चौधरी, कौन-सा गाँव है अपना?"

"दारापुर...वह सामने सड़क के पच्छम में नज़र आवे से।" पहलादसिंह ने उँगली से उधर इशारा किया।

"अच्छा-अच्छा एह, सामने!" रामदयाल तेल की कड़ाई में पौनी घुमा-घुमाकर पकौड़ों के जले टुकड़े बाहर निकालकर एक गन्दे-से डब्बे में फेंकता हुआ बोला, "कौन अफ़सर ओंदा पया है अपने गाँव में?"

"तहसीलदार आ रहा है, अपने अहलकारों के साथ।" गर्व से पहलादसिंह की छाती फूल गयी।

कड़ाई में पकौड़े तले जाने लगे। उनकी सुगन्ध पहलादसिंह के नथुनों में होती हुई दिमाग में पहुँचने लगी। मुँह में पानी भरा आ रहा था। रामदयाल ने भाँपा और खट्टी-मिट्ठी चटनी के साथ दो पकौड़े उसके सामने को बढ़ाता हुआ बड़े इतमीनान से बोला, "जो मेरे हाथ के बने पकौड़े हिक वार चख सी फिर वह कहीं होर जाकर पकौड़े न खो सी—मेरा दावा है।" रामदयाल ने छाती पर हाथ रखकर पहलादसिंह की आँखों में झाँकते हुए ज़ोर के साथ कहा, "ऐसे पकौड़े दिल्ली में मिल जांजन ते आकर मेरे मुँह उप्पर थुक्क देना।"

फिर वह एकदम उदास हो गया और अतीत में डूबी हुई आवाज़ में बोला, "मेरी लौंसा विच हलवाई दी दुकान थई। मेरे पकौड़े बहुत मशहूर थई। डिप्टी

साहब ते जज साहब दे घरां-दफ्तरां मेरे पकौड़ेयां दे विना पार्टियाँ अधूरी समझी जाती थीं। मेरी दुकान दे पकौड़े खाने के लिए लोग दूर-दूर तों चलके आ थी। वड़े-वड़े मरब्बों के मालिक, रईस और सरदार ऊँठ भेज के पकौड़े मँगवादे सी।"

रामदयाल की आँखें डबडबा आयीं, "सब कुछ छूट गया वहाँ। अपनी आँखों से मकान लुटता देखा...भाई का खून होता देखा...जब यहाँ पहुँचे तो तन पर तीन कपड़े भी नहीं थे।"

"जो तुम्हें मारने आये तैंने उनको क्यों न मारा?" पहलादसिंह ने उसकी ओर देखकर कहा, "इतना तेरा डीलडौल से। राना झोटे की तरह पला से।"

"लड़े क्यों नहीं," रामदयाल ने फ़ौरन कहा, जैसे उसके आत्म-सम्मान को ठेस लगी हो, वह ऊँ लड़े। मैं हिक मार सी ते डू ढेह सी। पर ओ लख सी असाँ हजार सी!" रामदयाल ने दायीं टाँग से सलवार उठाकर एक जख़्म का निशान दिखाते हुए कहा, "इत्थाईं वरछी लगी थी।"

रामदयाल कभी उत्तेजित और कभी उदास स्वर में अपनी कहानी सुना रहा था। लेकिन पहलादसिंह का ध्यान उसकी वातों की ओर कम और पकौड़ों की ओर अधिक था। वह लालच भरी नज़रों से पकौड़ों को देख रहा था। पकौड़े लिफ़ाफ़े में डालकर रामदयाल तोलने लगा तो पहलादसिंह वोला, "देख ले कच्चे न रह गये हों।"

"नहीं चौधरीजी, मैंने खूब करारे किये हैं। यकीन नयीं ते चखके देख लौ—" रामदयाल ने लिफ़ाफ़े में से एक पकौड़ा निकाला और चटनी में भिगोकर पहलादसिंह के हाथ में थमा दिया। वह चटखारे लेकर पकौड़ा खाने लगा। रामदयाल को वर्फ़ी तोलते देख उसने रौब से पूछा, "वर्फ़ी ताजी है ना? हाकम के सामने रखनी है।"

"एकदम ताजा।" रामदयाल ने वर्फ़ी की एक टुकड़ी उसकी ओर बढ़ाते हुए कहा, "मुँह में रखते ही गले में उतर जाती है। आज सवेरे ही थाल जमाया था।"

पहलादसिंह को वर्फ़ी सचमुच बहुत स्वादिष्ट लगी। वह ललचायी आँखों वर्फ़ी के थाल की ओर देखता हुआ वोला, "लाला, थाल में पड़ी वर्फ़ी कितने की है?"

"यही आठ-दस रुपये की। कहो, सारी तोल दूँ?"

"नहीं रहने दो।" पहलादसिंह ने भरी हुई आवाज़ में कहा।

"चौधरी, मन है सी ते घिन वंजो।" रामदयाल ने पहलादसिंह के जी को भाँपते हुए कहा।

"जेब में पैसे नहीं सैं।" पहलादसिंह हाथ झटकते हुए वोला।

"चौधरी, पैसे आ जा सन। आप कोई पराये नहीं हो।" रामदयाल ने अपनापन जताते हुए कहा। फिर मौज-मस्ती के लहजे में वोला, "खो सी, पी सी, मौज उड़ा सी। जमा-जोड़ने में कुझ नहीं रखा। खोंदा-पींदा मर सी ते लख वार मर

सी, पर भुक्खा न मर सी। पाकिस्तान विच महल-माड़ियाँ पये छोड आये हिन... अभी येह घट सी। पैसे दी फिकर न करो। सद्दरां पूरी करो। कितनी तोल दूं?" रामदयाल ने तराजू उठाते हुए कहा।

"फेर दे से चार आने की बर्फी और दो आने के पकोड़े।" पहलादसिंह ने हिम्मत करके कहा, और फिर बोला, "मेरे पास नकद पैसे नहीं सं।"

"मालिको...मैं कोई पैसे मंग सी।" रामदयाल ने हाथ जोड़ते हुए कहा, "नगद पैसे नहीं ते अनाज तो हो सी। साडी रजा त्वाडी रजा विच है, चौधरी साहब। पर हे कि गल हाई?" रामदयाल ने पहलादसिंह की ओर देखते हुए पूछा, "खाण बैठे हिन ते रज के खाओ। चार आने दे बर्फी ते डू आने दे पकोड़े नाल केह बणसी। हिक रुपये दी बर्फी ते अठ आने दे पकोड़े ते खाओ न? हाथी कू चिड़ी दी खुराक से केह बणसी?" रामदयाल खिलखिलाकर हँस दिया, "चौधरीजी, तेरी उम्र में शर्त लगा के डू सेर बर्फी खादी।" ऊप्पर तों घा सेर दूध पी घी सी! पर डकार नहीं लया सी! नाल डू रुपये भी जित्ते सी।"

बर्फी के बाद पहलादसिंह ने पकोड़े खाये। कागज़ पर रहे पकोड़ों के छोटे-छोटे टुकड़ों को भी मुँह में समेटकर वह उठ खड़ा हुआ। रामदयाल ने सेर-भर बर्फी और पकोड़ों के पैसे लेकर जेब में डाले और फिर पहलादसिंह की ओर झुकता हुआ गोपनीय स्वर में बोला, "चौधरी, मेरे पास नशे-पानी दा भी परबन्द है। ऐसी चीज है कि बिलायती विस्की कू भुल जा सो। किसे होर नाल बात न करना। मैं हे चीज अपने खास-खास गाहकों कू ही देना हे।"

पक्की सड़क पर आकर पहलादसिंह साइकिल पर सवार हो गया। उसके मुँह में अभी तक बर्फी और पकोड़े का जायका ताजा था और थाल अभी तक उसकी आँखों के सामने घूम रहे थे। वह सोच रहा था कि इतनी स्वादिष्ट बर्फी के दो-तीन थाल तो वह भी आसानी से खा सकता है। उसने मन ही मन फैसला किया कि फ़सल निकलने पर वह एक बार जी-भरकर पकोड़े और बर्फी जरूर खायेगा।

मुखिया की बैठक में वापस पहुँचा तो गाँव के लगभग सभी मर्द वहाँ जमा थे। मुखिया ने खद्दर की पूरी बाँह की कमीज के ऊपर आधी बाँह की रेशमी कमीज पहन रखी थी। उसपर हजारों सिलवटें थीं। जैसे अभी-अभी मड़ोली से निकाली हो। रेशमी कमीज के ऊपर जैकट थी। सिर पर पगड़ी, पाँव में आने-जाने के लिए अलग से सँभालकर रखी हुई बिलायती गुरगाबी थी। बसीलाल और ताऊ भी साफ़ कपड़े पहनकर बैठे थे। सूबेदार माडूसिंह सबसे अलग नज़र आ रहा था। वह मूँछों के सिरों को ऊँचा रखने के लिए उन्हें बार-बार मरोड़ रहा था।

उन सबके मुकाबले में अपने मैले कपड़े देख पहलादसिंह को बड़ी शर्म महसूस

हुई। उसने सोचा कि मुखिया-ताऊ और बंसी की बनिस्वत वह छोटा मालिक हो सही, लेकिन मालिक तो है। दलीलसिंह को थैला देकर वह अपने घर की ओर दौड़ गया।

पहलादसिंह इतनी जल्दी में था कि उसने रास्ते में कीचड़ की छपड़ी तक का ध्यान नहीं किया। दोनों पाँव छपड़ी में पड़े तो घुटनों तक उसकी टाँगें सन गयीं। लेकिन वह पैरों को धरती पर थप-थप करता हुआ घर की ओर भागता ही गया।

अंगूरी खाट पर लेटी काकू को थपक-थपककर सुलाने की कोशिश कर रही थी। पहलादसिंह को देख वह हड़बड़ाकर उठी और उसके बराबर खड़ी होकर बोली, "सुना तूने?...कहते हैं सरकार हमारी जमीनें लेवे है...आज हाकम हमारे गाँव मौका देखने आवे है?"

"हाँ, सब सुना है। मैं वहीं था। अभी-अभी हाकम के सामने रखने के लिए बर्फी और पकौड़े लेकर आया हूँ।...रोटी त्यार है क्या?" पहलादसिंह ने पूछा।

"हाँ, त्यार से।" अंगूरी ने तीखे स्वर में कहा; फिर बोली, "अगर जमीनें सरकार ने ले लीं तो हम कहाँ जायेंगे?"

"तू रोटी दे। सरकार जमीनें लेगी तो हम खुद मामला सँभाल लेंगे। तू इतनी चिन्ता न कर।"

"पहले नहा तो! टाँगों पर गारे का लेप कहाँ से करके आये हो?" अंगूरी ने पूछा।

"कीचड़ में पाँव पड़ गया था।" कहकर पहलादसिंह बालटी उठाने के लिए लपका तो रस्सी उसके पाँव में उलझ गयी। वह मुँह के बल गिरते-गिरते बचा। अंगूरी ने घबराकर उसकी ओर देखा और तुनककर बोली, "तुम्हें केह हो गया से? पिंजरे में फँसे चूहे की तरह फुदक रहे हो।"

"तुझे मालूम नहीं गाँव में हाकम आ रहा से। जमीनों के मालिकों से मिलने। तू शताबी से मेरी किनारीवाली धोती और जूती निकाल दे। साफा भी निकाल दे और कुरता भी। पंचायत में बैठना है, कपड़ा तो ठीक ढंग का होना चाहिए।" पहलादसिंह ने बाल्टी उठाकर भागते हुए कहा।

उसने जल्दी-जल्दी अपने ऊपर दो बालटी पानी फेंका और घर की ओर भाग आया। घुटनों पर अब भी चिकनी मिट्टी पुती हुई थी। वह उचक-उचककर अपने कपड़े उठाने लगा। उसका हाव-भाव देख अंगूरी बोली, "पूँछ में आग लगे हनुमानजी की तरह फलाँग क्यों रहा से? आराम से सहज-सहज कपड़े पहन। तेरे बिना पंचायत सूनी नहीं रहेगी।"

"तू रोटी ला।" कहकर पहलादसिंह धड़ाम से खाट की पाँयती पर बैठा तो उसकी पट्टी तड़ाक से टूट गयी। उसपर सोया काकू हड़बड़ाकर उठा और जोर-

ज़ोर से रोने लगा।

अंगूरी ने रोटियों के ऊपर ही कद्दू की सब्जी रखी और उन्हें ज़मीन पर ही रखकर बच्चे को सँभालने के लिए दौड़ी।

पहलादसिंह टूटी हुई खाट में फँसा हँस रहा था। लेकिन अंगूरी को गुस्से में देख बोला, "तू चिन्ता न कर, साम तक मँजूत की लकड़ी की नयी पट्टी डाल दूंगा—" कहता हुआ वह रोटी उठाने के लिए जैसे ही आगे बढ़ा कि पाँव के धक्के से लस्सी का कटोरा ही उलट गया।

लस्सी सामने को बहती हुई एक जगह पर इकट्ठी हो गयी। यह देख अंगूरी बच्चे का रोना-चीखना सब भूल गयी और आग बबूला होकर बोली, "तू ये क्या कर रहा है? साम को नहाकर आया है। घुटनों पर मिट्टी पुती से। कुरता उलटा पहना से। खाट की पट्टी तोड़ी से। अब दाँत होते हुए भी लस्सी के कटोरे को ठोकर मारे से!"

पहलादसिंह ने कोई उत्तर नहीं दिया। रोटी के बड़े-बड़े टुकड़े पानी के सहारे गले के नीचे उतारता रहा। पर जब अंगूरी की बड़बड़ चलती ही रही तो उसने खीजकर कहा, "यह मेरा जूता देख रही से कि नहीं? दोहरे चरस का से। इसमें राना झोटे की खाल लगी से। जहाँ पड़ेगा वहीं हाड़ सन हो जावेगा।...इतनी देर से तेरी चपड़-चपड़ सुन रहा हूँ। तू मुझे क्या समझे है! मैं तेरा मर्द हूँ।" पहलादसिंह ने रोटी के अन्तिम ग्रास को बिना चबाये ही हलक से नीचे उतार लिया और कोने में पड़ी अपनी लाठी उठाकर फूँ-फूँ करता हुआ चला गया।

सात—

दिन ढल गया था लेकिन तहसीलदार नहीं पहुँचा। लोग इन्तजार करते-करते थक गये थे। उकताहट के मारे वे खाटों पर उलटे-सीधे पड़े थे। किसी का सिर पाँयते में फँसा था तो किसी के मुँह से साँस के साथ थूक के छोटे-छोटे बबूले निकलकर गाल पर को बह चले थे। कोई-कोई ऊँघते-ऊँघते हड़बड़ा उठते और घबड़ाकर एक दूसरे की ओर देखते हुए पूछते, "आया हाकिम?"

"कहाँ आया है?" कोई एक उत्तर देता और वे फिर ऊँघने लगते। केवल सूबेदार माड़सिंह सतर्क बैठा था। वह कभी मूँछों की नोकों को खड़ा रखने के लिए उन्हें मरोड़ने लगता और कभी सीने पर बायीं ओर सजे तमगों को देख बसरे

और बग़दाद के मोरचों की यादों में खो जाता। सामने के पेड़ों की परछाइयाँ काफ़ी लम्बी हो गयी थीं। ताऊ ने खाट से उठकर अपनी ढीली धोती को कसकर बाँधा और पगड़ी को सिर पर ठीक से जमाकर जम्हाई ली। फिर मुखिया की तरफ़ मुंह करके बोला, "सारा दिन खराब हो गया। हाकिम को नहीं आना था तो खबर करा देता।"

ताऊ की आवाज़ सुनकर मुखिया चौकन्ना हुआ और जैकट पर भिनभिनाती मक्खियों को उड़ाता हुआ बोला, "हाकमों की राम भली। मर्जी के बन्दे सैं। हुकम के मालिक सैं। उनके आगे क्या जोर से। पता नहीं आवे भी कि नहीं।"

ताऊ और मुखिया की बातचीत सुनकर और लोग भी उठ बैठे और अपने-अपने कपड़े-लत्ते दुरुस्त करके ठीक से बैठ गये। बंसीलाल पांव में जूता घसीटता हुआ बोला, "चौधरी, नूं कहूँ किसी आदमी को बड़ी सड़क पर बिठा दो। हाकम के आते ही खबर कर दे। हम उसे आपकी हवेली लिवा लाने के लिए गांव के बाहर पहुँच जायेंगे।"

"बंसी, तू ठीक ही कहे। लेकिन जायेगा कौन? फिर यह भी पता नहीं हाकम घोड़ी पर आवे से या किसी दूसरी सवारी पर।" मुखिया ने सोचते हुए कहा।

मगर उसने दो आदमियों को बाहर सड़क पर भेज दिया और उन्हें ताकीद कर दी कि हाकम को देखते ही फ़ौरन ख़बर कर दें। मुखिया, ताऊ, बंसीलाल, दुनीचन्द और बाक़ी लोग अलसाये-से बैठे थे लेकिन ज़रा कहीं आहट होने पर भी चौंक उठते और आँखें फाड़-फाड़कर दरवाज़े की तरफ़ देखने लगते।

दिलभरी ने दाने भूनने के लिए भट्ठी गरम कर दी थी। थानों पर बँधी भैंसों ने डकराते हुए चक्कर काटने शुरू कर दिये थे ताकि मालिक दूध दोह लें। मुखिया की हवेली की बैठक के पिछले दरवाज़े की परछाईं दालान तक पहुँच गयी थी। सारा गांव सुई की नोक पर खड़ा था। मगर तहसीलदार के आने का कहीं कोई निशान तक नहीं था। वहाँ जितने भी लोग जमा थे उनमें से सभी तो सारे दिन राह तकते और तरह-तरह के भय और आशा-निराशा के झकोलों में गिरते-पड़ते एकदम जैसे टूट आये थे। सभी अब समझने लगे कि हाकिम अब आज तो आता नहीं।

"पटवारी भी कमाल का आदमी है! हमें तो यों कहा जैसे हाकम की सवारी गांव से बाहर खड़ी हो। सारा दिन बिरथा गया। परेसानी अलग हुई।" बंसीलाल ने कहा।

"तेरी बात ठीक सै लेकिन चारा क्या है? हम हाकम के हुकम से बँधे बैठे हैं, हाकम नहीं।" मुखिया ने बंसीलाल को समझाते हुए कहा। "तू मेरी तरफ देख। मैं पांच-सात रुपये भी खर्च कर चुका हूँ।"

वे बातों में लगे थे कि गली में कई बच्चों के दौड़ते हुए आने की आवाज़ सुनाई दी। मुखिया, साऊ, बनीलाल और अन्य लोग हड़बड़ाकर दरवाज़े की ओर बढ़े। पहलादसिंह हाँफता हुआ बोला, "गाँव की तरफ़ को एक मोटर मुड़ी है। हो न हो हाकम इसी में हो।"

वे सब जूते घसीटते हुए जल्दी-जल्दी बाहर निकले और नजफ़गढ़ रोड की ओर दौड़ गये। जब वे गाँव के बाहर पहुँचे तो मोटर रुक चुकी थी। उसकी उड़ायी हुई धूल अभी तक चारों ओर हवा में भरी थी। कार के पास पटवारी और गिर्दावर खड़े थे और उन्होंने अपनी साईकिलें खेत की मेंड़ पर लिटा दी थीं। गाँव-भर के बच्चे गली के मुहाने पर खड़े उत्सुकता से कार की ओर देख रहे थे। स्त्रियाँ घूँघट निकाले छतों पर दुबकी बैठी थीं। दो-चार चौधरिनें गली की नुक्कड़ से सटी कार को देख रही थीं।

गिर्दावर ने आगे बढ़कर कार का दरवाज़ा खोला। तहसीलदार हरफूलसिंह बाहर निकला तो गिर्दावर दौलतराम और पटवारी नन्दलाल दोनों ने झुककर बन्दगी की। तहसीलदार के पीछे-पीछे सदर क़ानूनगो और तहसीलदार का चोबदार बाहर आये।

इतनी देर में मुखिया और बाक़ी अन्य लोग भी वहाँ पहुँच गये और गरदनें झुकाये हाथ जोड़कर खड़े हो गये। गिर्दावर दौलतराम ने मुखिया को आवाज़ देकर अपने पास बुलाया और उसे तहसीलदार के सामने पेश करता हुआ बोला, "हजूर, यह गाँव का मुखिया चौधरी परतापसिंह है।"

मुखिया ने नीचे तक झुककर बन्दगी की, जिसे तहसीलदार ने ज़रा-सा सिर हिलाकर क़बूल किया।

सूबेदार माड़ूसिंह ने आगे बढ़कर तहसीलदार को खटाक से सैल्यूट किया। तहसीलदार ने एक नज़र में सूबेदार माड़ूसिंह की छाती पर लगे तमग़ों को देखा। फिर गिर्दावर की ओर मुड़ता हुआ बोला, "नक्शे और गोशवारे कहाँ हैं?"

गिर्दावर ने पटवारी की ओर देखा। उसने मुँडेर पर रखी खतौनी से फ़र्दें-नक्शे और गोशवारे निकालकर दोनों हाथों में तहसीलदार को पेश किये। तहसीलदार ने उन्हें कार की बोनेट पर फैला दिया और सदर क़ानूनगो से कहा, "ज़मीन के फ़र्द नम्बर और हद्दे-अरबा बयान करो।"

सदर क़ानूनगो आगे बढ़कर गोशवारे में खेतों के नम्बर बताकर हद्दे-अरबा बताने लगा तो तहसीलदार ने कहा कि मौक़े पर चलते हैं। सदर क़ानूनगो ने गोशवारे वैसे ही उठा लिये।

गिर्दावर का इशारा पाकर मुखिया आगे बढ़ा और हाथ जोड़कर बड़ी विनय के साथ बोला, "हजूर माई-बाप हैं। गरीबखाने पर चलकर कुछ जलपान कर लें। काम-धन्धा बाद में हो जायेगा।"

"मुखियाजी, जलपान बाद में देखेंगे। पहले, जिस काम से आये हैं, वह कर लें।" तहसीलदार यह कहकर आगे बढ़ गया।

"ओ छोरे, देखना लौंडे मोटर को दिक न करें।" ताऊ दूर खड़े बच्चों को ऊँची आवाज़ में डाँटता हुआ बोला, "देखो, कोई मोटर के पास आया तो उसका सिर दोनों कानों के बीच में कर दूँगा।"

जब मर्द लोग खेतों में पहुँच गये तो स्त्रियाँ और बच्चे भी उनके पीछे चल पड़े। एक खेत की मेंड़ पर वे रुक गये। पटवारी और मुखिया ने गोशवारे फैलाकर अपने हाथों में थाम लिये। गिर्दावर नक़्शा पढ़कर तहसीलदार को खेत दिखा रहा था।

"कुल कितने बीघे ज़मीन है गाँव की ?" तहसीलदार ने पूछा।

"जनाब, कोई अठारह सौ पैंतीस बीघे।"

तहसीलदार ने इधर-उधर नज़रें दौड़ाकर ज़मीन का निरीक्षण किया और अपनी छड़ी से ज़मीन की सख्ती का अनुमान लगाता हुआ बोला, "ज़मीन ऊँची और हमवार है।...क्यों चौधरी, इस ज़मीन में फ़सल कैसी होती है ?" तहसीलदार ने मुखिया की ओर घूमते हुए पूछा।

"हजूर, अच्छी जमीन है। दो-फसली है। गेहूँ की फसल ज्यादा अच्छी होती है। बाकी मकई-बाजरा की फसल सावन-भादों लगने पर है। बारिश कम हो तो भी खराब, ज्यादा हो तो भी खराब।...बाकी हजूर, इसी जमीन के सहारे बैठे हैं। सबकी पुश्तैनी जायदाद है।" मुखिया ने हाथ बाँधे हुए कहा।

तहसीलदार ने सदर क़ानूनगो की ओर मुड़ते हुए पूछा, "ज़मीन का दूसरा टुकड़ा कहाँ है ?"

"जनाब, वह सामने।" क़ानूनगो ने मुड़ते हुए इशारा किया। "वह जहाँ कीकर के पेड़ हैं। वह ज़मीन भी ऊँची है। सड़क के बराबर ही है।"

"हूँ, वह कितने बीघे है ?"

"जनाब, कोई पाँच सौ तीस बीघे। ज्यादा सड़क के पार है।"

"इसी गाँव की है या...?"

"जनाब, सब इसी गाँव की है।"

"हूँ...।" तहसीलदार ने एक बार फिर जमीन पर नज़र दौड़ायी और तेज़ क़दम उठाता हुआ आगे बढ़ गया। और सब लोग दुलकी चाल से उसके पीछे-पीछे दौड़ रहे थे।

"हाकिम तो बरड़् बैल की तरह भागे हैं।" ताऊ ने माथे से पसीना पोंछते हुए कहा।

"ताऊ हाकिम सै। लोगों से न्यारा ही होवे है। गधी तहसील घूम आये तो अकड़कर चले है। बात-बेबात दुलत्ती झाड़ै है। यह तो आप तहसीलदार है।"

उत्तर में बंसीलाल फुसफुसाया।

तहसीलदार कार के पास आकर रुक गया। फिर लोगों की ओर घूमता हुआ बोला, "आपको शायद मालूम हो कि सरकार ने इस गाँव की कुछ जमीन ऐक्वायर करने का फ़ैसला किया है। मौक़ा और मार्केट रेट के मुताबिक़ हर मालिक को मुआवज़ा मिलेगा।"

तहसीलदार की बात सुनकर गाँव के लोगों पर जैसे वज्रपात हुआ। वे गुमसुम खड़े रह गये। सब लोग मुखिया की ओर देख रहे थे। लेकिन उसके मुँह से बात नहीं निकल रही थी। ताऊ ने उसे बाँह से पकड़कर आगे धकेलते हुए कहा, "तू गाँव का मुखिया सै। जा, हाकिम से बात कर—क्यों हमारी जमीनें ले रहा है?"

मुखिया एक हाथ में धोती थामे लपककर तहसीलदार के पास आकर बोला, "हजूर माई-बाप हैं। मैं आपके पाँव पड़ता हूँ।" मुखिया ने हाथ अपनी पगड़ी की ओर उठाते हुए कहा।

"ना-ना चौधरी यह क्या कर रहे हो?" तहसीलदार ऊँचे स्वर में बोला।

"हजूर, हम गरीब लोग हैं। हमारी जमीनें चली गयीं तो हम मर जायेंगे। हमें खेती के बिना और कोई धन्धा भी नहीं आता। छोटे-छोटे बच्चों को लेकर कहाँ जायेंगे? हजूर, हम पर दया करो। हम तो हमेशा से सरकार के नमक-हलाल रहे हैं।"

तहसीलदार ने तेज निगाह से मुखिया की ओर देखा और चिड़चिड़ी आवाज में बोला, "सरकार मुफ्त जमीन नहीं लेगी, पैसे देगी।"

"हमें पैसा नहीं चाहिए।" मुखिया ने गिड़गिड़ाते हुए कहा।

तहसीलदार को कड़े पड़ते देखकर गिर्दावर तुनककर बोला, "मुखियाजी, हाकिम से बहस नहीं करते, तुम्हें जानना चाहिए।"

मुखिया का मुँह उतर गया। वह जहाँ का तहाँ खड़ा रह गया। गिर्दावर ने कार का दरवाजा खोल दिया। तहसीलदार एक पाँव मोटर में रखकर उनकी ओर मुड़ता हुआ रोब से बोला, "यह फसल काट लो। अगली फ़सल की बुआई मत करना।"

तहसीलदार के बैठ जाने के बाद अन्य अहलकार भी कार में जा बैठे। कार जब चली तो मुखिया आदि सभी लोगों ने सिर झुका दिये। सूबेदार माडूसिंह ने सैल्यूट दिया। कार अपने पीछे धूल के बादल उड़ाती हुई नजफ़गढ़ रोड की ओर मुड़ गयी। कुछ देर सब लोग जड़वत् खड़े धूल के उन बादलों को देखते रहे और कार की ऊँची-नीची होती घूँ-घूँ को सुनते रहे।

ताऊ ने खिन्न स्वर में कहा, "हाकिम आया और हमारे सिर में धूल डाल-कर चला गया।"

"देखो, किसी से कोई बात नहीं की।" बंसीलाल बोला। फिर सूबेदार माड़ूसिंह की तरफ़ देखता हुआ कहने लगा, "कम से कम सूबेदार के तमगों का ही ख्याल करता—दो बार एड़ी से एड़ी बजाकर सैल्यूट दिया ! लेकिन हाकिम ने बिल्कुल ध्यान नहीं दिया।"

"यह देसी अफ़सर था," सूबेदार माड़ूसिंह ने अजीब-सा मुँह बनाकर कहा, "अगर अँगरेज़ अफ़सर होता तो देखते ही सीधा मेरे पास आता, हाथ मिलाता और साब कहकर बुलाता और पूरे ध्यान से मेरी बात सुनता।" सूबेदार माड़ूसिंह की आवाज़ तीखी हो आयी थी।

उसकी बात सुनकर सब चुप हो गये। फिर उसने गिर्दावर और पटवारी की ओर इशारा करते हुए कहा, "ये भी तो सरकारी अहलकार हैं। इनसे पूछो माजरा क्या है ? सरकार क्या चाहती है ?"

मुखिया और अन्य लोगों ने गिर्दावर और पटवारी को घेर लिया। मुखिया दोनों के हाथ पकड़ता हुआ बोला, "गरदावरजी, हमारे साथ गाँव चलो। पटवारीजी, आप भी चलो। हमें समझाओ ये क्या होने वाला है।" दुख-भरी आवाज़ में उसने आगे कहा, "घर में जवान मौत हो जाये तो आदमी रो-धोकर सबर कर लेवे। यह सोचकर मन को शान्त कर ले है कि भगवान ने अपनी दी हुई चीज वापस ले ली : लेकिन हमारी जमीन हमसे छीनकर किसी और के काम में लायी जाये, ये हमारी समझ से बाहर सै।"

गिर्दावर और पटवारी ने एक-दूसरे की ओर देखा। आँखों ही आँखों कुछ फ़ैसला करके गिर्दावर बोला, "अच्छा चौधरी, अगर इतना ही मजबूर करते हो तो चलते हैं। लेकिन ज़्यादा देर रुकेंगे नहीं। एक तो वैसे ही अमावस के दिन हैं, दूसरे मौसम भी ठीक नहीं है, फिर तेरे इलाक़े में चोर-उचक्के और जंगली जानवर बहुत बढ़ गये हैं। परसों तातारपुर में लकड़बग्घा एक कठड़े को थान से उठाकर ले गया।" गिर्दावर ने कहा।

"हाँ गरदावरजी, पंजाबी नहीं आये थे तो यही इलाका स्वर्ग था। न चोरी थी न डकैती। न जंगली जनौर थे। पंजाबी आ गये तो यही स्वर्ग नरक बन गया से।" दुनीचन्द बोला।

धीरे-धीरे चलते हुए वे मुखिया की बैठक में पहुँच गये। ढोरों को पानी-सानी देने का वक़्त हो आया था। सब कोई एक-एक क़रके चले और वहाँ सिर्फ़ गिर्दावर और पटवारी रह गये तो मुखिया ने अपने लड़के को आवाज़ देकर बालटी में गरम-गरम दूध और गिलास लाने के लिए कहा।

गिर्दावर खाट से उठता हुआ बोला, "ना मुखियाजी, दूध-ऊध रहने दो। पीने की इच्छा नहीं सै।"

"फिर क्या पियोगे ?" मुखिया ने खुलेपन से पूछा।

"क्यों पटवारीजी, क्या पियोगे...?" गिर्दावर मुसकराया।

"गिर्दावरजी, जो जी चाहे पियो। आप इस वक़्त दारापुर के मुखिया, चौधरी परतापसिंह की बैठक में बैठे हैं। यहाँ किसी चीज़ की कमी नहीं।..." पटवारी नन्दलाल ने आँख मचकाते हुए कहा।

"बहुत थक गया हूँ आज पटवारीजी," गिर्दावर पिण्डलियों को दबाता हुआ बोला, "कहीं इस वक्त पाव-आध पाव पीने को मिल जाये तो थकान का इलाज हो जाये।"

"हाँ-हाँ, पाव-आध पाव क्यों, जी भरकर पियो और ताज़ा-ताज़ा पका मुर्ग खाओ—यहाँ किस चीज़ की कमी है गिर्दावरजी...आप किसी ब्राह्मण की झोंपड़िया में नहीं, चौधरी परतापसिंह की बैठक में मेहमान हैं...!" पटवारी ने गर्व से कहा।

"पटवारीजी, यह मत कहो कि ब्राह्मण पीते नहीं।...कलयुगी ब्राह्मण तो चण्डाल को भी मात करे से।...अपने चौधरी रणधीरसिंह सबजज साहब का अहलमद है न : पण्डत गोबिन्दराम—" गिर्दावर ने कहा।

"हाँ, इधर नांगलोई के पास ही कहीं गाँव से उसका।" पटवारी ने बताया।

"हाँ, वही—ऊँचा ब्राह्मण है : भारद्वाज।...उसका बाप बहुत अच्छा जोतिश लगाता था। साधू आदमी था, बहुत पूजापाठ करता था...।" गिर्दावर ने बताया। फिर रुककर बोला, "वह बम्बे (हैण्ड-पाइप) का पानी नहीं पीता था। क्योंकि उसमें चमड़े की बोकी होसे।...उसीका पोता, इस गोबिन्दराम का बड़ा लड़का, शराब पिये हुए काज़ बाज़ार में एक कोठे पर पकड़ा गया था। गोबिन्दराम बेचारा शर्म के मारे छुट्टी लेकर हरिद्वार जा बैठा।"

"गरदावरजी, कलयुग में जो भी अनर्थ हो सो थोड़ा। सबने अपना पुरखी धरम-करम तियाग दिया से।...यही देख लो, सरकार हमारी ज़मीनें ले रही है। हमें उजाड़कर दूसरों को बसाना चाहे से।" मुखिया ने दुखी स्वर में कहा।

पटवारी ने बात को ख़त्म करने के इरादे से कहा, "पाप बढ़ेगा तभी परलय आयेगा।" फिर मुखिया की तरफ़ देखता हुआ बोला, "गिर्दावरजी की थकान दूर करने का परबन्ध करना चाहिए।"

मुखिया कुछ सोच में पड़ा बोला, "इस बखत कहाँ मिलेगी! घर में तो है नहीं, आदमी भेजना पड़ेगा। ठेके की तो नजफगढ़ मिलेगी या फिर दिल्ली।"

बाहर ही खोरी पर बैठा पहलादसिंह मुखिया के बेटे दलीलसिंह के साथ घुसर-पुसर कर रहा था। शराब का नाम सुनते ही उसके कान चौकन्ने हुए। खोरी से उतरकर वह भीतर आया और मुखिया से बोला, "बाबाजी के जौहड़ के पास पंजाबी सराब भी रखे से। मैं हाकिम के लिए बर्फी और पकौड़े लेने गया

था तो उसने आप ही मुझे बताया था। कहता था विलैती से भी अच्छी सै। डेढ़ रुपये की बोतल बता रहा था।"

"ले चौधरी, इब तो घर में ही गंगा बह रही हैं।" पटवारी ने चहकते हुए कहा।

मुखिया से पैसे लेकर पहलादसिंह चला गया। पटवारी अपने घुटनों को थपथपाता हुआ बोला, "चौधरी, जो माल तहसीलदार साहब के लिए मँगवाया था वही ले आ...उसका सवाद ही देख लें। सवेरे से सिर्फ़ मिट्टी फाँकी है। मुँह में उसी का सवाद भरा सै।"

मुखिया ने दोनों लिफ़ाफ़े उनके सामने रख दिये। गिर्दावर और पटवारी ने बर्फ़ी की दो-दो टुकड़ियाँ इकट्ठी मुँह में रखीं। स्वाद महसूस करते हुए पटवारी बोला, "चौधरी नूं कहूँ—पंजाबी में लाख ऐब हों लेकिन एक बात कहूँगा कि भगवान की तरह उसके भण्डार में भी हर चीज मिलती है।" फिर बर्फ़ी के लिफ़ाफ़े की तरफ़ को हाथ बढ़ाते हुए कहा, "क्या बर्फ़ी बनायी सै! चांदनी चौक में भी इतनी बढ़िया नहीं मिलेगी।"

गिर्दावर और पटवारी स्वाद देखते-देखते सारी बर्फ़ी खा गये। पकौड़ों की बारी आयी तो खाते हुए बार-बार दरवाज़े की तरफ़ देखने लगते। आधे रह गये तो पटवारी बोला, "पता नहीं छोरा कहाँ अटका रह गया से।" फिर लिफ़ाफ़े का मुँह मरोड़ते हुए गिर्दावर से कहा, "इब पउए के साथ। मुँह सलूना रहेगा।"

मुखिया अपने विचारों में खोया हुआ था। जमीन छिनने की बात को लेकर वह जितना ही सोचता था उतनी ही उसकी परेशानी बढ़ रही थी। उसके मन में डर की हूक-सी उठी तो गिर्दावर की ओर सहमती-सी नज़रों से देखते हुए उसने पूछा, "गरदावरजी, क्या सरकार सचमुच हमारी जमीनें लें लेगी?"

"चौधरीजी, पटवारी ज्यादा जानता है। मैं तो यूँ ही साथ चला आया था—यह सोचकर कि अफ़सर आ रहा है: शक्ल दिखानी चाहिए।" गिर्दावर ने कहा।

मुखिया ने पटवारी से पूछा तो वह बड़े रूखेपन के साथ बोला, "मुखियाजी, आपको बताया था कि यह मामला अभी सरकारी राज़ है। जब बात खुलेगी तो सबसे पहले आपको ही बताऊँगा।"

मुखिया और अधिक उदास हो गया। गिर्दावर उसे समझाता हुआ बोला, "चौधरी, चिन्ता न कर। पटवारीजी को खुश रखना। पहले से भी ज्यादा फलो-फूलोगे।...आज मोटर देखी थी जिसमें तहसीलदार साहब आये थे?...इससे भी बड़ी मोटर में घूमोगे!"

"गरदावरजी, सरकार हमें पांवों पर चलने के लायक ही रहने दे। हम इसी बात में बहुत खुश रहेंगे। जमीनें बेचकर हमें मोटर नहीं चाहिए।" मुखिया ने

उत्तर दिया। फिर चिन्तित स्वर में बोला, "गरदावरजी, मेरी तो उम्र कट गयी है। जो थोड़ी-बहुत रहे सै वह कट जायेगी। लेकिन जमीनें छिन गयी तो बच्चों का क्या होगा? यह सोचते ही आँखों के आगे अँधेरा छा जावे से।"

"चौधरी, तू चिन्ता क्यों करे सै? तेरी अकेले की जमीन नहीं जावेगी। जो सबके साथ बीतेगी, तेरे साथ भी बीतेगी। बाक़ी हमसे जो मदद होगी वह जरूर करेंगे।" पटवारी ने मुखिया को दिलासा दिया।

पहलादसिंह ने ड्योढ़ी में पाँव रखा तो पटवारी ने उचककर पूछा, "क्यों छोरे, क्या ख़बर लाये?"

"अच्छी ख़बर लाया हूँ पटवारीजी।" पहलादसिंह ने धोती की डब से बोतल निकालकर मुखिया की ओर बढ़ाते हुए कहा।

"पहलाद, पागल हो गया सै? गरदावरजी को दे।" मुखिया ने झिड़का।

"इब भाग के तीन गिलास ले आ। साथ में पानी का भगौना भी उठाते लाइयो।" पटवारी ने गिर्दावर के हाथ से बोतल लेते हुए कहा।

"ना पटवारीजी, मैं ना पियूँगा। मेरा दिन तो वैसे ही डूब रहा है। यों भी इब क्या इसलिए पियूँ कि सरकार हमारी जमीनें छीन रही से?" मुखिया के लहजे में कड़वापन था।

पहलादसिंह ने तीन गिलास और पानी रख दिया। गिर्दावर और पटवारी ने अपने-अपने गिलास भर लिये। पटवारी ने एक घूँट भरा और होंठों पर जीभ फेरते बोला, "अच्छी है!"

"हूँ।" गिर्दावर भी बोला।

"पजाबी कह रहा था कि उसकी बोतल विलैती से बढ़िया से।" कुछ दूर बैठे पहलादसिंह ने हुमकते हुए कहा।

"ले थोड़ी तू भी ले।" पटवारी ने बोतल उठायी।

"ना पटवारीजी, मैं ना पियूँ।" पहलादसिंह ने दोनों कन्धे सिकोड़ते हुए कहा।

"पी ले, घमण्ड न बघार! चोरी-चोरी तो पीवै से!" मुखिया ने पहलादसिंह से कहा।

पहलादसिंह ने संकोच दिखाते हुए गिलास पकड़ लिया तो मुखिया बोला, "इब इतने अनर्थ हो रहे हैं तो यह भी होने दे कि छोटे बड़ों के हाथ से शराब पियें।"

गिर्दावर और पटवारी को नशा चढ़ा तो वहीं खाट पर लेटते हुए बोले, "मुखियाजी, इब कहाँ जायेंगे। रात काटनी है, यहीं पड़ रहेंगे।"

"आपका अपना घर है।" मुखिया उठता हुआ बोला, "बिस्तर बिछवा देता हूँ।"

"नहीं," गिर्दावर ने उसे रोकते हुए कहा, "अभी विस्तर नहीं। बहुत थकान चढ़ी है। किसी को बुला दो, थोड़ी टाँगें दबा दे।" कहते हुए गिर्दावर ने टाँगें पसार दीं।

मुखिया ने दो लड़कों को बुलाकर गिर्दावर और पटवारी की टाँगें दबाने पर लगा दिया। थोड़ी ही देर में वे सो गये और हलके-हलके ख़र्राटे लेने लगे।

लोगों को जब पता चला कि गिर्दावर और पटवारी दोनों मुखिया की बैठक में ही हैं तो सब आकर वहाँ इकट्ठे हो गये। उनकी नींद में ख़लल न पड़े इसलिए आपस में बातचीत कान से मुँह लगाकर करने लगे।

जब अँधेरा बहुत घना हो गया तो सब लोग उठे। रात के उस सन्नाटे में गिर्दावर और पटवारी के ख़र्राटों की आवाज़ गूँज रही थी और गाँव के लोग अँधेरे में आँखें फाड़े हुए नींद की राह देख रहे थे जो कोसों दूर हो गयी थी।

आठ—

पौ फटी तो लोग घरों से बाहर निकले। खेतों में गये। लेकिन वह ज़मीन जिसका कण-कण उनके हाथ के स्पर्श को पहचानता था, उनके पाँव की चाल को चीन्हता था, वही ज़मीन उन्हें आज अजीब-सी, अजानी-सी लग रही थी। वहाँ खड़ी फ़सल भी उन्हें अब परायी-जैसी दिख रही थी। कहीं फ़सल के पीछे किसी बनिये का चेहरा उभर रहा था, कहीं पटवारी का तो कहीं किसी मण्डी के दलाल का चेहरा झाँक रहा था।

दोपहर होने से पहले ही सब लोग मुखिया की बैठक में इकट्ठे हुए। खाटों पर सब अधमरे-से बैठे थे। सब सोच में थे। सूझता कुछ किसी को न था।

"चौधरी, कुछ सोचा तुमने?" ताऊ ने पूछा। उसे चुप देख वह ठंडी साँस छोड़ता हुआ बोला, "हमारा तो कोई भाई-भतीजा भी कहीं सरकार में नौकर नहीं है कि उसी के आसरे दाल-रोटी चलती रहे।"

"मुखियाजी, रात गरदावर और पटवारी ने कुछ बताया?" बंसीलाल ने पूछा।

"कुछ खास नहीं बताया बंसी। जब भी बात शुरू की, गरदावर ने यही कहा कि पटवारी को खुस रखना। बिगड़े काम भी सँवरेंगे।" मुखिया ने हाथ पलटते हुए कहा।

'पहले भी उसे कौन-सा नाराज रखा है। हर फसल पर मन-दो मन नाज देवें हैं, भूसा देवें हैं, हरा चारा देवें हैं। जमाबन्दी का काम होवे में तो मेहनताना देवें हैं। दस्तूरी वह अलग वसूल करे में।" बंसीलाल ने एक-एक बात पर जोर दिया और कहा, "अब और कैसे वह खुस होगा अपनी समझ में तो आये नहीं सै।"

"गरदावर कह रहा था कि अभी कुछ नहीं बिगड़ा। सारी काररवाई तो पटवारी ही करेगा, अफसर तो सिर्फ अपनी मोहर लगायेगा।" मुखिया सधे हुए स्वर में बोला, "पटवारी ने इतना जरूर कहा कि बखत आने पर मदद भी करेगा।"

"चौधरी, सब मनबहलावा है। सरकार हमें बरबाद कर देगी, फकीर बना देगी, दर-दर की ठोकरें खाने को लाचार कर देगी।" ताऊ ने चेतावनी देते हुए कहा, "जमीन तो गयी, इज्जत भी जाती रहेगी। मान-मरजाद सब खतम हो जायेगी।"

मुखिया चुपचाप सामने आँखें गड़ाये देखता रहा। फिर रंज और खेद-भरी आवाज में बोला, "जमीन न हो तो हममें और कम्मियों में क्या फर्क रह जावे है। ढोर भी थान पर बँधा हो तभी उसका मोल है, आवारा फिरे तो कसाइयों का माल सै।"

लम्बी-सी हूँ के बाद ताऊ बोला, "मुखिया, पैसा मिल भी गया तो किस काम का? धन तो कोठेवालियों के पास भी होवे है लेकिन उनकी कोई हैसियत होवे सै क्या?"

"ठीक कहो हो ताऊ, हैसियत जमीन-जायदाद से बने है।" बंसीलाल बोला, "अपने दुनीचन्द को ही देख लो। सारा गाँव उसका देनदार सै। भगवान की दया से धन-दौलत भी सै। लेकिन क्या वह कभी गाँव का मुखिया बन सके सै?"

चौधरी लोग बातों में मगन थे कि गाँव के सब कम्मी मुखिया की बैठक के दरवाजे आगे आ खड़े हुए। सभी पसीने में लथपथ थे। खाटों से कुछ दूर हटकर जमीन पर वे बैठ गये।

सोधन कम्मी औरों से जरा आगे को बैठा था। हाथ जोड़कर बात शुरू करते हुए वह बोला, "मुखियाजी, हमने एक बात सुनी सै। बस उसी बखत से हमारे लिए चारों तरफ अँधेरा छा रिहा सै। हमारी गुजर तो आप चौधरियों के पाँव के सदके सै है। आपकी जमीनें सरकार ने ले ली तो हम नादारों का क्या होगा?" कहते-कहते सोधन की आँखों में आँसू छलक आये।

यह देख मुखिया, ताऊ और अन्य लोगों की आँखें भी भर आयीं। मुखिया अँगोछे से आँखें पोंछता हुआ बोला, "सोधन, मैं केह बताऊँ?" फिर वह दीन स्वर में बोला, "सारी रात नहीं सोया, सोधन। यही सोचता रहा कि हमारा क्या

बनेगा, गाँव का क्या बनेगा? हम लोग कहाँ जायेंगे?"

"मुखियाजी, आप लोग जमीनों के मालिक हैं। आप ब्याई करें तो हमें भी मजूरी मिल जावे से। हमें तो खुरपा-कुदाल चलाने और बोझ ढोने को छोड़ कोई दूसरा काम ही नहीं आता।" तोखन रुँधे आते गले से बोला।

"रात आँख तो मेरी भी नहीं लगी। लेकिन मेरी लुगाई एक पल को भी नहीं सोयी। सारी रात बिल्ली की तरह कोठे की मुँडेर से लगी-लगी घूमती रही। आधी रात गये तो उसके हाथ-पाँव ठण्डे हो गये। तलवों और हथेलियों की घी से मालिश की तो उसकी तबीयत कुछ सँभली। आदमी तो क्या जनौर तक सहम गये हैं।" ताऊ ने कहा।

"चौधरीजी, हमारी आपसे एक ही अरज से। हम आपके आसरे ही गाँव में बैठे हैं। हमें आप लोगों का ही आसरा से। हमें धक्का मत ना दीजो।" तोखन ढाँई-ढाँई रोने लगा। कई और कम्मी भी, जो सिर लटकाये बैठे थे, सिसकने लगे।

"क्यों दिल छोटा करे से तोखन। सुन," मुखिया ने ज़ोर देकर कहा, "पहले तुम लोगों की सोचेंगे। उसके बाद अपनी सोचेंगे।"

वातावरण बहुत उदास और बोझिल हो गया था। क्या चौधरी लोग और क्या कम्मी: सब ऐसे बैठे थे जैसे घर की ही जवान मौत की अरथी उठाने जा रहे हों।

बैठक के आगे कम्मियों के ऊपर धूप आने लगी तो मुखिया ने कहा, "तोखन, तुम सब इधर दालान में आ जाओ। धूप में क्यों बैठे हो?"

"नहीं चौधरीजी, चलते हैं। आपसे इतनी ही अरज करनी थी। आप माई-बाप हैं। आप चौधरी ही हम लोगों की सरकार हैं।"

"तोखन, फिकर न करो। अगर हम पहले एक साथ रहे हैं तो आगे भी एक साथ ही रहेंगे। अगर भूखों मरना पड़ा तो पहले हम मरेंगे। जीते-जी तुम लोगों पर आँच नहीं आने देंगे। क्यों, चौधरियो, ठीक है ना?" मुखिया ने सबकी ओर देखा।

"कायदे की बात है चौधरी," सबने एक आवाज़ हो कहा।

"चौधरीजी, आपको दिन दूने रात चौगने भाग लगें। आपका परताव चढ़े।" तोखन ने घुटनों पर हाथ टेककर उठते हुए कहा।

उनके जाने के बाद कुछ देर तक सब चुप रहे। ताऊ ने चुप्पी को तोड़ते हुए कहा, "सरकार के हुकम से सारा गाँव दहल गया से।"

"यह कोई हुकम है! फाँसी की सजा से भी बड़ा दण्ड से।" बंसीलाल ने कहा। फिर कुछ ऊँची आवाज़ में बोला, "चौधरीजी, कुछ सोचो, हाथ-पाँव मारो। शायद सरकार अपना हुकम वापस ले ले। सरकार के घर में कोई कमी

"पण्डत, तू चार मन्तर सीख ले। तेरी रोटी पक्की। जादू-टोना सीख लेगा तो दूध-लस्सी भी पक्की। और अगर पत्री देखना सीख ले तो मक्खन-मलाई भी पक्की।" ताऊ ने वंसीलाल से कहा।

"ताऊ, अगर तुम मेरे मन्दिर में पूँछ लगाकर खड़े हो जाओ तो लुगाई भी पक्की।" वंसीलाल ने हँसते हुए कहा।

लोग ज़ोर-ज़ोर से हँसने लगे तो ताऊ खिसियाना होकर चुप हो गया। फिर झेंप मिटाने के लिए वोला, "चल पण्डत, तेरा दिल तो खुश हो गया। सवेरे से ताजा दूध छुटे कठड़े की तरह उदास वना वैठा था।"

नौ—

दोपहर से पहले ही सब लोग अपने छोटे-मोटे काम निपटाकर मुखिया की वैठक में इकट्ठे होने लगे।

"लौटा दलीलसिंह ?" आनेवाला हर व्यक्ति पूछता। मुखिया निचला होंठ पिचकाकर दायें-वायें सिर हिला देता। इस पर उदासी फिर सब पर छाने लगती।

जब दीवारों की परछाइयाँ नींव में समा गयीं तो मुखिया निराशा की झलक लिये हुए स्वर में वोला, "दलील पलटा नहीं। इतनी देर में तो आदमी कालकाजी के मन्दिर के दरसन करके भी लौट आवे से।"

"आ रिहा होगा।" ताऊ ने सिर खुजाते हुए कहा, "आजकल के छोरे वेपरवाह तो हैं ही। कहीं रुक गया होगा।"

"समधी ने रोक लिया होगा।" वंसीलाल ने राय दी, "हो सकता है समधी घर पर न हो। छोरा सन्देस देकर ही पलटेगा।"

इतनी-सी वातचीत के वाद ख़ामोशी फिर छा गयी। चिन्ता और उदासी में लोग वार-वार जम्हाई लेने लगे। वीच-वीच में जव कभी कोई गाय-भैंस रँभा उठती या गली में कुत्ता भौंकता या वच्चे ही उधर से दौड़ते हुए निकल जाते तो कुछ क्षण के लिए उनका ध्यान वँट जाता। उसके वाद उदासी और चिन्ता फिर लौट आतीं : पहले से भी गहरी और भारी होकर।

वे सव खाटों पर इसी हाल पड़े थे जव दरवाज़े के सामने साइकिल की घण्टी वजी। एक झटके के साथ सव-के-सव उठे और चूहे की तरह आँखें नचाते हुए

दरवाज़े की तरफ़ देखने लगे। साइकिल का अगला पहिया दहलीज़ के पार हुआ तो बंसीलाल उत्तेजित स्वर में बोला, "लो, आ गया दलीलसिंह।"

दलीलसिंह पसीने में लथपथ था। चेहरा धूप में तपकर लाल हो गया था। उसने साइकिल दीवार के सहारे टिका दी और पंखा लेकर हवा करने लगा।

"चौधरीजी मिले?" मुखिया ने खिंची हुई आवाज़ में पूछा।

"हाँ, बाबाजी के जोहड़ के पास पहुँच गये होंगे।" दलीलसिंह ने बताया। "मैं ज़ोर-ज़ोर से पैडिल मारता पहले इसलिए आ गया कि आपको ख़बर कर दूँ।"

समधी के आने की सुनकर मुखिया के घर-भर में कौतूहल-सा मच गया। ख़बर मिलते ही मुखिया की पत्नी ने घर के अन्दर बैठे-बैठे ही घूँघट नीचे खींच लिया और उनके लिए जलपान तैयार करने लगी। मिठाई लाने के लिए पहलाद-सिंह को बाबाजी के जोहड़ की ओर दौड़ा दिया।

गाँव के लोग खाटों पर अभी खेस बिछा रहे थे कि चौधरी नारायनसिंह की घोड़ी बैठक के दरवाज़े के सामने रुकी। मुखिया लपककर आगे बढ़ा और घोड़ी की लगाम थाम ली। चौधरी नारायनसिंह घोड़ी से नीचे उतर आया तो मुखिया ने लगाम दलील को थमा दी और सम्मान के साथ समधी को बैठक में ले आया। राम-राम के बाद चौधरी नारायनसिंह को बड़ी चारपाई पर बैठाया गया जिस पर गद्दे के ऊपर फूलदार खेस बिछा था।

थोड़ी मिठाई खाने के बाद उसने मीठी लस्सी के कई गिलास पिये। फिर डकार लेकर मूँछों से छाछ निकालता हुआ बोला, "दलीलसिंह को देख पहले तो मैं घबरा गया। भगवान से सबका सुख माँगा।"

"चौधरीजी, सुख कहाँ है?" कहकर मुखिया ने पूरी कहानी सुनायी। फिर उदास स्वर में बोला, "चौधरीजी, हम बहुत मुश्किल में फँस गये हैं। कोई राह नहीं सूझे से। इसीलिए आपको इतनी धूप में कष्ट दिया से।"

नारायनसिंह ने खाँसकर गला साफ़ किया और बोले, "इब चारों ओर यही हवा चल रिही से। हमारे देखते-देखते दिल्ली कहीं की कहीं पहुँच गयी से। लाट साब ने नयी दिल्ली बसायी तो मस्जिद-मोठ दिल्ली की लपेट में आ गयी। फिर अमरीकी हस्पताल (सफ़दरजंग हॉस्पिटल) बना तो दिल्ली हुमायूँपुर गाँव तक पहुँच गयी।" नारायनसिंह लम्बी-सी जम्हाई लेता हुआ आगे बोला, "इब के देस आज़ाद हुआ तो दिल्ली खूँटे से छूटे बछड़े की तरह चारों ओर भाग रही से।"

सब लोग सहमे-से नारायनसिंह का व्याख्यान सुन रहे थे। वह जैसे बहुत दूर भविष्य तक की सोचता हुआ गम्भीर स्वर में बोला, "बुज़ुर्ग लोग बताया करते थे कि दिल्ली और मेहरौली जब भी एक हुए, इस शहर का पतन हो गया। दिनों में ही उजड़ गया।...सतरह बार पहले यह हो चुका से।" नारायनसिंह की आवाज़ ऊँची हुई; फिर एकदम से गिर आयी: "इब दिल्ली फिर मेहरौली की

तरफ बढ़ रही से। बीरसरा, शाहपुर और खिड़की गाँव तक तो पहुँच गयी से...।"

नारायणसिंह चुप हो गया तो वंसीलाल अलसायी आवाज़ में बोला, "अनर्थ हो रिहा से।"

"अनर्थ-सा-अनर्थ ! सुना है सरकार हमारी ज़मीनें लेने के बारे में भी सोच रिही से।" नारायणसिंह ने चिन्ता के स्वर में कहा।

"अच्छा ?" मुखिया की चीख़-सी निकल गयी, "चौधरीजी, सरकार चाहती क्या है ? अच्छी आजादी आयी है ? पुश्तों से बसे-रसे लोगों को उजाड़ा जा रहा है। इससे तो फिरंगी का राज अच्छा था।"

"फिरंगी के राज में गरीब भी इज्जत से रोटी खाता था। इब तो कुछ न पूछो। चोर-उचक्का चौधरी गुण्डी राण्ड परधान !" वंसीलाल ने कड़वाहट के साथ कहा।

"कभी फिरंगी के राज में दंगे-फिसाद का नाम सुना था ? जब से आजादी आयी से, चारों ओर मार-धाड़ हो रिही से। अन्धी पीसे कुत्ता चाटे वाला हिसाब से। पंजाबियों ने तो ऐसी आफत फैलायी है कि तौबा भली।" दुनीचन्द ने कान छुए और ताव खाता हुआ बोला, "न सरम न हया। हर बात अनोखी और अनहोनी। एक लूट मचा रखी है। न इनके लिए कोई कायदा है न कानून। दूसरे के माल पर अपना यों हक समझे से जैसे बाप-दादा की कमाई हो। सरकार के पास फरियाद लेकर जाओ तो वहाँ भी रसाई और सुनवाई नहीं। सरकार भी उनसे डरे है। वे रोज गलियों-बाजारों में सरकार का स्यापा करे हैं। फिर भी सरकार उन्हें दोनों हाथ धन लुटा रिही से।"

"नूं कहूं; सरकार को जमीनें हम नहीं देंगे। सरकार जमीन पर कब्जा करने आये तो लठ मार-मारकर भगा देंगे।" सबसे आख़िर की चारपाई पर बैठे पहलादसिंह ने उठकर आवेश में भरे हुए कहा।

"छोरे, तेरे अन्दर जवानी की गरमी से। सरकार की बन्दूक के सामने तेरा लठ क्या करे से ? भगवान और सरकार का मुकाबला करना आदमी के बस में नहीं से।" चौधरी नारायणसिंह ने उसे समझाते हुए कहा।

मुखिया अपने विचारों में डूबते-से अचानक चौंका और आसपास बैठे लोगों पर नजर डालकर समधी से बोला, "चौधरीजी, आपको इसलिए कष्ट दिया था कि आप अदालत-कचहरी जाते रहते हैं। आप किसी वकील या मुन्शी को जानते होंगे। हमें किसी से सलाह ले दें कि हमें इब क्या करना चाहिए।"

"मैं मुन्शी-वकील को जानता हूँ। लेकिन मैं समझूं कि पहले मेरी घरवाली की बड़ी मौसेरी बहन के बेटे उत्तमपरकाश से मिलना चाहिए। रिश्ता तो बहुत नजदीकी नहीं, लेकिन नातों-भातों में आते-जाते हैं।" चौधरी नारायणसिंह ने

सुझाव दिया। फिर बात का प्रभाव और बढ़ाने के लिए कहा, "उत्तमप्रकाश बहुत बड़ा आदमी बन गया सै। राज-दरबार मे भी उसकी मान-परतिष्ठा सै। इब तो उसने दिल्ली मे भी कोठी बना ली सै। साट गाव के हाट-बजार मे उसका दफ्तर सै। सुना है बहुत मजे में है। वह ठीक सलाह देगा।" चौधरी नारायणसिंह ने सिर खुजाते हुए कहा।

"उसी के पास चलते हैं। कोई न कोई राह तो सुझायेगा ही।" मुखिया ने चारपाई से उठते हुए कहा।

"दिल्ली मे उसकी कोठी का ठिकाना मुझे मालूम नहीं सै। सुना है कश्मीरी दरवाजे के पास है। पूरा नाम-पता पास न हो तो शहर में ढूंढना कठिन हो जावे सै। पहले गांव चलते हैं। शायद वहीं मिल जावे।" चौधरी नारायणसिंह ने अपनी राय बतायी।।

जाने को तो लाळू और बंसीलाल भी तैयार थे, लेकिन निर्णय यही हुआ कि नारायणसिंह के साथ केवल मुखिया ही जायेगा।

नारायणसिंह ने अपनी छड़ी सँभालते हुए कहा, "गांव मे या कहीं पास मे मन्दिर हो तो पुजारी को बुला लें। पतरा देखकर सेंत बता देगा। शुभ घड़ी और शुभ दिशा मे निकलें तो बिगड़े काम भी सँवर जाते हैं। सिद्धि मिलती है।"

"गांव मे तो मन्दिर है नही। तिहाड़ में है। वहां से पण्डत को बुला लेते हैं।" मुखिया ने कहा।

"तिहाड़ क्यों जावें? इब तो बाबाजी के जोहड़वाले मन्दिर में भी पण्डत रहे सै।" पहलादसिंह ने उठकर ऊँची आवाज में बताया।

"अच्छा! वहां कब से पण्डत सै?" मुखिया ने हैरानी से पूछा।

"कोन दिन हो गये। पोखेवाले पंजाबी ने किसी पण्डत को बिठाया सै।" पहलादसिंह बोला।

"हां! गांव मे तो किसी को खबर नही सै।"

"भगवती बाहमणी तो रोज वहां जावे सै।" पहलादसिंह ने बताया।

"अच्छा जा भागकर पण्डत को बुला लाइयो।" मुखिया ने कहा।

"अभी आऊं हूं।" पहलादसिंह घूमकर दलीलसिंह के [illegible] और मुखिया को सम्बोधित करता हुआ बोला, "चाचा, [illegible] दो, पण्डत को पीछे लादकर झटपट ले आऊंगा।"

"दलीले, दे सैकल," मुखिया ने कहा। [illegible] "पर जाना-आना ही करना। देर हो रही सै। [illegible]"

थोड़ी ही देर के बाद पहलादसिंह [illegible] पण्डित के तन पर सफेद पॉपलीन का कुरता। [illegible] सफेद धोती, कन्धे पर लाल धारीदार [illegible]

जिसमें कई गाँठें लगी हुई थीं। बगल में पोथी दबाये उसने बैठक में प्रवेश किया और सबकी राम-राम बुलायी। कई लोगों ने उठकर उसके पाँव छुए और आशीर्वाद पाकर अपने-अपने स्थान पर बैठ गये।

मुखिया ने पण्डित को अपने और चौधरी नारायणसिंह के बीच बिठाया और आदर-भाव के साथ कहा, "पण्डतजी, आपने भी सुना होगा कि सरकार हमारी जमीनें लेना चाहती है।"

"हाँ, सुना तो है। कल मन्दिर में कुछ देवियों ने इस बात का मुझसे भी उल्लेख किया था।" पण्डित अपनी विद्वत्ता का उनपर रौब डालने के लिए शास्त्रीय भाषा में बोला।

"हम इसी मामले में सलाह लेने के लिए सहर जा रहे थे। सोचा आपसे सैंत निकलवाकर तब जायें।" मुखिया ने कहा।

"बहुत उचित किया आपने। किस दिशा में प्रस्थान करेंगे?" पण्डित ने पोथी खोलते हुए पूछा।

"कश्मीरी दरवाजे की ओर।" नारायणसिंह बोला।

"उत्तर दिशा हुई ना?"

"जी।" नारायणसिंह ने ही उत्तर दिया।

पण्डितजी अपनी पोथी के पन्ने पलटते हुए उँगलियों पर हिसाब लगाते रहे। सब लोग तन्मय हुए उनकी ओर देख रहे थे। ताऊ बंसीलाल की ओर झुकते हुए फुसफुसाया, "बंसी, तू तो यों ही खेती में पड़ गया। दो-चार मन्तर सीख लेता, पोथी की पहचान कर लेता, तो इब आराम करता।"

बंसीलाल मुसकरा दिया तो ताऊ फिर बोला, "उसके चेहरे पर तेज देख! है कहीं चिन्ता-फिकिर का निशान? इज्जत-मान अलग से। मुखिया आप पायँती बैठा है, पण्डत को बीच में बिठाया है।

"हूँ," बंसीलाल ने कहा, "कासीजी का पढ़ा हुआ है: मुँह पर बरम तेज तो होगा ही।"

उनको फुसफुसाते देख पहलादसिंह भी पास आ गया। अपना मुँह दोनों के कानों के पास ले जाकर बोला, "इब तो भगवान का रूप बनाये बैठा है। जब मैं बुलाने गया तो भगवती बाहमणी से टाँगें दबवा रहा था। क्या पूजापाठ करके इसके अंग थक जावे से?" पहलादसिंह ने अचरज करते पूछा।

इससे पहले कि दोनों में से कोई उत्तर देता पण्डितजी ने पोथी बन्द कर दी। आँखें बन्द कर हथेलियों से उन्हें हलका-सा मसला। फिर आधी खोलता हुआ बोला, "आज का दिन इस काम के लिए शुभ तो है। परन्तु उत्तर दिशा में जाने के लिए गाँव के दक्षिण से प्रस्थान करना होगा। मार्ग में किसी अंगहीन अथवा अपंग व्यक्ति से भेंट नहीं होनी चाहिए। भगवान् का नाम लेकर चल दो।"

"सुना है पंजाबियों ने भी अखबार निकाले हैं। एक दिन दलीलसिंह लाया था। उसमें तो सरकार की बहुत बुराई की गयी थी।"

"पंजाबियों का कोई धरम-इमान नहीं से ? ये सरकार की खा भी रहे हैं और ऊपर से आंख भी दिखाते हैं। अगर फिरंगी का राज होता तो वह इन्हें तोप से बांधकर उड़ा देता।" दुनीचन्द ने गरम होते हुए कहा।

बंसीलाल ऊँची आवाज़ में अखबार पढ़ने लगा। अन्य लोग उसके आसपास को बैठ गये। बंसीलाल ने सबसे ऊपर की ख़बर पढ़ी : 'पाकिस्तान से आये शरणार्थियों पर सरकार ने एक सौ पच्चीस करोड़ रुपये ख़र्च किये हैं। दिल्ली में शरणार्थियों को बसाने के लिए ग्यारह नयी कालोनियाँ और नौ मारकीटें बनाने की स्कीम।...नयी कालोनियों के लिए नजफ़गढ़ रोड, कालकाजी, निज़ामुद्दीन वगैरा में ज़मीनें हासिल करने का फ़ैसला।'

ख़बर पढ़कर बंसीलाल रुक गया। दुनीचन्द ने काम बन्द कर दिया और पास आकर बोला, "देखा सरकार का हाल ? नूं कहूँ सरकार ही पंजाबियों को सैं दे रही से। उन्होंने हर चीज का बेड़ा गरक कर दिया है। यह कहाँ का न्याय है कि पंजाबियों को बसाने के लिए हमें उजाड़ा जाये ? यह करोड़ों रुपया कहाँ से आयेगा ? हमार-तुमार से छीनकर नामुराद पंजाबियों पर खरच किया जायेगा ! इनके लिए कालोनियाँ बनेंगी...मारकीटें बनेंगी।"

दुनीचन्द ने गुस्से में सरकार को मोटी-सी गाली दी और फिर कहता गया, "सरकार इनके लिए इतना-इतना कर रही से। लेकिन पंजाबी सरकार को ही गाली देवें से। बड़े-बड़े नेताओं की माँ-बहिन को बुरा-भला कहे से। उस सरदार को ही देखो—वह फेरीवाला सरकार के लिए ऐसा गन्द बक रहा था कि सुनने वालों को सरम आ गयी थी।"

बंसीलाल कोई भी ख़बर पढ़ता तो दुनीचन्द टिप्पणी अवश्य करता। बंसीलाल ने उसे टोकते हुए कहा, "लाला, अख़बार पढ़ने का मजा किरकिरा न कर। अखबार पढ़ लेने दे। बाद में जो चाहे कहना।"

बंसीलाल ने खांसकर गला साफ़ किया और ऊँची आवाज़ में पढ़ने लगा। "चाँदनी चौक में दो ग्रुपों में चाक़ू चल गये। आधा घण्टा जमकर लड़ाई। पुलिस खड़ी तमाशा देखती रही। झगड़ा उस वक़्त शुरू हुआ जब दो व्यक्तियों ने पटड़ी के उस स्थान पर दुकान सजाने की कोशिश की जहाँ एक शख़्स कई साल से बैठता आया था।...तिब्बिया कॉलेज के पास राह चलती औरत को चार गुण्डों ने लूट लिया। दिन-दहाड़े जेवर उतारकर फ़रार हो गये।"

ये दो ख़बरें सुनकर दुनीचन्द चुप न रह सका और जोश में बोला, "पहले कभी सुना था कि लड़ाई-झगड़ा हो और पुलिस खड़ी तमाशा देखती रहे ! दिन-दहाड़े राह चलती औरत के जबरदस्ती जेवर उतार लिए जायें !...मैं कहता हूँ

यह गन्द पंजाबियों ने ही फैलाया है। सोने से लदी नारी रात को सुनसान सड़क पर आ जाये लेकिन थी किसी की हिम्मत कि आँख उठाकर भी उसकी ओर देख जाये ?"

कुछ देर चुप रहकर दुनीचन्द फिर बोला, "आज शहर गया था। मेरे मुसेरे भाई की अजमेरी गेट के बाहर दुकान है। वह बेचारा रो रहा था कि पंजाबी दिन में दस बार चीज का भाव बिगाड़ते हैं। कह रहा था कि परचून में थोक के भाव चीजें बेचते हैं। खाली बोरी, टीन या लकड़ी की पेटी ही मुनाफा रह जाती है। पण्डत, ये बातें इस राज में ही हो सकती हैं। कोई बणिया राजगद्दी पर बैठा होता तो पंजाबियों को बेच खाता। जाट-राजपूत या किसी अहीर के ही पास गद्दी होती तो इन पंजाबियों को चूं न करने देता।" दुनीचन्द ने बंसीलाल की ओर देखते हुए कहा।

"दुनिया, राज उसी को मिलता है जो राज करने के लायक हो। तू कोई अक्किल की बात कर।"

दोनों की नोक-झोक चल ही रही थी और ताऊ और अन्य लोग उसका आनन्द ले रहे थे कि बंसीलाल के छोरे ने दौड़ते हुए आकर खबर दी कि मुखिया शहर से वापस आ गया है। सब लोग उठकर उसकी बैठक की ओर चल दिये।

दस—

मुखिया की बैठक में तिल धरने की जगह नहीं थी। बहुत-से लोग चार-पाइयों पर बैठे थे। जिन्हें जगह नहीं मिली वे खोरियों पर टिक गये थे या फिर जहाँ जिसे पाँव टेक मिले वहाँ खड़े थे। जिन बच्चों के पिता यहाँ थे वे उनकी गोद में बैठे थे या उनसे सटकर खड़े थे। स्त्रियाँ तबेले के दालान में जमा थीं। समूचा गाँव ही वहाँ उमड़ पड़ा था। दलीलसिंह और पहलादसिंह बारी-बारी मुखिया और समधी को एक बड़े पंखे से हवा कर रहे थे। लोग आपस में खुसर-फुसर करते हुए इस बाट में थे कि मुखिया बात शुरू करे।

बंसीलाल ने ताऊ की पीठ पर हाथ से ठोका देते हुए कहा, "ताऊ, बात शुरू कर ना !"

"तू कर।"

"ताऊ, तू कर, तू बुजुर्ग से।"

ताऊ ने इधर-उधर देखा। फिर मुखिया से बोला, "चौधरी, सुनाओ कुछ सहर का हालहवाल।"

"कुछ न पूछो चौधरी। दिल्ली शहर का तो हुलिया ही बदल गया से। जिधर निकलो, मेला-सा नजर आवे से। पता नहीं इतना आदम कहाँ से आ गया से। लारी-मोटरें इस तरह दौड़ी फिरती हैं जैसे हमारे गाँव की गलियों में कुत्त फिरें।...पंजाबियों ने एक अनोखी सवारी चलायी से...क्या नाम था उसका चौधरीजी ?" मुखिया ने अपने समधी से पूछा।

समधी कुछ जवाब दें कि उससे पहले ही दुनीचन्द बोल उठा, "उसे मोटर रिक्शा कहें से। मैं तो उसमें बैठा भी हूँ, बहुत तेज चले सै !"

"अच्छा !" ताऊ ने हैरान होते हुए कहा।

"हाँ," दुनीचन्द ने कहा, "मगर सब पंजाबी सरदार चलाते हैं !"

"पंजाबी तो दिल्ली में सब जगह छा गये हैं। जहाँ जाओ कान में पंजाबियों की ही आवाज पड़े सै। खारी बाऊली, फतेहपुरी, सदर बाजार, सब कहीं फैल गये हैं। उन्हें तो पाँव धरने की जगह मिलनी चाहिए : हट्टी लगाने की जगह वे खुद बना लेवे हैं।" नारायणसिंह ने कहा और आगे बोले, 'क्या बच्चे क्या बूढ़े, क्या मर्द क्या औरतें, क्या लुगाइयाँ क्या छोरियाँ—सब गली-बाजारों में घूम-घूमकर कुछ न कुछ बेचे हैं।"

"जो लोग हमारे गाँव में लुगाई लेकर पहुँच गये वे शहर में क्यों नहीं घूमेंगे !" दुनीचन्द ने कहा।

"पर एक बात माननी होगी।" नारायणसिंह ने कहा, "जहाँ पहले कुत्ते मूतते थे, मेहतर कूड़ा फेंकते थे, उन्हीं जगहों पर पंजाबियों ने ऐसी दुकानें सजा दी हैं कि जी खुश हो जावे से।"

ताऊ को पंजाबियों के बारे की इस चर्चा में कोई दिलचस्पी नहीं थी। वह जल्दी से जल्दी यह जानना चाहता था कि मुखिया और चौधरी नारायणसिंह क्या सलाह लेकर आये हैं। बात पलटता हुआ वह बोला, "तो चोधरीजी, वहाँ फिर किस-किससे मिले ? क्या सलाह मिली ? आपको लारी में बिठाकर हम तो तभी से सब सुनने के इन्तजार में बैठे हैं।"

चौधरी नारायणसिंह ने पगड़ी में से ही उँगलियाँ डालकर सिर खुजाते हुए बात शुरू की, "हम यहाँ से सीधे उत्तमपरकाश के गाँव गये। उसके गाँव का तो नक्शा बदल गया सै। गलियाँ पक्की बन गयी से। गाँव से बाहर खेतों में उसने मकान बनाया से। वहाँ तो सहर की तरह बिजली भी है, बिजली से चलनेवाला कुआँ भी है। उत्तम वहाँ अमरूदों का बाग लगा रहा है। गाँव कभी-कभी जावे है। आज भी वहाँ नहीं था। बहुत बड़ा आदमी बन गया से। राजदरबार से

बुलावे आवे से। सरकार उसकी सलाह लेकर चले से।"

"चौधरीजी, उसने आपको क्या सलाह दी?" बंसीलाल ने चौधरी नारायणसिंह को बात लटकाते देखा तो बीच में बोल उठा।

"बताता हूँ!" कहकर चौधरी नारायणसिंह फिर बोला, "पहले गाँव गये तो पता चला कि वह कोठी में होगा। इब वह गाँव में कभी-कभी आवे से। हमें कोठी का पता नहीं था। वहाँ से आदमी साथ लेकर कोठी पहुँचे।" चौधरी दोनों हाथ सिर से ऊपर उठाकर बोला, "कश्मीरी गेट में बड़ी तोप के पास से जाने वाली सड़क पर उसने कोठी बनायी से। कोई कोठी से! स्वर्ग है स्वर्ग! नौकर-चाकर, मोटर—सब भाग की बात से। मेरा साँडू तो हमार-तुम्हार जैसा ही था। इब उत्तम का भाग ऐसे चमका जैसे रेत से रगड़ा हुआ काँस का कटोरा।"

चौधरी नारायणसिंह ने बात जारी रखते हुए कहा। इब तो मेरी साली यानी उत्तमे की माँ रुकमनी का हाल-हवाल भी बदल गया से। पहले तो मैं उसे पहचान ही नहीं सका। मैं तो उस रुकमणी को जानता था जो घाघरा पहनती थी और पराये मर्द को देखते ही लम्बा घूँघट निकाल लेती थी। इब वह रेशम की धोती पहने से। मेमों की तरह बाल रखे से। यों चपड़-चपड़ बोले से जैसे इँगरेजी पढ़ी हो।...नूँ कहूँ मुझे तो उससे बात करते हुए डर लगे। उसने हमें सारी कोठी दिखायी। गद्देदार कुरसियाँ, मेज, शीशे, फर्श पर रंग-बिरंगे चमकीले गद्दे जिनमें पाँव धँस-धँस जावे। चीज ठण्डी रखनेवाली मशीन! भई कोई घर है क्या! किसी राजे-महाराजे का महल जैसा से!" कहते-कहते चौधरी नारायणसिंह की आँखें हैरानी से फैल गयीं।

"रुकमणी ने आने का कारण पूछा तो मैंने पूरी कहानी सुना दी। मैं बात कर रहा था और वह मेरी आँखों में यों झाँक रही थी जैसे खानगी हो। सच कहूँ कि मुझे सरम से पसीना छूटने लगा। वह बेधड़क कहने लगी कि सरकार जमीन खरीदती है तो दे दो। हम जतन कर रहे हैं कि सरकार हमारी सारी जमीनें खरीद ले। बाकी सलाह तो उत्तम ही देगा।...मैंने उत्तम के बारे में पूछा तो रुकमणी ने बताया कि उसने लाट साब के हाट-बजार (करनाट पलेस) में दफ्तर बनाया से, वहीं मिलेगा। मैं चलने के लिए उठा तो उसने पूछा कि कैसे जाओगे। मैंने कहा कि लाट साब का हाट बजार कौन दूर से। दो कोस नहीं तो तीन कोस होगा, पैदल निकल जायेंगे। यह सुनकर वह बहुत जोर से हँसी। मुझे अच्छा नहीं लगा। बूढ़ी हो गयी तो क्या सरीफ घर की बहू नहीं रही? इस घर की औरतें तो घर के अन्दर भी घूँघट निकालकर बैठती थीं।...उसने नौकर भेजकर ताँगा मँगवा दिया और उसपर चौधरी का एक रुपया खुल गया।"

सब लोग बड़े ध्यान से चौधरी नारायणसिंह की बातें सुन रहे थे। दुनीचन्द से चुप नहीं रहा गया, "बड़े चौधरी जी, जब से पंजाबी आये हैं सरम-हया तो

उड़ ही गयी से। ये लोग मेरी बात नहीं मानते लेकिन मैं कहे देता हूँ कि पंजाबी हमारी औरतों को भी खानगी बना छोड़ेंगे।"

"दुनिया, तू तो एक ही राग अलापता है। तेरे पेट में मरोड़ भी उठ से तो तू पंजाबियों को ही कोसेगा। बड़े चौधरी की बात सुनने दे, बीच में मत रोक।" ताऊ ने बिगड़कर कहा और फिर उधर देखता हुआ बोला, "अच्छा चौधरीजी, आप आगे बताओ उत्तमपरकाश से भेंट हुई कि नहीं?"

"यही तो बता रहा हूँ। ताँगेवाले ने हमें लाट साब के हाट-बजार में पुल के करीब सिलेमा (सिनेमा) के सामने उतार दिया। मैं उत्तमपरकाश का पता पूछता-पूछता उसके दफ्तर के सामने पहुँच गया। भाई, एक बात मानो। सारा हाट-बजार उसे जानता है। क्या पंजाबी, क्या हिन्दुस्तानी, क्या बंगाली, क्या मदरासी। हाट-बजार की दुकानों के ऊपर चौबारों में उसका दफ्तर है। ऊपर पहुँचा तो सामने मेज-कुरसी रखे एक लड़की बैठी थी। मैं घबराया-सा इधर-उधर देख रहा था कि उसने मुझे अपने पास बुलाकर पूछा, 'किससे मिलना है?' हमने उत्तमपरकाश का नाम लिया तो उसने हमें घूरकर देखा और फिर काला बेलना-सा उठाकर वहीं बैठे-बैठे उत्तमपरकाश से बात की। फिर एक आदमी को बुलाकर हमारी ओर संकेत करते हुए कहा कि इन्हें साहब से मिला दो।"

नारायणसिंह ने सब पर नजर डाली और उन्हें मुग्ध पाकर प्रसन्न भाव से बोला, "उत्तमपरकाश सीस महल में बैठता है। फौजियों की तरह एक आदमी बरदी पहनकर दरवाजे के सामने खड़ा था। उसने दफ्तर का दरवाजा खोला और जब हम अन्दर गये तो उत्तम कागजों पर झुका हुआ था। मुझे देख वह बोला कि बताइए क्या काम है। मैंने सोचा कि शायद मुझे पहचाना नहीं। "चौधरी नारायणसिंह ने मूँछों को उँगलियों से सँवारते हुए फिर कहा, 'मैंने उसे बताया कि उत्तमपरकाश, तुमने मुझे पहचाना नहीं? मैं तुम्हारा मौसा हूँ—मुनीरका वाला। वह माथे पर हाथ रखकर सोचने लगा। मैंने जब उसे बताया कि मेरी घरवाली तुम्हारी माँ रुकमणी की मसेरी बहन है तो उसे याद आ गया। वह झट से उठा और हमारे पाँव लगा। बहुत बरखुरदार है। इतना बड़ा आदमी बन गया से लेकिन अपने सम्बन्धियों का बहुत आदर-सत्कार करे है।" कहकर चौधरी नारायणसिंह फिर बोला, "उसने हमें इज्जत-मान से बिठाया। अपनी कुरसी छोड़कर हमारे पास आ बैठा। मौसाजी कहते-कहते उसकी जबान नहीं थकती थी। जब मैंने कहा कि काम से आया हूँ तो वह झट बोला कि काम तो होते ही रहेंगे, पहले यह बताइए कि आप क्या खायेंगे-पियेंगे? उसने कई चीजों के नाम गिनवा दिये। हमारे मना करते-करते उसने खाने के लिए मिठाइयाँ मँगवा लीं। बहुत सवाद : ऐसी कि मुँह में रखते ही गले से नीचे उतर जायें।

"जलपान करने के बाद हमने अपनी समस्या बखेड़ी। वह ध्यान से सुनकर

बोला : 'मौसाजी, सरकार जमीन खरीद रही है तो बहुत अच्छा है। इकट्ठे पैसे मिल जायेंगे और उनसे कोई धन्धा शुरू किया जा सकता है।' उसने बताया कि उसने भी अपनी जमीन बेच दी है और उस पैसे से अब लाखों रुपये का व्यापार कर रहा है। कोठी बना ली है। कार रखी हुई है। मुखियाजी तो सब कुछ अपनी आँखों से देख आये हैं।" कहकर नारायणसिंह मुखिया की ओर देखने लगा।

"चौधरीजी, यह तो ठीक है कि सरकार जमीन लेगी तो इकट्ठा पैसा देगी। लेकिन सारी जमीन नहीं ले रही। बाकी जमीन का हम क्या करेंगे? चार-छह खेतों के लिए हर घर को उतना ही सामान जुटाना पड़ेगा।" ताऊ ने सोच में पड़ते हुए कहा।

"यह बात मैंने कही थी उत्तमपरकाश से। उसने बताया कि कई कम्पनियाँ खुल गयीं से जो जमीन खरीदें से। बाकी जमीन उनके पास बेच देना।" मुखिया ने कहा।

"उत्तमपरकाश ने भी एक पंजाबी के साथ मिलकर कम्पनी बनायी से। वो इकट्ठी जमीन खरीद लेवे से और मकान बनाने के लिए छोटे-छोटे टुकड़े बनाकर बेचे से : उसने कच्चा हिसाब लगाकर बताया कि मुखियाजी की सारी जमीन बेचने पर पचहत्तर-अस्सी हजार रुपये मिलेंगे। कौन-सा काम है जो इतनी रकम से शुरू नहीं किया जा सकता? जब मैंने कहा कि हम लोग हल चलाने के सिवा कोई काम नहीं जानते तो वह हँसकर बोला कि वह हमें तकड़ी तौलने के लिए नहीं कह रहा। पचासों कारोबार हैं जो पैसे से किये जा सकते हैं। कोई भी धन्धा न करना हो तो पचहत्तर हजार रुपये उसकी कम्पनी में जमा करा दो। हर महीने पाँच सौ रुपये मिल जायेंगे। असल रकम खड़ी रहेगी।" चौधरी नारायणसिंह ने विस्तार से समझाते हुए कहा।

"चौधरीजी, कुछ धन्धा न किया तो पैसा कब तक चलेगा! निठल्ले बैठकर खाते-खाते तो धन के कुएँ तक खाली हो जावे से।" ताऊ ने कहा।

"चौधरी, जब सिर पर पड़े से तो आदमी अपने-आप रास्ते और तदबीरें करे है।" चौधरी नारायणसिंह ने उत्तर दिया।

"चौधरीजी, आप उत्तमपरकाश से कहते कि सरकार को हमारी जमीनें न लेने के लिए जोर लगाये।" बसीलाल ने कहा।

"कहा था। उसका एक ही कहना था कि जमीनें बेचने में एतराज क्या से? जितनी मेहनत करके इन जमीनों से साल-भर में आमदनी होती है उससे चार-पाँच गुना रुपया तो जमीनें बेच देने से मिलनेवाले रुपये पर सूद से मिल जायेगा।" मुखिया ने उत्तर दिया।

"मुखियाजी, तुमने क्या फैसला किया?" ताऊ ने पूछा।

"हमार क्या फैसला करेगा ? मैं तो तब फैसला करूँ जब हमारे हाथ में इक्तिआर हो। चौधरी, अब तो भगवान आसरे सारी बात से। जैसी बीतेगी भुगत लेंगे।" मुखिया ने जम्हाई लेते हुए कहा, "जब उठे तो उत्तमपरकाश ने इतना कहा कि वह कोशिश करेगा लेकिन आशा कम ही है।"

कुछ समय तक सब लोग अपने-अपने विचारों में खोये हुए बैठे रहे। न हूँ न हाँ। केवल हुक्के की गुड़गुड़ाहट की आवाज़ आ रही थी। ताऊ के दिल में जैसे कुछ उबल रहा था। वह उसे रोक नहीं पा रहा था। वह झटके से उठा और किसी को सम्बोधित किये बिना 'राम-राम' कहकर चला गया। उसके पीछे लगभग सब लोग उठ खड़े हुए।

गली में आकर एहसास हुआ कि बाहर घना अँधेरा है। "ताऊ, ठहर जा, मैं आ रहा हूँ।" बंसीलाल ने कहा और फ़ौरन ही वह और दुनीचन्द ताऊ से आ मिले। ताऊ ने उन्हें देखकर खीज और झल्लाहट के साथ कहा, "मुखिया और समधी उत्तमपरकाश से सलाह लेने गये थे या उसका ठाटबाट देखने ? उसके बारे में यों बात करें थे जैसे बेटी के नाते का फैसला करके आये हों।"

"मुझे तो यूँ लगता है कि मुखिया को उत्तमपरकाश ने कोई फूंक मारी से। तभी बात-बात पर पचहत्तर-अस्सी हजार का जिकर कर रिहा था। अन्दरखाने मुखिया खुस से।" दुनीचन्द ने कहा।

"उसे तो पचहत्तर-अस्सी हजार मिलेगा तो हमको भी पचास-साठ हजार मिलना चाहिए।" ताऊ ने कहा।

"इस हिसाब से तो मैं भी चालीस-पचास तक जरूर पहुँचूंगा।" बंसीलाल ने कहा।

उन्हें हिसाब लगाते देख पहलादसिंह ने भी अपनी ज़मीन का मोल जोड़ने की कोशिश की। लेकिन वह हिसाब नहीं लगा सका।

अँधेरे में राह टटोलते हुए वे अपने-अपने घर चले गये। दुनीचन्द खाट पर लेटा हुआ यह सोच-सोचकर हैरान और परेशान हो रहा था कि चौधरी इतने पैसे का क्या करेंगे, सँभालेंगे कैसे ?"

ग्यारह—

जब से ज़मीनें ले ली जाने की खबर फैली थी, गाँव में एक अजीब-सा वातावरण पैदा हो गया था। सबके दिल में जैसे दुख की गाँठ-सी बँध गयी थी।

हर वक्त हर जगह एक ही चर्चा रहती। दो जने भी इकट्ठे बैठते तो इस मुसीबत से बचने के उपाय सोचते। लेकिन यह ध्यान करके निराश हो जाते कि यमराज और सरकार का मुकाबला तो आज तक कोई नहीं कर सका।

गाँव की स्त्रियाँ विशेष रूप से परेशान थीं। घरबार उजड़ जाने के ख़याल से ही वे काँप उठतीं। कभी जब गुस्से में होतीं तो वे सरकार को गालियाँ देतीं और निराश और उदास होतीं तो सारी बात को अपने कर्मों का फल मानकर रो लेतीं।

भगवती सारे दिन उनकी बातें सुनती लेकिन चुप रहती। इस मामले में उससे सलाह माँगी भी जाती तो वह नाक सिकोड़कर कहती, "तुम जानो, सरकार जाने। मेरी इच्छा मेरे भगवान करेंगे।" ये शब्द वह ऐसे आत्म-विश्वास के साथ कहती जैसे भगवान् ने चुपचाप उसे कोई आश्वासन दे रखा हो।

एक दिन जब कुएँ पर पानी भरने आयी हुई स्त्रियाँ बहुत ही निराश थीं तो वह उन सबको अपने पास बुलाकर बोली, "तुम हर समय ज़मीनें छिन जाने के दुख का बखान करती हो। कभी यह भी सोचा कि ऐसा क्यों हो रिहा से ?"

स्त्रियाँ अपने मुँह का बोल खोये बिटर-बिटर उसकी ओर देखने लगीं तो वह अपनी आवाज़ को ऊँचा उठाती हुई बोली, "सरकार भी यही थी और गाँव भी यही था। कई-कई पुस्त से सब लोग गाँव में बसते आये हैं। केह कारण से कि सरकार इब गाँव उजाड़ने पर उतारू से ?" भगवती ने बारी-बारी हरेक की ओर देखा। कुछ देर चुप रहकर वह आकाश की ओर देखती हुई दुख-भरे कण्ठ से बोली, "इसलिए कि तुम भगवान से विमुख हो गये हो। तुम्हें हकार हो गया से। यह सब इसी का फल से। जो बोया वही काटोगे।"

भगवती आँखों को उँगलियों से मलती हुई भगवान् को याद करने लगी। एक स्त्री ने साहस करके पूछा, "कौन-सा खोटा करम किया हमने जो भगवान इतना बड़ा दण्ड देने लगा से ?"

भगवती ने तिरस्कार-भरी नज़रों से उधर देखा और तीखेपन के साथ बोली, "सच बोल दूँ तो तड़का लगी दाल की तरह तड़पोगी।...तू ही बता," भगवती ने मुखिया की पत्नी की ओर देखते हुए पूछा, "कौन-सा काम है जो तुमने छोड़ा से ? कौन-सा खरच से जो तुम ना करो। लेकिन भगवान के नाम पर कभी एक पैसा दिया से ?"

फिर आवाज़ को सँभालकर समझाते हुए बोली, "भगवान किसी से कुछ नहीं माँगते। मेरे क्रिशन मुरारी तो सबके पालनहार हैं। लेकिन जब भगत उनसे विमुख हो जाते हैं तो वे भी उन्हें अपना बिराट रूप दिखाते हैं। कभी अकाल पड़े तो कभी बाढ़ आवे से। भगत जन भगवान को परसन्न करने के लिए कथा-कीरतन करते हैं, बरम-भोज देते हैं, जग्य करें से। तुम पर इतनी बड़ी मुसीबत आयी से,

तुमने क्या किया है ?" भगवती ने कड़े स्वर में पूछा, "बोलती क्यों नहीं ?"

सब स्त्रियां चुप थीं। सिर झुकाये बैठी रह गयी थीं। उन्हें चुप देख वह बोली, "कथा-कीरतन छोड़ो, कभी मन्दिर में ही जाकर भगवान के दरसन किये ? बरम-भोज न सही, कभी चींटी सरीखी को दाना डाला ? पीपल को पानी दिया, तुलसी माता की पूजा की ?"

"मैंने दिया था हनूमानजी को लंगोट, जब काकू के बाप को चीते ने घेरा था।" अंगूरी ने उछलकर कहा।

"तो देखा पमन-पुत्र का परताप ? उसके बाद पहलाद को लगी तत्ती हवा तक ?" भगवती ने ज़ोर देकर पूछा। अंगूरी ने इनकार में सिर हिला दिया तो वह लम्बी सांस छोड़ती हुई बोली, "मेरा काम तो आप लोगों को राह दिखाना से। मैंने अपना धरम पूरा कर दिया। आगे मानना-न-मानना आपका काम से।" भगवती ने उठते हुए कहा।

"पण्डतायनजी ने जो कहा सो सत्त से; भगवान पीड़ होने पर ही याद आवे है। हम इतने मूढ़ हैं कि इतनी बड़ी मुसीबत आने पर भी उसको याद नहीं किया।" एक स्त्री ने कहा।

"अभी और देख लो ! पानी गले तक तो आ पहुँचा से। सिर से ऊपर चला जाये तब भगवान को याद करना। भगवान केवल भगतों के आगे झुकें से। भगवान की किरपा होय तो अपंग अंगवान बन जावे हैं। सूखे खेत हरे हो जावे हैं। नदियों में बाढ रुक जावे है। सूखी गोदी हरी हो जावे है।" भगवती ने पाँव आगे बढ़ाते हुए कहा।

"पण्डतायनजी, बैठो ना ! जो कहा सो सत्त से। तुम्हीं बताओ क्या करें ?" मुखियानी ने पूछा।

"मुखियानी, मैं क्या बताऊँ ?" भगवती तुनककर बोली, "कुछ कहूँ तो समझोगी पाखण्ड करे सैं। कोई दूसरा भगवान की सेवा करे तो तुम उसपर लांछन लगाओ हो। मैं क्या बताऊँ ?" भगवती का चेहरा तमतमा उठा। वह कड़वी होती हुई बोली, "बाबाजी के जोहड़वाले मन्दिर में एक पुजारी आया है। भगवान के भगत हैं। काशीजी के पौंहचे हुए विद्वान हैं।...एक दिन उनकी सेवा कर रही थी कि किसी ने देख लिया। बस, फिर क्या था ! जितने मुँह उतनी बातें। कइयों ने तो यह कह दिया कि भगवती तीन महीने से गरभवती से। बात मरदों तक पहुँचा दी।" फुफकारती हुई वह बोली, "तुम्हारी जमीनें तो छिन ही रही हैं, देह में भी कीड़े चलेंगे। इतना अनरथ कि सेवा को भोग-विलास बना दिया जाये।" आँखों से आंसू चुआते हुए उसने ऊँची आवाज़ में कहा, "अगर मुझे सिर में राख ही डालनी थी तो पन्द्रह साल रंडापे के क्यों काटती ? कुन्दन जैसी दह थी : मुझे कोई भी बसा लेता। रँडवा जेठ ही के साथ बैठ जाती।"

कुएँ पर पानी के बरतन लिये बैठी उन स्त्रियों को जैसे अबोला मार गया था। उनमें से कई तो जैसे सहमकर रह गयी थीं। भगवती ने धोती के पल्ले से आँसू पोंछते हुए कहा, "मेरे भगवान सब कुछ देख रहे हैं। मैं उनके दरबार में सच्ची हूँ।" उसने घड़ा उठाया और अपने घर की ओर बढ़ने लगी। मुखियानी ने राह रोक ली और पाँव पकड़ती हुई बोली, "ये कुत्ती औरतें हैं ही ऐसी! एक दिन मुझे भी किसी ने बताया था लेकिन मैंने तो उलटकर मुँह तोड़ दिया। ऐसी फटकार दी कि फिर आगे नहीं पड़ी।" फिर पानी का घड़ा उसके सिर से उतारती हुई वह बोली, "इनको माफ कर दो पण्डतायनजी। गँवार आदमी को अच्छी बात नहीं सूझती। गाँव पर जो मुसीबत आयी है वह सबके लिए है। कोई रस्ता बताओ।"

भगवती खड़ी हो गयी और आँखों को फिर पल्लू लगाकर बोली, "पहले तो अपने मन साफ करो। मन सुद्ध होवे से तो बानी अपने आप सुद्ध हो जावे से।"

"हाँ, सो तो ठीक से। इब भगवान को कैसे परसन्न करें?" मुखियानी ने जोर देकर पूछा।

"कुछ भी कर लो। धरम-करम की थाह नहीं। हुमन कराओ, जग्ग कराओ, बरमभोज दो। दान-पुन्न करो। भगवान को इस्तुत करो। फिर देखियो उनके रंग। वे होनी को अनहोनी और अनहोनी को होनी बना देंगे।" भगवती ने सहज होते हुए कहा।

"कथा-कीरत हम तेरे से सुन सकती हैं। मन्दिर में मत्था टेक सकती हैं। लेकिन हुमन-जग्ग तो मरदों का काम है।" मुखियानी ने कहा।

"जब घर आये मरद को और सौ-सौ बातें पढ़ाती हो, उनके कानों में हागी-मूती सब डालती हो, तो यह भी उन्हें बता दो। औरत-जात मरद को पाप का रस्ता तो दिखावे है, द्वेस-भाव सुझावे है, लेकिन प्रभुभगती की बात कभी उसके कान में नहीं डाले है। सच-सच बोलना, तुममें से कभी किसी ने अपने मर्द से कहा है कि वह इधर-उधर बैठने और चौपड़-पत्ते खेलने की बजाय भगवान का जाप करे और सुने?" भगवती ने पूछा।

सब स्त्रियों ने दायें-बायें सिर हिला दिया तो वह तड़कती हुई बोली, "जब तुम लोगों के ये करम हों तो मेरे भगवान करोध होंगे ही।"

"हमें तो गोबर थापना, झाड़ू लगाना, दूध दोहना और बिलोना, पसुओं को पानी-सानी देना, चरखा कातना—ऐसे ही काम आवे हैं।" मुखियानी ने कहा।

"और चुगली-निन्दा का नाम क्यों नहीं लेती?" भगवती ने तुनककर कहा, "सबसे निपुन तो इसी काम में हो!"

मुखियानी और अन्य स्त्रियाँ हँस दीं। भगवती गम्भीर होते हुए बोली, "अगर मेरी बात मानो तो कहूँ। अगर एक कान से सुन दूसरे से निकालनी है तो

चुप रहूँ।"

"नहीं, जरूर मानेंगे। तेरे पैर धो-धोकर पियेंगे। तू तो देवी से।" मुखियानी ने कहा।

सुनकर भगवती मन-ही-मन फूल गयी, लेकिन अपना भाव छिपाये हुए धीमी आवाज़ में एक-एक शब्द पर जोर देती बोली, "अच्छा तो यूँ करो। कल को सब जनी मुँह अँधेरे असनान करो। फिर खुई के मन्दिर में जाओ। भगवान की मूर्ति और ठाकुरों को असनान कराओ, आरती उतारो और भोग लगाओ।"

स्त्रियों को चुप देख भगवती कुछ आशंकित हुई। उसने एक-एक कर सब पर नज़र डाली। फिर फैलकर बैठती हुई नथुने फुलाकर बोली, "बस, भगवान का नाम सुनकर चुप साध ली! अभी तो मैंने दान-पुन्न की बात छेड़ी नहीं से। भगवान के नाम पर हाथ से कुछ देने को कहती तो तुम घड़े यहीं छोड़कर घाघरे उठा भाग लेतीं।"

कुछ स्त्रियाँ यह सुनकर मुसकराने लगीं तो मुखियानी हँसती हुई बोली, "पण्डतायन जी, तू बात अच्छी करे से। सब ठीक बोले से।" फिर उसकी आँखों में झांकती हुई बोली, "पर हमारी मुसकिल भी तो समझ। सवेरे मुँह-अंधेरे उठकर मन्दिर चली गयीं तो दूध कौन निकालेगा, कौन बिलोयेगा? ढोरों को पानी-सानी कौन देगा? फसल तैयार हो रही से : मर्द लोग सवेरे ही खेतों पर चले जावे हैं। उन्हें रोटी कौन पहुँचायेगा? और फिर मन्दिर है भी बहुत दूर: दो गाँव परे।"

भगवती सोच में पड़ी। फिर सिर हिलाती हुई बोली, "हूँ, ये बात भी ठीक सै।"

"नूं कहूँ, भजन-बन्दगी का कोई ऐसा रस्ता बताओ जो यहीं हो सके। मर्दों को पता लग गया कि हम तिहाड़ के मन्दिर में जाती हैं तो यों ही हमारी टाँगें तोड़ देंगे।" मुखियानी ने कहा।

भगवती थोड़ी देर निरुत्तर हुई बैठी रही। उसके मुँह से अस्फुट-सा निकला, "कैसा गाँव से! मन्दिर नहीं। किसी साधू-महात्मा की समाधि तक नहीं।" फिर अतीत में खोयी हुई एकदम उदास आवाज़ में बोली, "मैंने तो सुना से...दूसरों से...उस बेचारे के तो जी भर के दरसन भी नहीं किये। केवल अग्नि माँ को साच्छी करके उसे पति माना था। स्वर्ग में बास हो इब...सुना बहुत दानीध्यानी आदमी था।...गाँव में मन्दिर बनाना चाहता था।"

"सच कहे तू! बहुत ही नेक था दरबारीलाल।" ताऊ की पत्नी ने लम्बी साँस छोड़ते हुए कहा।

कुछ देर के लिए एक भारी गहरी-सी ख़ामोशी छायी रही। भगवती की आँखों में आँसू छलक आये। औरों के जी भी भीग उठे। मुखियानी उसे दिलासा

देती हुई बोली, "सब कुछ भगवान के बस में से पण्डतायनजी !"

भगवती आँसू पोंछती हुई भर्रायी आवाज में बोली, "मेरे पास पैसा हो तो उसके नाम पर गाँव में मन्दिर बनवाऊँ।" फिर मुँह ऊपर उठाकर कहने लगी, "अगर इस गाँव में भगवान का आसन होता तो आज यह मुसीबत न आती !"

मुखियानी बात पलटने के लिए बोली, "पण्डतायनजी, कुछ और सुझाओ। मन्दिर बनवाने में तो भौत समै लगेगा। फिर ये काम उद्यम का है : मर्द ही कर सके हैं।"

"उनके मन में उद्यम पैदा करो।" मुखियानी की आँखों में आँखें डालती हुई भगवती बोली, "इस्त्री ही आदमी को पाप की राह दिखावे से, इस्त्री ही पुन्न की ओर ले जावे से। तुम चाहो तो अपने मर्दों को उद्यम दे सकती हो।... गाँव में ही मन्दिर बन सके हैं।"

"वह करेंगे, जरूर करेंगे। लेकिन अभी क्या करें?" मुखियानी ने आग्रह से कहा।

"गाँव में कीरतन करो। दिन ढले सब जनी किसी के घर इकट्ठी हो जाओ। भगवान की मूरती का सिंगार करो और उसके आगे कीरतन करो।" भगवती ने अर्थ-भरी आँखों सबकी ओर देखा।

"यह हो सके से। लेकिन तू करा।" मुखियानी ने कहा।

"सुनो," भीतर की खुशी को भीतर ही छिपाये भगवती ने लटकती हुई आवाज में कहा, "भगवान के भण्डार में किसी चीज की कमी नहीं से। ये सारा विरमाण्ड उसी का है। सारा मायाजाल उसी का से। प्रानी का कुछ नहीं से। वह मल-मूत्तर में डूबा खाली हाथ आवे से और जलती चिता में लेट खाली हाथ जावे से।"

सबको अपने प्रवचन से प्रभावित पाकर भगवती उन्हें समझाती हुई बोली, "इच्छा और तौफीक के अनसार भगवान के चरनों में कुछ-न-कुछ जरूर भेंट करो। सोना नहीं तो चाँदी दो, चाँदी भी नहीं तो वस्तर दो, नाज दो, फल-फूल दो ! भगवान बहुत दयालु हैं। उन्होंने भीलनी के झूठे बेर भी आदर से सुइकार किये थे। भगवान के नाम पर एक पैसा दान दो तो वे सौ देते हैं।"

मर्दों को कुएँ की ओर बालटियाँ उठाये आता देख स्त्रियाँ घबरा गयीं। वे एक-दूसरे के सिर पर घड़े रखवाने लगीं। घूँघट खींच लिये।

"मेरी बात भूलना मत। मर्द रात में घर आयें तो गाँव में मन्दिर बनाने की बात कान में जरूर डालना।" कहते हुए भगवती ने सिर पर घड़ा सँभाला और पाँव उठाकर बढ़ती हुई सबसे आगे निकल गयी।

बारह—

अगले ही दिन से तीसरे पहर को गाँव में रोज़ कीर्तन होने लगा। स्त्रियाँ हुमहुमा-हुमहुमाकर उसमें भाग लेतीं। वारी-वारी प्रत्येक स्त्री अपने घर में आयोजन करती। भगवान् के प्रसाद का प्रवन्ध भी उसी के जिम्मे होता।

चूल्हे-चौके से निपटकर गोद के वच्चों को गोद में उठाये और वड़े वच्चों को उँगली पकड़ाये वे पूर्व-निश्चित स्थान पर इकट्ठा हो जातीं और धूम से कीर्तन रचातीं। धीरे-धीरे मर्दों को भी इस आयोजन में शामिल कर लिया गया। जिस घर में कीर्तन होता उसका कोई प्रौढ़ मर्द भगवती के घर से भगवान् की सवारी सिर पर उठाकर लाता और फिर वापस पहुँचाता। भगवती के कहे अनुसार प्रसाद भी रामदयाल की दुकान से लाया जाने लगा।

अधिकांश स्त्रियाँ भगवान् की सवारी आने से पहले ही पहुँच जाती थीं। छोटे वच्चों को कपड़ा विछाकर लिटा दिया जाता। वड़े वच्चे उस घर के आँगन में या गली में पहुँच जाते और माँ-वहिन को गालियाँ देते हुए लड़ते-झगड़ते खेलते रहते। वच्चा रोने लगता तो उसकी माँ अपनी जगह वैठी-वैठी ही उसे दो-चार गालियाँ सुना देती और फिर गप-गोष्ठी में शामिल हो जाती।

कीर्तन से पहले नियम से गप-गोष्ठी और वाद को निन्दा-चुग़ली का सेशन होता। अधिकांश स्त्रियाँ इनमें वहुत दिलचस्पी लेतीं। प्रसंग गाँव के दैनिक जीवन से लिया जाता। कभी किसी सास-वहू का झगड़ा, कभी किसी के गर्भवती होने की सूचना, कभी किसी के अपने पति के हाथों पिटने की ख़वर, कभी किसी लड़की-लड़के के चोरी-छिपे प्रेम सम्वन्ध और कभी किसी और ही छोटी-मोटी घटना को विषय वना लिया जाता।

गप-गोष्ठी और निन्दा-चुग़ली कीर्तन के दौरान भी जारी रहतीं। ये स्त्रियाँ अपना अलग गुट वनाकर वैठतीं और सिर का कपड़ा ठीक करने के वहाने उसे अपने चेहरे के आगे फैलाकर वात कर लेतीं। हँसी को रोकना मुश्किल हो जाता तो इधर या उधर कन्धे में को होंठ देकर हँस लेतीं। भगवती खड़तालें वजाती और भजन गाती हुई उनकी ओर तरेरकर देखती तो वे ताली पीटती हुई आँखें मूँद यूँ स्वर में स्वर मिला देतीं जैसे कीर्तन में डूवी ही रही हों।

दिन ढलने तक गाँव के वातावरण पर अंगूरी की ढोलक, पारो के चिमटे और भगवती की खड़तालों की आवाज़ छायी रहती। भगवती ही ऊँची आवाज़ में धुन उठाती—

गोपिया-वल्लभ—राधेश्याम
जानकिया नन्दन—सियाराम
जोर से बोलो—राधेश्याम
मिलकर बोलो—सियाराम

अन्य स्त्रियाँ उसके पीछे एक सुर में गाती। भगवती जब थक जाती तो कुछ देर के लिए कीर्तन थम जाता। कभी-कभी वह भगवान् की महिमा बताने के लिए पौराणिक कथा सुनाने लगती। कभी भगवान् के उन अनेक-अनेक रूपों का विसुध-सी होती बखान करती जो उसने स्वप्न में देखे थे। स्त्रियाँ मुग्ध और चकित हुई उसके एक-एक बोल को सुनती और सिर हिला-हिलाकर ग्रहण करती। गाँव पर आया ग्रह किसी तरह टले, इसकी हरेक को चिन्ता थी।

कीर्तन और भगवान् के स्वरूप की नित नयी कहानियाँ सुन-सुनकर भगवती के प्रति सारे गाँव की निष्ठा बढ़ गयी थी। अब उसे बाहमणी न कहकर सब पण्डतायन जी कहने लगे थे। गाँव के मर्द तक उसकी प्रभु-भक्ति से प्रभावित थे। वह अब मुखिया और गाँव के अन्य प्रौढ़ मर्दों के बराबर बैठकर बात करती थी और वे सब आदर और श्रद्धा से उसकी हर बात को सुनते थे।

दुनीचन्द विशेष रूप से भगवती का प्रशंसक बन गया था। उसके घर कीर्तन बैठने की जब बारी पड़ी तो उसने भगवती को धोती और सवा पाँच रुपये और भगवान् के बिछौने के लिए गद्दा और रेशमी चादर दी। प्रसाद में रामदयाल की दुकान से मँगवाकर बर्फी बाँटी गयी। उसकी दुकान पर जब भी चार लोग इकट्ठे होते, वह कीर्तन की बात छेड़ देता और अन्त में सिद्ध करने की कोशिश करता कि भगवती सचमुच एक देवी है जिसने गाँव को पाप की राह से हटाकर पुण्य के रास्ते पर लगाने का जोखम उठाया है।

जब सारा गाँव भगवती की बात मानने-पूछने लगा तो एक दिन उसने यह सुझाव दिया कि गाँव में जग्ग-हवन और बरहम-भोज होना चाहिए। दुनीचन्द ने इस सुझाव का जी भरकर समर्थन किया और यज्ञ के लिए सवा दो सेर घी, सवा मन अनाज और ग्यारह रुपये नकद देने की घोषणा भी कर दी। गाँव के लोगों को इस काम के लिए अधिक उत्साहित न देख वह तुनककर बोला, "पजाबियों की सारी बुरी बातें सीख रहे हो, उनकी एक-आध अच्छी बात भी सीख लो। तुम लोग जग्ग का नाम सुनकर ही सोच में पड़ गये। वे तो खाली जगह मिलते ही रातोरात मन्दिर-गुरुद्वारा खड़ा करते हैं। पास-पड़ोसियों तक को पता उस समय चलता है जब वहाँ भजन-बन्दगी और कीर्तन शुरू हो जाता है।"

दुनीचन्द का समर्थन पाकर भगवती ने और भी जोरों के साथ कहा, "गाँव में होम-जग्ग और बरहम-भोज होगा तो देवता परसन्न होंगे, मनवांछित फल देंगे। पाप कट जायेंगे।"

चौधरी फिर भी चुप रहे तो वंसीलाल खँखारता हुआ वोला, "मुखिया जी, वुरा सौदा नहीं है। अगर जग्ग कराने से पाप कट जायें और भगवान परसन्न हो जायें तो कर ही लेना चाहिए।"

मुखिया ने अनुमति में सिर हिला दिया तो भगवती ख़ुश हो गयी। सोचती हुई-सी वोली, "वावाजी के जौहड़ के पास मन्दिर में जो पुजारी महाराज हैं, वह वहुत वड़े विद्वान हैं। सुना है कासीजी में पढ़े हैं। राम-नाम की लोई लेते हैं और हर समय राम-नाम की माला जपते रहते हैं।"

अपनी वात का प्रभाव देखने के लिए भगवती कुछ क्षण रुकी, फिर वोली, "वहाँ जो एक पंजावी वैठा है वह तो उन्हें भगवान ही समझे है। कहता है कि जव से इनका आसिरवाद मिला है, काम वढ़ता जा रहा है, वारे-न्यारे हो रहे हैं।...मेरी मानों तो होम उन्हीं पुजारी जी से कराओ। गाँव में पवित्र आत्मा के चरन पड़ेंगे तो सवका उद्धार होगा।"

"पुजारी को गांव में वुला लेते हैं, क्यों चौधरी जी?" दुनीचन्द ने मुखिया की ओर देखते हुए कहा।

"वुला लो।" मुखिया ने उत्तर दिया।

अगले दिन सवेरे ही पुजारी आ गया। सवने उसके चरण छूकर स्वागत किया। पुजारी का आसन सुतली से वुनी एक वड़ी-सी खाट पर था। अन्य लोग सामने वैठे थे। पुजारी गोरा, चिट्टा और तन्दुरुस्त था। वोस्की के कुरते और महीन किनारी की वारीक धोती में वह खूव फव रहा था। उसके तलवे विल्लौर की तरह चमकते हुए साफ़ थे। सव लोग मन ही मन उसके स्वास्थ्य और सौंदर्य की सराहना कर रहे थे।

मुखिया ने वात छेड़ी! पुजारी ध्यान से सुनने लगा। अपनी वात कहकर वह चुप हो गया तो पुजारी कुछ देर तक आँखें उठाये छत की ओर देखता रहा। उसके होंठों के सिरे नयी-नयी फूटी कोंपल की तरह कँपकँपा रहे थे। फिर उसने दृष्टि नीची की। कुछ क्षण इसी तरह अस्फुट-सा मुसकराता रहा, उसके वाद अपने सामने वैठे लोगों की ओर उसने देखा और वड़े भावपूर्ण ऊँचे स्वर में एक श्लोक वोला।

लोग हाथ जोड़े पूरी तन्मयता से सुन रहे थे। पुजारी ने आवाज़ को एकदम नीचे करते हुए पूछा, "इस श्लोक का अर्थ आपको ज्ञात है क्या?"

उसने सव पर नज़र डाली। सवके सिर झुके देख वह मुसकराया। फिर आवाज़ उठाकर वोला, "इस श्लोक में यज्ञ-हवन की महिमा वतायी गयी है। हवन से ब्रह्माण्ड विशुद्ध होता है। यज्ञ से विचार और अचार विशुद्ध होते हैं; और ब्रह्म-भोज से वैकुण्ठ के सुवर्ण-द्वार खुलते हैं।"

पुजारी फिर कुछ देर चुप रहा। उसके वाद उसने एक और श्लोक पढ़ा और

उसकी व्याख्या करता हुआ बोला, "यों तो फल-फूल का दान भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना गोदान। परन्तु हवन-यज्ञ और ब्रह्म-भोज की अपनी अलग ही महिमा है।"

समझा-समझाकर इनकी महिमा उसने बतायी और अन्त में बोला, "भगवान् अपने भक्तों की परीक्षा भी लेते हैं। वह देखते हैं कि भक्तजन की उनमें आस्था कितनी पक्की है। जो भक्त परीक्षा में पूरा उतरे उसे वे प्रत्यक्ष दर्शन देते हैं।"

वहाँ बैठे एक-एक जन के चेहरे पर पुजारी की दृष्टि गयी। फिर एक उँगली ऊपर उठाता हुआ वह बोला, "आपने सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र की कथा सुनी होगी। भगवान् ने परीक्षा लेने के लिए महाराजाधिराज को डोम का चाकर बना दिया था लेकिन महाराज की आस्था भगवान् में अडिग बनी रही। परीक्षा में वे पूरे उतरे...भगवान् प्रसन्न हो गये।" पुजारी ने अपना पूरा जादू शब्दों में उँडेलते हुए कहा, "मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि मन को पवित्र रखो और प्रभु में पूर्ण आस्था रखो। वे सभी दुखों को हर लेते हैं। उनके भण्डार भरे हैं: वे सबको सब कुछ देते हैं।"

पुजारी चुप हो गया तो मुखिया हाथ जोड़ता हुआ बोला, "महाराज, जग के लिए शुभ दिन बतायें।"

"आज शनिवार है...कल रविवार...परसों सोमवार और तरसों मंगलवार... बहुत शुभ दिन है—एकादशी का महापर्व है। प्रबन्ध हो सके तो उस दिन यज्ञ कर लें।"

"परबन्ध हो जायेगा। तीन दिन हैं। तीन दिन में सामान जुटा लेंगे,—क्यों चौधरी जी?" दुनीचन्द ने स्वीकृति लेने के भाव में मुखिया की ओर देखते हुए कहा।

"हाँ, कर लेंगे।" मुखिया ने उत्तर दिया।

दुनीचन्द तब मुखिया की ओर को झुका और उसके कान में फुसफुसाया। मुखिया ने अनुमति में सिर हिला दिया तो दुनीचन्द हाथ जोड़ता हुआ पुजारी से बोला, "महाराज, जग-होम के लिए पण्डित चाहिए। गाँव में तो केवल बराहमण हैं: सब अनपढ़। एक बसी पढ़ा है। वह भी शास्त्री नहीं, थोड़ी-सी फारसी पढ़ा है।"

पुजारी मुसकरा दिया। अन्य सब जने खिलखिला पड़े। बंसीलाल खिसियाना होकर दुनीचन्द को गुस्सा-भरी नजरों से घूरता रहा।

"गाँव में तो जाट-बामण हैं। बहुत पण्डताई दिखायी तो तुलसी रामायन की दो-चार चौपाइयाँ सुना दीं।" ताऊ ने भी बंसीलाल की चुटकी लेते हुए कहा।

हँसी की एक लहर फिर सबको हिलोर गयी। सबके सहज होते-न-होते पुजारी ने अपनी जादुई मुसकराहट के साथ उनकी आँखों में झाँकते हुए कहा,

"आप सबकी इच्छा होगी तो हवन-यज्ञ मैं करा दूंगा।"

महाराज, हमारी तो इच्छा पहले से ही है।" दुनीचन्द ने हर्षित होते हुए कहा।

"ठीक है।...कुछ वस्तुओं की आवश्यकता होगी। तीन पण्डित होंगे। उनके लिए पीले वस्त्र, सवा सेर चन्दन की लकड़ी, सवा मन बेरी की लकड़ी, सवा पांच सेर घी और इक्कीस सेर सामग्री। जो लोग हवन पर बैठना चाहें उनके लिए पीले वस्त्र।...खाद्य सामग्री चाहिए...ब्रह्मभोज के लिए कम से कम इक्कीस ब्राह्मण हों।...और दक्षिणा...बाहर से जो दो पण्डित आयेंगे उन्हें इक्कीस-इक्कीस रुपये दक्षिणा के लिए।...रहा मैं। आपकी जो श्रद्धा हो दे दें।"

थोड़ी-सी आपसी खुसर-फुसर के बाद मुखिया ने बात पक्की कर दी। पुजारी जाने के लिए उठा तो मुखिया ने आग्रह किया, "महाराज, भोजन तैयार है। खाकर जायें।"

"अन्न तो मैं दिन में केवल एक बार ही लेता हूँ...वह भी अपने हाथों से बनाकर।"

"फिर दूध ही पी लें।" मुखिया ने कहा।

"जैसी आपकी श्रद्धा," कहकर पुजारी फिर बैठ गया।

दुनीचन्द भागकर अपनी दुकान से चीनी ले आया। मुखिया दूध से भरा बड़ा गिलास लाया जिसमें ऊपर एक मोटी तह मलाई की थी। पुजारी विदा हुआ। मुखिया और कई अन्य लोग उसे गाँव के बाहर तक छोड़ने गये और फिर आकर बैठक में यज्ञ-हवन की योजना बनाने में लग गये।

सोच-विचार के बाद सबने तय किया कि हर घर से हैसियत को देखते पैसा और अनाज लिया जाये। यह भी तय किया गया कि त्यागियों के मुहल्ले से अनाज और पैसा इकट्ठा करने की ज़िम्मेदारी बंसीलाल की होगी; राजपूतों के घरों से सूबेदार की और जाटों के घरों से ताऊ और पहलादसिंह की। सब सामान इकट्ठा करके दुनीचन्द के पास जमा करा दिया जायेगा। बाक़ी सारा इन्तज़ाम वह करेगा।

मंगलवार को सवेरे ही गाँव के बीच चौगान में हवन शुरू हुआ। तीन पण्डित पीले वस्त्र पहने मन्त्रों के उच्चारण के साथ आहुतियाँ डाल रहे थे। पूरा गाँव हवन-सामग्री की सुगन्ध से महकता हुआ मन्त्रों की ध्वनि से गूंज रहा था।

गाँव के एक-एक स्त्री और पुरुष, बच्चे और बूढ़े ने आहुति डाली। भगवती एक-एक व्यक्ति से कह रही थी कि अविश्वास, छल और कपट को पूर्णरूप से त्यागकर हवन-कुण्ड में आहुति डालें। यदि एक व्यक्ति के भी मन में खोटी भावना रही तो न केवल हवन असफल हो जायेगा, बल्कि भगवान् उल्टे दण्ड देंगे।

दुनीचन्द यज्ञ के हर काम में सबसे आगे था। वह पीली धोती पहने, गले

में यज्ञोपवीत लटकाये हवन-कुण्ड के पास खड़ा सबको लहक-महककर बता रहा था कि यही असली सनातन धर्म है। पंजाबियों ने तो धर्म की भी सूरत बिगाड़ दी है। लाउड स्पीकर लगाकर कथा-कीर्तन करते हैं, जैसे भजन-बन्दगी न हो, सांग रचा रहे हों।

हवन की समाप्ति पर ब्रह्मभोज हुआ। इसमें अपने और आसपास के तीन गाँवों के सब एक सौ एक ब्राह्मण बैठे। गाँव के चौधरियों ने भोजन से पहले उन सबके पाँव अपने हाथों से धोये और भोजन के बाद दक्षिणा देकर उनके चरण छुए।

ब्राह्मणों को विदा करने के बाद गाँव के सब लोग भोजन करने बैठे ही थे कि छींटे पड़ने लगे।

"मुखियाजी, बहुत अच्छा सगुन है। इसका अर्थ है कि हमारा यज्ञ सफल हुआ। भगवान प्रसन्न हो गये हैं।" पुजारी ने प्रसन्न भाव से कहा।

वे लोग खाना छोड़ आकाश की ओर देखने लगे। बंसीलाल ने तेज़ी से उड़ी जाती बदली को देखकर कहा, "देख लो, कुछ देर पहले तक आकाश बिलकुल साफ था। बदली की परछाईं तक नहीं थी। पानी से भरी इस बदली को भगवान ने ही भेजा होगा।"

"आप लोगों ने देखा होगा कि प्रत्येक पुण्य पर्व पर, जैसे जन्म अष्टमी पर ही, वर्षा अवश्य होती है। इसका अर्थ होता है कि भगवान उस दिन बहुत प्रसन्न हैं। हम पापी लोग हैं। इसलिए देख-सुन नहीं सकते। मैं कहता हूँ कि इस समय गन्धर्वगण संगीत में मग्न होंगे और देवतागण हमारे गाँव पर कृपा-वर्षा कर रहे होंगे।" पुजारी ने बड़े विश्वास-भरे स्वर में कहा।

पुजारी की बातें सुनकर सब कोई खुशी से खिल उठे। दुनीचन्द खीर खाते में शड़ाप्-शड़ाप् की आवाज़ पैदा करता हुआ बोला, "पुजारी जी के उद्यम से ही ये धरम-करम हुआ है, नहीं हम पापी लोग तो पाप की खेती ही बोने में लगे रहते हैं।"

"जो कुछ हुआ है प्रभु की आज्ञा अनुसार हुआ है। परम पिता ने ही आप लोगों को विवेक दिया कि धर्म-कार्य करो। उसी ने प्रेरणा दी कि गाँव में हवन-यज्ञ इत्यादि किया जाये। भगवान् के ढंग बड़े न्यारे हैं। अब निश्चिंत होकर खेती करो। भगवान् आप लोगों की प्रत्येक मनोकामना पूरी करें। भण्डार भरे रखेंगे।" पुजारी ने उन्हें आशीर्वाद दिया।

गाँव में सभी को अब विश्वास था कि वे सचमुच पापी थे। साथ ही, यह विश्वास भी अब हो गया था कि हवन-यज्ञ और ब्रह्म-भोज के बाद उनके पाप धुल गये हैं। वर्षा के छर्राटे से दोपहर उतरते-उतरते हवा में कुछ खुनकी आ चली थी। अँधेरा उतरा, हवा के हलके झोंके भी राहत देने लगे। उस रात गाँव में सब कोई जल्दी ही सो गये।

तेरह—

अधिकतर लोग खेतों में थे जब पटवारी गाँव में पहुँचा। वह दुनीचन्द की दुकान पर रुक गया। राम-राम के बाद उसने मुखिया के बारे में पूछा।

"हाँ, गाँव में ही है। शायद बैठक में ही हो। कल कुछ ढीला था।...और सुनाओ, सुख है?" दुनीचन्द ने पटवारी के चेहरे पर आँखें गड़ाये हुए कहा।

"हाँ, सुख ही है। मुखिया को सरकारी हुक़्म देने आया हूँ। सरकार ने इस गाँव की जमीन ख़रीदने का तहरीरी हुक्मनामा जारी कर दिया है।" पटवारी ने सपाट स्वर में कहा।

"सरकार क्या सचमुच जमीनें खरीद रही है?" हैरानी से दुनीचन्द की चीख़-सी निकल गयी।

"मैं क्यों झूठ बोलूंगा लाला?" पटवारी ने जम्हाई लेते हुए कहा और मुखिया की बैठक की ओर जाने लगा।

"पटवारी जी, आप यहीं बैठो। मैं मुखिया को खबर कर देता हूँ।" कहकर दुनीचन्द धोती को कसकर बाँधता हुआ नंगे पाँव ही मुखिया के घर की ओर चल पड़ा। दो क़दम जाकर वह लौट आया और पटवारी से बोला, "पटवारी जी, कोई ग्राहक आये तो उसे रोक लेना। जाने मत देना। मैं बस गया और आया।"

पाँच-सात मिनटों में ही दुनीचन्द लौट आया और हाँफता हुआ बोला, "मुखिया आ रहा है। मगर पटवारीजी, यह तो बड़ा जुलुम है। अन्धेर है। पंजाबियों को बसाने के लिए जद्दी मालिकों को उनकी जमीनों से खदेड़ना कहाँ का न्याव से?"

"लालाजी, सरकार ही बेहतर जाने से। हम तो हुक्म के ग़ुलाम हैं।" पटवारी ने दुकान के अन्दर एक सरसरी नजर डालते हुए कहा।

इतनी देर में मुखिया भी आ पहुँचा। पटवारी को राम-राम बुलाकर वह उसके सामने ही बैठ गया, "पटवारीजी, बहुत दिनों के बाद दरसन दिये।"

"हाँ, आ ही नहीं सका। क्या हाल हैं आपके? लाला कह रहा था कि कल से कुछ ढीले हो।" पटवारी ने अपना बस्ता अपनी ओर खींचते हुए पूछा।

"हां पटवारीजी, परसों रात ज्वर हो गया था। इब ठीक है।" मुखिया हँसा और बोला, "कल इसे मैंने खेतों में खूब रगड़ा। मैंने कहा कि मैं कोई लाला तो हूँ नहीं कि तेरे जैसे ज्वर से डर जाऊँगा। तेरी दूध-दवाई से सेवा करूंगा। तेरे लिए नरम-नरम बिस्तर बिछाऊँगा। बस एक ही दिन रगड़ा खाकर भाग गया।" फिर बस्ते की ओर हाथ बढ़ाता हुआ बोला, "चलो, पटवारीजी, बैठक में

ही चलते हैं।"

"नहीं, वहाँ क्या जाना है? यहीं बैठकर बात कर लेते हैं।" पटवारी ने कहा।

"सुख है न?" मुखिया ने शंकित होते पूछा।

"सुख ही सुख है। सरकार ने तहरीरी इत्तला भेज दी है। जमीनें खरीदने के बारे में। वही दिखाने आया था।" पटवारी ने बस्ता खोलते हुए कहा।

"क्या सचमुच सरकार हमारी जमीनें ले रही है?" भय और हैरानी से मुखिया की आवाज गले में ही दब गयी।

"हाँ, कल मुझे तहसीलदार साहब ने तलब किया था। और भी कई पटवारी बुलाये गये थे। वहीं से मुझे तहरीरी इत्तला मिली है।" पटवारी ने कागज की तहें खोलकर मुखिया की तरफ़ बढ़ा दिया।

मुखिया ने कागज पकड़ लिया और दीवार से पीठ टेककर बैठ गया। उसके हाथ काँप रहे थे। कागज उसके हाथ से गिर गया। चिन्ता का ढेर उभरकर बह आया था। बोला, "पटवारीजी, कहाँ जायेंगे हम लोग? हमें बचाओ! हम उजड़ जायेंगे।"

"चौधरी, मैं तो तुम्हारा दास हूँ; जहाँ मदद कर सकता हूँ, जरूर करूँगा।"

मुखिया जड़ हुआ दीवार के सहारे बैठा जोर-जोर से साँसें लेता रहा।

पटवारी ने अपने एक-एक शब्द को जैसे गिनते हुए कहा, "चौधरी, इसकी तामील करानी है। तुम यह तसदीक कर दो कि गाँव को मुतअल्लका लोगों को तहरीरी इत्तला पढ़कर सुना दी गयी है। मुनादी करा दी गयी है।"

मुखिया वैसे ही बैठा रहा तो पटवारी उसे दिलासा देता हुआ समझाने लगा, "चौधरी, दिल क्यों छोटा करते हो? सब छत्तीस गाँव हैं जिनकी जमीनें सरकार ले रही है। अब हिम्मत करके जमीन का दाम अच्छा लगवा लो। बस्ता मेरे पास है। अपनी उस सारी जमीन की जमाबन्दी, खसरा, नम्बर देख लो जो सरकार लेगी।"

दुनीचन्द भी मुखिया को समझाने लगा तो वह उबल पड़ा, "दुनिया, तू मुझे बुलाने गया था। बताया क्यों नहीं कि पटवारीजी किस काम से आये हैं?"

"चौधरी, पटवारी कौन-सी अच्छी खबर लाया है जो मैं बताता।" दुनीचन्द ने सफ़ाई दी।

"पटवारीजी, सरकार हमें अन-आयी मौत मार रही है। क्या करेंगे, कहाँ जायेंगे, किसके आगे हाथ फैलायेंगे?" मुखिया के स्वर में पीड़ा और दर्द घुले थे।

"चौधरी, पल्ले पैसे हों तो सब काम-धन्धे आ जाते हैं। जिनकी कोठरी में दाने उनके कमले भी स्याने। तेरे पास चालीस-पचास हजार रुपये हो जायेंगे तो सलाह देनेवाले बहुत मिल जायेंगे।...अब कागज पढ़ लो।"

"अगर न पढ़ें तो...?" मुखिया ने पटवारी की आँखों में झाँकते हुए कहा।

"तो मैं तुम्हारे घर के दरवाजे पर इसे आटे से चिपका दूंगा।" पटवारी ने धमकी दी।

"और ?" मुखिया ने पूछा।

"तहसील, में जाकर हाकिमों को ख़बर कर दूंगा कि दारापुर के सफ़ेदपोश और मुखिया, चौधरी परतापसिंह वल्द दलीपसिंह, सरकरी इत्तलानामा लेने से मुनकिर है।" कहकर पटवारी ने मुखिया की ओर देखा और फिर बोला, "इसके बाद हाकिम जाने, उसका काम जाने।" फिर मुखिया को चेतावनी जैसी देते हुए बोला, "मुखियाजी, एक बात बता दूं। सरकार की नजर ठीक ही बनी रखनी चाहिए। वरना वह बड़े-बड़ों से चक्कियां पिसवा देती है। राजा-महाराजों को देख लो। जिसने भी सीधी तरह अपना राज नहीं छोड़ा उसे फ़ौज भेजकर सीधे रास्ते लगा दिया। चौधरी, जब सरकार के सामने राजों-महाराजों की पेश नहीं गयी तो हमार-तुमार किस गिनती में हैं।"

पटवारी और मुखिया दोनों चुप हो गये। दुनीचन्द दौड़कर उनके लिए शरबत ले आया।

'पहले चौधरी को पिला। वह ज्यादा गरम हैं।" पटवारी के लहजे में व्यंग्य था। मुखिया ने कोई उत्तर नहीं दिया। पर दुनीचन्द सफ़ाई पेश करता हुआ बोला, "पटवारीजी, मन दुखी हो तो जीभ भी कड़वी हो ही जावे से।"

"मैं चला जाऊँगा। मेरा क्या है? जाकर हाकिमों को ख़बर कर दूंगा।" पटवारी ने आवाज़ ऊंची करके कहा और अपना बस्ता खींचने लगा। मुखिया ने उसका हाथ पकड़ लिया और गिड़गिड़ाते हुए बोला, "पटवारीजी, हम पर बुरा वक्त आया है। इब साथ न छोड़ो। सखत बात मुंह से निकल गयी हो तो माफी देना।" पटवारी का घुटना दबाता हुआ मुखिया बोला।

"चौधरी, मेरा इसमें क्या क़सूर? हम तो हुक्म के बन्दे हैं। मैं इस काम को न करता तो और कोई करता। मेरा अपना बस चले तो इस गांव को पहले से दूनी जमीन दे दूं।" पटवारी ने मुखिया का हाथ अपने हाथ में ले लिया।

कुछ देर ख़ामोशी छायी रही। एकाएक जैसे कुछ याद करता हुआ दुनीचन्द ने मुखिया से कहा, "चौधरीजी, पटवारीजी के पास खतौनी है: जमाबन्दी, सजरा, नम्बर पता कर लो।"

"क्या करना है पता करके, दुनिया?" मुखिया ने भर्रायी आवाज़ में कहा।

"हौसला रखो चौधरी! असली मर्द वही होवे से जो मुसीबत में घबराये नहीं।" दुनीचन्द ने कहा। फिर मुखिया की ओर झुकता हुआ बोला, "चौधरी, आज पटवारीजी और इनकी खतौनी साथ-साथ हैं। जमीन का काम उसी वखत होवे है जब ये दोनों एक साथ हों, एक जगह। आज नम्बर अपने घर में बैठे-बैठे मिल जायेंगे, बाद में दस चक्कर काटने पर भी मुसकिल ही होगी।" दुनीचन्द ने

समझाया।

"पटवारीजी, खोलो खतौनी।" उसने कुरते के नीचे की फतुही से दो रुपये निकालकर पटवारी की मुट्ठी में दबा दिये।

"चौधरी, कहो तो दिखा दूं।" पटवारी ने मुट्ठी खोलते हुए कहा, "अपने पाँवों चलकर मेरे पास नम्बर पूछने आओगे तो एक नम्बर दिखाने के पाँच रुपये लूंगा।"

मुखिया फिर पटवारी का घुटना दबाने लगा, "मालिक, मेरी डोरी तेरे हाथ में है। मेरा दिमाग काम नहीं कर सै। भगवान के लिए पटवारीजी वही करो जिसमें मेरी भलाई से, गाँव की भलाई से।"

पटवारी ने शजरे निकालकर मुखिया को नम्बर दिखाये और हिसाब जोड़कर बताया कि सरकार उसकी पचास बीघे जमीन ले रही है। हजार रुपये बीघे का मोल हो तो नकद पचास हजार रुपये से कम उसे क्या मिलेंगे।

मुखिया सोच में डूबा हुआ बुदबुदाया, "सरकार का क्या भरोसा! कल को पैसे देने से इनकार कर दे तो हम गरीब आदमी उसका क्या बिगाड़ सकेंगे।"

"चौधरी, कैसी बात करते हो? सरकार क़ायदे-क़ानून से चलती है।" पटवारी ने समझाया।

जिस किसी को भी पता चला कि पटवारी आया है, वही सीधा दुनीचन्द की दुकान पर पहुँचा। देखते-देखते वहाँ तिल धरने की जगह नहीं रही। सामने गली में चारे के गट्ठों के ढेर लग गये थे। गाँव का हरेक व्यक्ति पटवारी को दो रुपये देकर उससे ऐक्वायर होनेवाली जमीन का ब्योरा प्राप्त कर रहा था। जिसके पास पैसे नहीं थे उसने वहीं दुनीचन्द से उधार लिये।

जब लगभग सारा गाँव वहाँ इकट्ठा हो गया तो पटवारी ने मुखिया से तहरीरी हुक्मनामा ले लिया। उसने खाँसकर गला साफ किया और इकट्ठा हुए लोगों पर एक निगाह डालकर सबको सुनाते हुए उसे धीरे-धीरे पढ़ने लगा:

> "सरकार ने मौज़ा बसई दारापुर में ग़ैर-काश्त जमीन को ऐक्वायर करने का फ़ैसला किया है। ऐक्वायर की जानेवाली जमीन का ब्योरा जिला कचहरी या तहसील या पटवारी मौज़ा से लिया जा सकता है।
>
> जिस किसी को कोई एतराज हो वह डिप्टी कमिश्नर साहब बहादुर की कचहरी में तीन माह के अन्दर-अन्दर अपने एतराज दर्ज करा सकता है। इस ज़िमन में अखबारों में इश्तहार भी दिया जा रहा है। मुश्तरी मनादी करायी जा रही है।"

पटवारी से हुक्मनामा सुनकर लोग सनाका खाकर रह गये। देर तक किसी को जैसे कोई सुध ही न रह गयी थी। बसीलाल के मुँह से बोल फूटा: "इस हिसाब से गाँव के दक्खन और पच्छम की सारी जमीन सरकार ले लेगी। उत्तर

में ही गांव की जमीन का थोड़ा-सा भाग वच जायेगा। पूरव में सारी ज़मीन वच जायेगी।"

"वे ज़मीन तो वैसे भी अच्छी नहीं। ढलान है, वरसात में पानी भर जावे है। सरकार उन ज़मीनों को लेती तो इतना दुख न होता।" ताऊ ने कहा।

"सरकार ने तो चुन-चुनकर अच्छी चौरस जमीन ली है। मैंने इसी साल तीनों खेतों में कुदाल से वरावर करवायी थी।" वंसीलाल ने कहा।

"सारी ही जमीन सरकार ले लेती तो कोई दूसरा धन्धा करने की वात सोचते। इव क्या होगा? जितनी ज़मीन वची से उससे तो खाने-भर के लिए नाज पैदा होगा नहीं और मेहनत उतनी ही करनी पड़ेगी।" मुखिया ने एक आह-सी भरते हुए कहा।

लोग ज़मीन लिये जाने के वारे में जितना ही सोचते उतना ही उनमें क्षोभ वढ़ता। मुखिया हाथ मलता हुआ वोला, "हमें तो भरोसा हो गया था कि सरकार इन जमीनों के वारे में भूल गयी है। मैंने कल ही दो खेतों में हल चलवाया है। दो कम्मी दो दिन से काम पर लगा रखे हैं। ज़मीन वचाने की खातिर क्या-क्या मैंने नहीं किया। पटवारी-गरदावर की खुशामदें कीं। हाकमों के सामने हाथ जोड़े, विनतियें कीं..."

"हजार रुपया होम-जग्ग पर भी तो खर्च किया से! इव कहाँ है पुजारी? कहता था कि वरखा करके भगवान ने अपनी परसन्नता परकट की सै।" ताऊ ने कहा और फिर झल्लाते हुएवोला, "उसने तो विसवास दिलाया था कि हमें अव कोई भय नहीं से। सवसे वड़ी सरकार ने हमारी परार्थना इक्कार कर ली है।"

वंसीलाल भड़कता हुआ वोला, "सव पाखण्डी हैं। वुलाओ भगवान के उस नातेदार पुजारी को? उस वखत तो यों वात करे था जैसे भगवान के घर में उसकी सीधी तार वजे से!"

"क्या करोगे वुलाकर? गुस्से में और कुछ ऊँची-नीची हो जायेगी।" मुखिया ने समझाया।

तभी पसीने में शरावोर और गीली मिट्टी में सना-लिपटा पहलादसिंह वहाँ आया। वंसीलाल ने देखते ही उसे छेड़ा, "आ भई चौधरी पहलादसिंह। इव तो इस गांव में एक तू ही चौधरी रह जायेगा। वाकी लोगों की चौधराहट तो सरकार छीन रही से।"

"इसकी ज़मीन वच गयी या...?" ताऊ ने पूछा।

"हाँ ताऊ, इसकी सारी ढेरी वच गयी। इसके सव खेत पूरव में हैं। वहाँ मुखिया और ताऊ के वाद इसी के सवसे जादा खेत हैं। इधर पच्छिम की तरफ़ तो इसने कुछ खेत वटाई पर ले रखे हैं।" वंसीलाल ने वताया।

उन लोगों की वातें सुनकर पहलादसिंह शरमा-सा गया। मन ही मन वह

बहुत प्रसन्न था कि उसकी ज़मीन बच गयी। वहाँ से निकलकर वह दौड़ता हुआ घर पहुँचा और अंगूरी को बाँहों में उठाकर चक्कर काटता हुआ बोला, "अंगूरी, मेरी ज़मीन बच गयी से। बंसी बाम्हण कह रिहा से कि मुखिया और ताऊ के बाद इब मैं गाँव मे सबसे बड़ा चौधरी हूँ।"

चौदह—

बरसात के अन्तिम दिन थे। मकई और बाजरे के भुट्टों में दाना पड़ गया था। सारा गाँव फसल की नलाई में जुटा हुआ था। मर्द लोग पौ फटते ही अपने-अपने खुरपे लेकर खेतों में पहुँच जाते थे। स्त्रियाँ दिन चढ़े उनके लिए भत्ता लेकर जाती और लौटते हुए खाली बरतनों के साथ-साथ चारे के गट्ठे भी उठा लाती।

दोपहर हो चुकी थी जब ताऊ पसीने और मिट्टी में सना हुआ दुनीचन्द की दुकान पर पहुँचा। इस थोड़े-से दिनों में ही वह पहले से कमज़ोर हो गया था। गालों की हड्डियाँ उभर आयी थीं और घुटनों के किनारों पर मांस सूख जाने से चपनियों के दोनों ओर गढ़े बन गये थे।

"चौधरी, कहाँ से आ रहे हो?" दुनीचन्द ने उसकी ओर पीढ़ी फेंकते हुए पूछा।

"कम्मियों की ओर गया था भाई।" ताऊ ने उदास आवाज़ में कहा। फिर बिफरता हुआ बोला, "दुनीचन्द, कम्मियों का तो इब दिमाग ही खराब हो गया से। जो लोग देखते ही राह छोड़ देते थे इब वे खाट पर बैठे-बैठे बात करें से। मैंने सोचा था," ताऊ बताने लगा, "कि चार-छह कम्मी एकबारगी लगाकर फसल को समेट लूँ। उनके मुहल्ले में गया तो वहाँ कोई मिला ही नहीं। बचना और उसका बाप मिले तो उन्होंने इनकार कर दिया। मैं हैरान, मुझे गुस्सा आ गया। मैंने कुछ कड़ा कहा तो बचना बोलता है, 'चौधरी, जबरदस्ती तो है नहीं। काम नहीं करना तो नहीं करना।' "

"ताऊ, ये कम्मी लोग इब शकूरबस्ती जाने लगे हैं। वहाँ तेल के जखीरे बन रहे हैं। अच्छी मजदूरी मिल जाती है। सारे-सारे दिन अब खेतों में जनौरों की तरह क्यों काम करें?" दुनीचन्द ने कहा।

"दुनिया, लिहाज भी कोई चीज होवे से। कई-कई पुश्तों से ये लोग हम लोगों

के भरोसे रहते आये हैं।उस दिन की ही याद कर दुनिया, जब गाँव-भर के कम्मी मुखिया की बैठक के बाहर इकट्ठा हुए थे और कलप-कलपकर क्या-क्या कह रहे थे !" ताऊ के स्वर में तिक्तता आ गयी थी।

ताऊ कम्मियों को कोस रहा था कि गली के मोड़ पर बंसी के ज़ोर-ज़ोर से बोलने की आवाज़ आयी।

"क्या हो गया बामण को जो इतना चिल्लाये से ?" ताऊ ने पूछा।

कुछ ही सेकण्डों में बंसीलाल इधर-उधर झाँकता हुआ दुनीचन्द की दुकान पर आ गया। दुनीचन्द ने पूछा, "पण्डतजी, क्या हुआ ? इतना क्यों चिल्ला रहे हो ?"

"अरे वो है न चाणन का छोरा—तरसेमा...मेरे खेत में बछिया हाँक दी। मैंने मना किया तो पता है क्या कहा उसने ? कहा, 'इब ये जमीनें सरकार की हैं।' "

"यह कहा उस कुत्ते-कमीन ने ?" ताऊ आग-बबूला हो उठा। "अभी तक तो हम जमीनों के मालिक हैं। कल को सरकार सँभाल लेगी तब इन कम्मियों के दिमाग क्या होंगे ?"

"ताऊ, चल मुखिया से बात करें।" बंसीलाल ने सुझाया।

"मुखिया ? वह तो निपुंसिक से। मैं पहले उसके पास गया था। पता है मुखिया ने क्या उत्तर दिया ? कहा, 'कम्मियों के मुँह मत लगो। चौधर जमीन के जोर पर होवे है। जब जमीनें ही नहीं रहीं तो चौधर कैसे रहेगी।' "

"ताऊ, मुखिया ने तो दम छोड़ दिया से। देखा नहीं कैसा सूखकर काँटा हो गया से।" दुनीचन्द ने दुखी मन से कहा।

ताऊ ने आवेश में आते हुए कहा, "दुनिया, यह मुसीबत अकेले मुखिया पर नहीं पड़ी से। सारे गाँव पर आयी है। मुखिया के समधी की शहर में रसाई है। उसका कुछ न कुछ बन जायेगा। हमें तो गाँव के कम्मी ही खा जायेंगे।"

वे बातें कर रहे थे कि कुछ बच्चों के साथ दो आदमियों को आते हुए देखा। वे पैण्ट पहने हुए थे; आँखों पर काला चश्मा था। देखने-भालने में और पहनावे से शहर के रहनेवाले जान पड़ते हैं।

बच्चे दूर से ही उन्हें मुखिया की बैठक दिखाकर बड़े रास्ते की ओर भागे। बंसीलाल ने उन्हें बीच में ही रोक लिया और उन दोनों आगन्तुकों के बारे में पूछा। बच्चे इतना ही बता सके कि वे मोटर में आये हैं और मुखिया का घर पूछ रहे थे।

इस सूचना की जाँच करने के लिए बंसीलाल और ताऊ बड़े रास्ते पर आये। वहाँ मोटर सचमुच खड़ी देख वे हक्के-बक्के रह गये।

ताऊ ने एक लम्बी साँस छोड़ते हुए कहा, "बंसी, समझ में नहीं आता क्या होनेवाला से ? पहले एक बार गाँव में मोटर आयी तो हमारी जमीनें चली गयीं।

इब फिर मोटर आयी है तो पता नहीं हाथ से क्या और जायेगा।" ताऊ ने जैसे धूल की परत पोंछते हुए चेहरे पर हाथ फेरा और परेशान-सा बोला; "मुझे तो मुखिया की नीयत पर भी शक होने लगा है। पता नहीं क्या करे है।"

"ताऊ, ऐसा मत सोचो। मुखिया भी बहुत परेशान है। कल रात उसने मुझे बुलाया था। अँधेरे में ही लेटा हुआ था। मैंने कहा भी, चौधरी जी, दिया न बत्ती, जी तो ठीक है? उसने बुझी हुई आवाज में उत्तर दिया कि जी कैसे ठीक हो भइया। जब मन के अन्दर अँधेरा है, आगे भी अँधेरा है तो बैठक में रोशनी करने से क्या फायदा। बोला कि भगवान् से यही प्रार्थना है कि जमीनें जाने से पहले मैं चला जाऊँ। जिस भूमि में जनम हुआ उसी भूमि में किरिया भी हो जाये।"

बंसीलाल का गला भर आया। भीगी हुई आवाज में बोला, "देर तक मैं उसके पास बैठा रहा। बीच-बीच में ही वह बोलता, और सुनकर लगता जैसे कहीं कुएँ के अन्दर से बोल रहा हो। कहने लगा कि गाय-बछिया अपना थान नहीं छोड़ना चाहती। हम तो आदमी हैं। कैसे अपने घर छोड़ सकेंगे। सरकार बहुत अन्याय कर रही।..."

ताऊ की आँखें भी डबडबा आयीं। दोनों मोटर से हटकर खेत की मेड़ पर बैठ गये। ताऊ ने पूछा, "बंसी, ये कौन लोग होंगे जो मुखिया से मिलने आये हैं?"

"परमात्मा ही जाने! रिश्तेदार-नातेदार दीखते नहीं। हाकिम होते तो पटवारी और दूसरे अहलकार साथ होते।" बंसीलाल ने होंठ बिचकाते जवाब दिया।

"शक्ल से तो पंजाबी दीखते थे। ऐसी तड़क-भड़क उन्हीं की होवे है।" कुछ क्षण ठहरकर फिर बोला, "कैसे मालूम हो ये लोग कौन हैं।"

"चले जायें तो मुखिया से पता कर लेंगे। कोई बिसेस बात ही होगी जो मोटर में आये हैं।" बंसीलाल ने कहा।

"सुख हो! इब तो मोटर देख दिल दहल जाये से।" ताऊ ने सहमते हुए कहा।

दोनों खेत की मेड़ पर ही बैठे थे कि मुखिया उन दोनों लोगों के साथ गली के मोड़ पर दिखाई दिया। ताऊ और बंसीलाल दोनों ने उन्हें ध्यान से देखा।

"ताऊ, ऐसा लगे है कि मुखिया भी उनके साथ जा रहा है। देखो न, उसने बारीक किनारी की धोती और रेशमी कुरता पहन रखा है।"

"हाँ, लगे तो है।" ताऊ ने डूबी-डूबी आवाज में कहा।

वे तीनों जब कार के पास पहुँच गये तो उनमें से एक ने आगे बढ़कर कार का दरवाजा खोला और जरा झुकते हुए मुखिया को बैठने के लिए कहा। मुखिया के बाद वह स्वयं भी बैठ गया। दूसरा व्यक्ति आगे बैठा। कार ने घुर-घुर की

आवाज़ की ओर सफ़ेद-सा धुआँ छोड़ती जिधर से आयी थी उधर को ही धीरे-धीरे बढ़ गयी। पीछे धूल का बादल-सा रह गया।

"कहाँ गया मुखिया ? कहाँ ले गये ये लोग उसे ?" ताऊ ने डरी-डरी आवाज़ में पूछा।

तभी उन्होंने देखा कि नजफ़गढ़ रोड पर जाकर कार रुक गयी और वे तीनों नीचे उतर आये। मुखिया हाथ के संकेत से उन्हें कुछ बता रहा था। थोड़ी देर वहाँ ठहरकर वे तीनों आगे चले गये।

ताऊ और बंसीलाल गाँव लौट आये। दुनीचन्द से पूछा तो वह उलटा उनसे मालूम करने लगा। मुखिया के घर से पता करवाया तो इतना मालूम हो सका कि दो जने आये थे और मुखिया को अपने साथ शहर ले गये हैं।

शाम होने पर भी मुखिया वापस नहीं आया तो सबके मन में खुदबुद-सी होने लगी। ताऊ, बंसीलाल और कई और जन दुनीचन्द की दुकान पर लालटेन की पीली रोशनी में बैठे मुखिया की प्रतीक्षा करने लगे। काफ़ी देर बाद फिर वे उठकर नजफ़गढ़ रोड की ओर जानेवाले रास्ते पर गये। सड़क पर जैसे ही मोटर गाड़ी की आवाज़ आती और उसकी रोशनी में काली बजरी और दोनों ओर के पेड़ चमक उठते तो वे साँस रोक लेते। पर गाड़ी जब गाँव की ओर मुड़ने की बजाय आगे निकल जाती तो उनके दिल को धक्का-सा लगता।

जब रात गहरी हो गयी और साँ-साँ की आवाज़ आने लगी तो वे अपने-अपने घरों को लौट गये और अँधेरे में आँखें गड़ाये बेचैनी से पहलू बदलते रहे। कभी सामने आशा और ख़ुशी की चमक-भरी लहरियाँ उतरा आतीं तो कभी निराशा की घुटन में साँस तक घुटने लगती।

पन्द्रह-

मुखिया जब कार से ही गाँव लौटा तो पहरा शुरू हो चुका था। सारे गाँव के लोग अँधेरे में अपनी-अपनी चिन्ताओं को लिये सोये पड़े थे। केवल मुखिया की बैठक में एक मैली-सी लालटेन जल रही थी। मोटर की आवाज़ और तेज़ रोशनी घरों की दीवारों से टकरायी तो कुछ लोगों की आँख खुल गयी।

पुरवा चल रही थी। दूर आकाश के एक कोने में कभी-कभी बिजली चमक जाती, जैसे बुझते हुए अलाव की लाट हवा के तेज़ झोंके में लहराकर फिर बैठ-

जाये। उसके बाद बीच-बीच में की हलकी-सी गरज भी सुनाई आती, जैसे खोर में छिपा कुत्ता हवा के झोंके पर गुर्रा उठे। सारी हवा में गाँव से बाहर सूखते गोबर की दुर्गंध भरी थी।

मुखिया जब अपनी बैठक की ओर जा रहा था तो गली में घरों के आगे सोये कई लोगों ने चौंककर गरदन उठायी और पूछा, "कौन है ?"

"मैं हूँ" इतना ही कहकर मुखिया कुछ और पूछे जाने से बचने के लिए अपनी चाल तेज कर देता। वह अपने में ही लज्जित-सा था क्योंकि मुखिया बनने के बाद से आज तक कभी इतनी देर घर से बाहर नहीं रहा था। उसके पैरों की चाप सुनकर कई लोग उसे सिर्फ यह जताने के लिए खँखारे कि वे जाग गये हैं और देख रहे हैं कि वह अब लौटा है। यह समझकर उसे और भी लाज लग रही थी। बैठक में पहुँचते ही उसने लालटेन बुझा दी और छत पर चला गया।

तीनेक घरों के बाद ही ताऊ का घर था। वह अभी तक सोया नहीं था। मुखिया की छत पर खाट के घसीटे जाने की आवाज सुनकर उसने पुकार मारी, "कौन, चौधरी से ?"

"हाँ, मैं हूँ।"

"कहाँ गया था चौधरी ? बहुत देर से पलटा से ?"

"सहर गया था। कुछ काम था।"

"लौटा कैसे ? आधी रात और रास्ता उजाड़ !"

"मोटर छोड़ गयी से।"

"सुख सै ?"

"हाँ, सुख ही सुख सै," कहकर मुखिया ने बात को खतम कर दिया। पर न नींद उसे आ रही थी, न ताऊ को ही।

सवेरे उठते ही मुखिया उसके यहाँ पहुँचा। ताऊ खेतों में गया हुआ था। मुखिया उसकी टोह लेता हुआ उसके कुएँ पर पहुँचा। वहाँ बंसीलाल भी था। मुखिया ने दोनों को राम-राम कही और हँसते हुए बोला, "वाह, बंसी भी यहीं है। मैं चौधरी से मिलकर तुम्हारी तरफ ही आने वाला था।" फिर ताऊ को सम्बोधित करता हुआ बोला, "क्यों ताऊ, फसल की कटाई कब शुरू कर रहे हो ?"

"इब अपने आप ही करनी है। जब चाहूँगा कर लूँगा। कम्मी तो काम से जवाब दे रहे हैं।"

"इनके दिमाग ही खराब हो गये हैं। कोडू और रीठा को आये तीन दिन हो गये हैं। पहले दो बार छोटे छोरे को भेजा। फिर दलील ने चक्कर लगाया।" आगे आवाज ऊँची करता बोला, "तुम जब मेरे पास आये थे तो मैं वहीं से लौटा

था। दोनों में से कोई भी घर पर नहीं मिला। पता नहीं कहाँ मर गये हैं !"

"चौधरी, मर नहीं गये। मेहनत-मजदूरी करने शकूरवस्ती जावें हैं। दुनिया बतावे था वहाँ तेल के जखीरे बन रहे हैं। कोई पंजाबी ठेकेदार उन्हें लालच देकर ले गया है। सुना है तीन रुपये दिहाड़ी मिले से।"

"अच्छा !" मुखिया अचरज में पड़ा फिर अटकते हुए बोला, "कम से कम बता तो देते। मैं कोई और इन्तजाम करता।"

"चौधरी, नूँ कहूँ तो गुस्सा मत करना।" ताऊ के स्वर में गरमी थी—"तू गांव का मुखिया से, सबसे बड़ा चौधरी से। अगर कम्मी तेरा काम नहीं करेंगे तो औरों की परवा वे क्यों करेंगे ? मुझे तो इतना गुस्सा है कि जी चाहे से कि इनके घर जला दूँ। अभी तो ज़मीनें हमारी मलकीयत हैं : कल को सरकार ने ले लीं तो ये हमारे बराबर बैठना चाहेंगे !"

"छोटी जात का जरफ कम हो सै। इन्हें थोड़ा-सा पाकर ही अफारा हो जावे से।" बंसीलाल ने कहा।

"भगवान ने चाहा तो हमें इनकी ज़रूरत ही नहीं रहेगी।" कहकर मुखिया रुक गया। फिर कुछ सोचकर उनकी ओर देखता हुआ बोला, "कल मुझे उत्तमपरकाश ने बुलाया था। वे दो आदमी, जो मुझे लेने आये थे, उत्तमपरकाश के ही भेजे हुए थे।"

इतना सुनते ही ताऊ और बंसीलाल ने एक-दूसरे की ओर ऐसे भाव से देखा जैसे चोर पकड़ लिया हो। ताऊ ने अचरज दिखाते हुए कहा, "अच्छा ! मुझे उनके आने का तो पता है, जाने का नहीं।"

"हाँ, दिन ढले आये थे। बोले, 'उत्तमपरकाश खुद आता लेकिन दफ्तर में बहुत काम होने से वह नहीं आ पाया।' "

"उत्तमपरकाश ने किस लिए बुलाया था ?" ताऊ ने खोज निकालना चाही कि वह उनकी ज़मीनें बचाने का जतन कर रहा है क्या और मुखिया को इसीलिए बुलाया हो !

"ज़मीन के बारे में ही काम था," कहकर मुखिया ने इधर-उधर देखा। फिर ताऊ और बंसी की आँखों में झाँकता हुआ बोला, "हमारे कारन उसे भी बहुत चिन्ता है। कह रहा था जिस दिन मौसा आये उसी दिन से हमारी जमीनें बचाने की दौड़धूप में लगा है।"

"कुछ बनी बात ?" ताऊ ने आशा की हुमक को भीतर ही छिपाते हुए पूछा।

"नां...कहता था सरकार जमीन जरूर लेगी। हाकिम नहीं माने...।" मुखिया ने उदास होकर कहा।

"अच्छा, सरकार हमारी क्यों दुश्मन बन गयी है ?" ताऊ ने पूछा।

"यह तो सरकार जाने। उत्तमपरकाश बेचारा हर बात में हमारा ही लाभ चाहे से।" मुखिया ने दिलासा बँधाते कहा, "कह रहा था, मैं यही जतन करूँगा कि हमें लाभ हो। कम जमीन देकर ज्यादा पैसा मिले।"

"वह कैसे?" बंसीलाल ने पूछा।

"कह रहा था अगर हम पहले सड़क के पारवाली जमीन बेच दें तो हमें बहुत लाभ हो सकता है।" कहकर मुखिया ने उनकी ओर देखा।

ताऊ की आँखों में एक कड़वापन-सा झलक आया। मुखिया की ओर देखता हुआ बोला, "जमीन बेचकर हमें कैसे लाभ होगा?"

"यह तो उसने बताया नहीं।" मुखिया सिर हिलाता हुआ बोला, "इतना ही कहा कि कोई और गाहक न मिला तो उसकी कम्पनी जमीन खरीद लेगी।"

"चौधरी!" ताऊ ने तीखी आवाज में पूछा, "इधर की जमीन सरकार ले रही से, उधर की उत्तमपरकाश लेना चाहे से—यह बता हम कहाँ जायेंगे? किसके दर पर बैठेंगे?" फिर धीमे से बोला, "चौधरी, मुझे पहले ही लगा था कि कोई गड़बड़ जरूर है जो तू बिना बताये सहर भाग लिया।..."

मुखिया का चेहरा उतर गया। अपने को सँभालता हुआ बोला, "चौधरी, तू तो मेरे ऊपर ऐसे गुस्सा हो रहा है जैसे मैं जमीन बेच आया हूँ। मैं तो इतना ही बता रहा था कि मुझे उत्तमपरकाश ने बुलाया था और बुलाने का कारन क्या था? तू नहीं सुनना चाहता तो जाने दे।"

मुखिया चलने को उठा। बंसीलाल ने हाथ पकड़ते हुए आग्रह से कहा, "चौधरी, बैठ न! तू तो बुरा मान गया।"

"नहीं पण्डतजी, मुझे जाने दो। चौधरी एक दिन पहले भी बैठक में आकर बेइज्जती कर गया से।" मुखिया उलाहना देता बोला, "यह यही समझे से कि मेरी ही सब कसूर है। जमीनें जा रही से हैं तो मेरे कारने! कम्मी लोग सिर उठाने लगे हैं तो मेरे कारण!"

मुखिया को उत्तेजित देख ताऊ कुछ नरम पड़ा। बोला, "चौधरी, आजकल मुझे नयी-नयी नकेल पड़े बैड़ की तरह बात-बात पर गुस्सा आ जाता है। मेरा जी ठीक नहीं है।"

ताऊ को शान्त हुआ देख मुखिया ने समझाने के ढंग से कहा, "उत्तमपरकाश ने आप लोगों को अपने दफ्तर में बुलाया है। दिन ढले मोटर आयेगी। वह आप आना चाहता था लेकिन यहाँ बात ठीक से होती नहीं..."

"अगर हम न जायें तो?" ताऊ ने पूछा।

"चौधरी, नहीं जाओगे तो वह हमें फाँसी नहीं चढ़ा देगा। लेकिन रिश्तेदारी और बिरादरी का मामला है। जाने में हर्ज भी क्या है!" मुखिया ने समझाया, "जमीन तो वह तभी लेगा जब हम बेचेंगे। उसकी बात नहीं जँचेगी तो अपने घर

लौट आयेंगे।"

ताऊ असमंजस में पड़ गया। उसने मुखिया की बात का कोई उत्तर नहीं दिया।

"ताऊ केह कहते हो ?" बंसीलाल ने थोड़ी देर राह देखने के बाद पूछा।

"केह कहूं। मेरी तो अक्कल जवाब दे गयी से। सिर बज्जर बन गया से।" ताऊ ने बंसीलाल की ओर देखते हुए कहा।

"मेरे विचार में तो जाने में कोई हरज नहीं। मेल-जोल से ही सारे काम बने हैं। उत्तमपरकाश को बात भायेगी तो मान लेंगे, नहीं तो राम-राम कहकर लौट आयेंगे।" बंसीलाल ने जोर देते हुए कहा।

"जैसी तुम लोगों की मरजी।...लेकिन मैं एक बात कह दूं। पूरब की जमीन बेचने का मेरा मन नहीं।" ताऊ ने अपना निश्चय बताया।

"ताऊ, हम रजिस्टरी कराने तो जा नहीं रहे। हम तो उत्तमपरकाश की बात सुनने चल रिहे हैं..." बंसीलाल ने कहा। फिर मुखिया की ओर देखते हुए बोला, "चौधरी, ठीक है। हम चलेंगे।"

"कौन-कौन चलेगा ?" मुखिया ने पूछा।

"सोच लो। जाने को तो सारा गांव राजी होगा लेकिन मोटर में कितने आदमी समायेंगे !" बंसीलाल ने कहा।

"मेरे विचार में—ताऊ चले, तगों के मुहल्ले से तू होगा। तौंवड़ों में सेरसिंह को ले लेंगे।" मुखिया बोला।

"सेरसिंह सुभाव का कड़वा है।" बंसीलाल ने आपत्ति की।

"हमें उससे कौन-सी अदालत में जिरहा करानी है।" मुखिया ने हँसते हुए कहा।

"सूबेदार को ले लो। दुनिया-भर घूम आया है।" बंसीलाल ने सुझाया।

"हाँ, उसको तो मैं भूल ही गया था बस ?..." मुखिया ने कहा।

"दुनिया को जरूर ले लो। स्याना आदमी है। बनज-व्यापार की ऊँच-नीच समझे सै।" बंसीलाल बोला।

"ठीक है। बस—ताऊ, तू, गाड़ूसिंह, दुनीचन्द और मैं पांच जने हो गये।" मु[illegible]या ने उँगली पर गिनते हुए कहा।

"पांच में परमेसुर होवे है; क्यों ताऊ ?" बंसीलाल ने मुसकराते हुए कहा।

"ठीक सै।" ताऊ ढीली आवाज में बोला।

थोड़ी देर बाद मुखिया ने उठते हुए कहा, "अच्छा तो तैयार रहना। मेरी घेर में आ जाना। दिन ढले मोटर आयेगी।" कहकर मुखिया आगे बढ़ गया।

चार-छह क़दम जाकर मुखिया कुछ सोचता हुआ फिर रुका और उनकी ओर मुड़ता हुआ बोला, "अभी घर में बात न करना। औरतों की मत उलटी

होवे सै। अभी से क्यों पीड़-स्यापा खड़ा करायें। मैंने तो अभी दलील से भी कुछ नहीं कहा।"

"चौधरी, तू चिन्ता न कर।" बंसीलाल ने उसे निश्चिन्त किया।

"अच्छा सूबेदार और दुनिया से तू ही बात कर सम्यो वसी। मौक़ा मिला तो मैं भी मिलूंगा। पर तू मत भूलियो।" मुखिया ने ताकीद की।

मुखिया के इतना-इतना मना करने पर भी गाँव में ख़बर फैल ही गयी कि पूरब की ज़मीन भी बिक गयी है। मुखिया कल शहर जाकर चुपचाप सौदा भी कर आया है। गाँव की स्त्रियाँ और पुरुष यह ख़बर सुनकर भिन्ना उठे। सभी को गुस्सा था कि मुखिया कौन होता है उनकी ज़मीनों का सौदा करनेवाला? त्यागियों की स्त्रियाँ तो अपने मुहल्ले में इकट्ठी होकर उसे भर-भर मुँह गालियाँ दे रही थी। जाटों के मुहल्ले में अंगूरी अपने दरवाज़े पर खड़ी आने-जानेवाली हर स्त्री को ख़बर सुनाकर कहती · "मुखिया आप तो लुट-पुट रहा से, इब हमें भी लुटाने पर उतारू से।"

· इनमें से फिर जिसका मर्द घर आता वह उसे मुखिया की बात बताती और कहती कि जाकर मुखिया से पूछे कि उनकी ज़मीन उसने क्यों बेची है। हर मिनट के साथ बात फैल रही थी। धीरे-धीरे यह भी साथ जोड़ दिया गया कि मुखिया ने उनकी ज़मीनें बेचकर रक़म हड़प ली है। अब नये मालिक पुलिस को लेकर आयेंगे और उन्हें ज़बरदस्ती बेदख़ल कर देंगे।

· :मुखिया अपनी बैठक में पहुँचा तो कुछ लोग पहले से ही वहाँ बैठे थे। उन्हें देख मुखिया कुछ घबराया और कुछ हैरान भी हुआ। उसने अँगोछे से मुँह और सिर का पसीना पोंछा। फिर अँगोछे से ही पंखे का काम लेता हुआ बोला, "भादरों बीत रहा है लेकिन अब भी गरमी जेठ-हाड़ जैसी पड़े से।"

· कोई कुछ नहीं बोला। सब बिटर-बिटर मुखिया के मुँह की ओर देखते रहे। मुखिया ने सोचा, शायद कम्मियों ने उनके खेतों में भी काम करने से इनकार कर दिया है। इसी बारे में सलाह करने आये हैं। वह सोच ही रहा था कि कैसे बात शुरू करे कि उसकी नज़र एक तरफ़ बाँस की सीढ़ी से लगे खड़े पहलादसिंह पर पड़ी। उसे देख प्रसन्न भाव मुखिया बोला, "सुन से चौधरी पहलादसिंह, आज इस बखत कैसे आना हुआ? अभी क्या फसल की कटाई शुरू नहीं की?"

"नहीं चाचा। अकेला आदमी हूँ। क्या करूँ। कम्मी मिलते नहीं। उधर छोरे का चित ठीक नहीं था।" पहलादसिंह ने कहा।

"क्यों क्या हो गया छोरे को?" मुखिया ने चिन्तित होते पूछा।

"जुअर था। अब ठीक है। तिहाड़वाले स्वामी से दवाई लाया था।"

"हाँ, मैंने भी सुना है वह स्वामी बहुत स्याना है!" मुखिया ने कहा।

पहलादसिंह कुछ देर चुप रहकर बोला, "...ऊपर से आज यह खबर सुनी कि तुम हमारी जमीनों का सौदा कर आये हो।"

"तुम्हारी जमीनों का सौदा ! मैं कर आया हूं ?" मुखिया ने अचकचाते हुए कहा। फिर ज़रा तीखे स्वर में पूछा, "तुम्हारा दिमाग तो ठीक है ?"

"चाचा, मैंने तो जो सुना है, बता दिया।" पहलादसिंह ने नपा हुआ जवाब दिया।

"तैंने बात तो ऐसे कही है जैसे रजिस्टिरी पर तसदीकी अंगूठा तूने लगाया था।" फिर कड़ी आवाज़ में मुखिया ने पूछा, "ठीक-ठाक बता तुझसे यह बात किसने कही है ?"

"मुझे तो मेरी औरत ने बताया है। वैसे सारा गांव यही कह रहा है।" पहलादसिंह ने खैरे स्वर में कहा।

"धतकार है तेरे मर्द होने को पहलाद !" मुखिया तिरस्कार से बोला, "अरे अपनी औरत की बात पर अकीन करके मेरे से लड़ने आ गया ? तेरी औरत क्या मेरे संग थी जब मैंने सौदा किया था ?" मुखिया ने उसकी तरफ़ को हाथ लहराते हुए कहा।

पहलादसिंह से कोई जवाब नहीं देते बना तो मुखिया उसकी खिल्ली उड़ाता हुआ बोला, "इब चुप क्यों है ? जा घर जाकर लुगाई से पूछ आ कि आगे क्या कहना है !"

मुखिया ग़ुस्से में पहलादसिंह और वहां खड़े लोगों को फटकार रहा था कि सूबेदार माड़ूसिंह को साथ लिये बंसीलाल वहां पहुंच गया।

"चौधरी, केह बात से बहुत गुस्से में हो ?" बंसीलाल ने पूछा।

"पहलाद कहे से कि मैं इनकी जमीनों का सौदा कर आया हूं। यह बात इसकी लुगाई ने बतायी से।" मुखिया ने पहलादसिंह की तरफ़ हाथ उठाकर उसी तरह कड़वे स्वर में कहा।

"अरे मूढ़, मर्द अगर औरत के कहे अनुसार चले तो रोज पचास लोगों से झगड़ा होगा। समझा !...जा दौड़कर दुनीचन्द को बुला। फिर बताते हैं तुम्हें असली बात क्या है।" बंसीलाल ने कहा। फिर सूबेदार से बोला, "आ सूबेदार इधर बैठ। यहां हवा आवे से।"

"मुखिया, पहलाद आदमी बुरा नहीं सै। हर किसी को अटक-भीर में अपनी जान देने को तैयार रहवे सै।" बंसीलाल ने मुखिया को ठण्डा करने के लिए कहा। मुखिया उसी तरह तमतमाया हुआ बैठा ज़ोर-ज़ोर से हुक़्क़ा गुड़गुड़ाता रहा।

दुनीचन्द आ गया तो बंसीलाल ने सारी बात ब्योरेवार बतायी। बीच-बीच में कहीं उसे शक होता तो मुखिया की ओर देखने लगता और फिर आगे बढ़ता।

जब सारी बात बता चुका वह तो मुखिया ने हुक्के की नय अलग करते हुए बोला, "समझे ? हम उनकी बात सुनने के लिए जा रहे हैं। ठीक लगे तो मान लेना। न लगे तो वापस आ जायेंगे।"

"जाने में कोई हर्ज नहीं," दुनीचन्द ने बड़े भारी-भरकमपने से कहा, "बड़े लोग इज्जत-मान से बुलायें तो जरूर जाना चाहिए।"

"न सही और कुछ, दिल्ली ही देख आयेंगे।" बंसीलाल ने मुसकराते हुए कहा।

"क्यों, हो गयी तेरी तसल्ली या अभी कोई कसर रहे से?" मुखिया ने पहलादसिंह से पूछा।

पहलादसिंह उत्तर में केवल मुसकरा दिया। सब लोग जाने के लिए तैयार हुए तो पहलादसिंह भी उठ खड़ा हुआ। बंसीलाल उसे समझाता हुआ बोला, "इब घर जाकर लुगाई के पीछे डोंग न उठा लीजो।" फिर वह भी उठता हुआ मुखिया से बोला, "अच्छा चौधरी, रोटी-पानी खाकर आते हैं।"

"जल्दी आना। मोटर को खड़ा न रहना पड़े। जितनी जल्दी जायेंगे उतनी जल्दी ही पलट आयेंगे।" मुखिया हुक्का फिर मुंह से लगाते हुए उन लोगों को बैठक से जाते हुए देखता रहा।

सोलह—

आकाश पर घने बादल उतर आये थे। समय दोपहर का था मगर ऐसा लगता था जैसे शाम ढल चुकी हो। आकाश में एक तरफ़ बिजली कौंध रही थी और रह-रहकर हलकी-हलकी गरजन भी हो उठती। सारे में कच्चे गोबर की बू फैली थी। लोग-बाग बारिश के डर से अपना बाहर पड़ा सामान समेट-सँभाल रहे थे।

पटवारी बग़ल में खतौनी दबाये जल्दी-जल्दी पाँव उठाता हुआ गाँव की ओर आ रहा था। वह सीधा मुखिया की बैठक में गया। मुखिया को खाट पर औंधे मुंह लेटा देख पटवारी दहलीज़ में ही ठिठक गया। कुछ सेकिण्ड वह इस प्रतीक्षा में रुका रहा कि उसकी आहट पाकर शायद मुखिया आप ही उठे। मुखिया वैसे ही पड़ा रहा तो पटवारी ने खाँसते हुए राम-राम बुलायी। हड़बड़ाकर उठते हुए मुखिया बड़ी नम्रता के साथ उसकी राम-राम का उत्तर दिया।

"कहो चित्त ठीक है ? बड़े सुस्त-से लेटे हो।" पटवारी ने सामने की खाट घसीटकर बैठते हुए पूछा।

"पटवारीजी, चित्त कैसे ठीक हो सकता है ?" मुखिया ने एक ठण्डी साँस ली, "बस गिन-गिनकर दिन बिता रहे हैं।"

"क्यों, ऐसी क्या बात हो गयी सै ?" पटवारी ने मुँह उठाकर पूछा।

मुखिया ने डूबती-सी नज़रों से पटवारी की ओर देखा। फिर बहुत ही उदास स्वर में कहा, "पटवारीजी, क्या सरकार अपना फ़ैसला वापस नहीं ले सकती ?"

"मुश्किल है," पटवारी ने मुखिया की आँखों में झाँकते हुए कहा।

मुखिया की उदासी और गहरी हो गयी। गिड़गिड़ाता हुआ बोला, "पटवारीजी, कोई राह सुझाओ ! थोड़े-से ही खेत बच जायें। लोगों को इतना ही याद रहे कि ये खेत परतापसिंह के हैं।"

पटवारी ने फ़ौरन कोई जवाब नहीं दिया। पाँव में पड़े एक आबले को सहलाता रहा। मुखिया ने आबला देखा तो पूछा, "कैसे पड़ गया फफोला ?"

"क्या बताऊँ, मुखिया," पटवारी ने थमे-थमे स्वर में बताया, "जब से सरकार ने ज़मीनें लेने का फ़ैसला किया है, गाँव-गाँव घूमना पड़ रहा है। दूसरे-तीसरे दिन तहसील भी दौड़ना होता।"

"घोड़ी कहाँ गयी ?"

"बेच दी।"

"क्यों ?"

"बीमार रहने लगी थी।" पटवारी सिर झुकाये कहता गया, "आख़िर वह भी जीव है। रोज़ पन्द्रह-बीस मील चलेगी तो बीमार होगी ही ! सोच रहा हूँ साइकिल ले लूँ। पर कहीं से पैसा मिले तभी तो..."

पटवारी की ओर झुकता हुआ मुखिया बोला, "पटवारीजी, मेरी अरज पर भी ध्यान करो। कोई राह निकालो..."

"राह तो निकालूँ लेकिन भरोसा नहीं।" पटवारी ने आँखें ऊपर उठायीं।

"किस पर ?" मुखिया चौंका।

पटवारी ने पैंतरा बदलते हुए कहा, "चौधरी, बुरा मत मानना। मैं तुम्हें राह सुझाऊँ, मगर बात निकल जाये : अफ़सरों तक जा पहुँचे—तो मैं तो नौकरी से गया।" कुछ क्षण चुप रहकर फिर जैसे मर्म की बात बताता हो इस तरह बोला, "सरकारी राज़ मुफ्त में बताये भी नहीं जाते मुखिया।"

कुछ देर मुखिया की टकटकी नीचे ज़मीन पर लगी रही। फिर पटवारी का निहोरा करता हुआ बोला, "पटवारी जी, जो बन पड़ेगी, सेवा कर दूँगा। आपसे कुछ छिपा नहीं है। काकी के ब्याह पर लिया उधार तक अभी सिर पर खड़ा है।"

"मुंह से बोलो तो कोई तरकीब निकालूं," पटवारी ने एक कुटिल मुसकराहट के साथ कहा।

मुखिया सोच में पड़ा। सिर थामते हुए बोला, "पटवारीजी, क्या कहूँ ! दे दूंगा। बीस-तीस...मैं बहुत परेशानी में हूँ..."

"पाँच-सात सौ की बात करो मुखिया...!" पटवारी ने एक-एक शब्द पर ज़ोर देते हुए कहा।

बहुत इधर-उधर के बाद पटवारी सौ रुपये पर माना। मुखिया ने भीतर से लाकर नक़द गिना दिये और पटवारी ने सँभालकर भीतर की ओर जेब में रख लिये तब वह मुखिया से बोला, "खाओ सौगन्ध कि किसी के आगे साँस तक नहीं लोगे।"

मुखिया ने भगवान् की सौगन्ध खायी तो पटवारी मुनकुकर बोला, "भगवान की सौगन्ध सिर्फ़ झूठ बोलने के लिए खायी जाती है मुखिया ! सौगन्ध दूध-पूत की खानी होगी !"

मुखिया का चेहरा सफ़ेद हो आया। पटवारी अड़ा रहा तो हारकर उसने बेटे की सौगन्ध खायी। पटवारी ने तब गाँव की ज़मीन के खसरे निकाले। एक जगह उँगली रखकर वह बोला, "चौधरीजी, आपकी ज़मीन का यह टुकड़ा चार बीघे और सवा चौदह मरले का है।"

"हाँ, खजूरवाला खेत है यह।" मुखिया ने सिर हिलाते हुए कहा।

"इस खेत में आपके किसी बड़े बुज़ुर्ग की समाधि थी।" पटवारी ने कहा।

"हाँ, जी, सिद्ध बाबा की समाधि थी।" मुखिया ने बताया।

पटवारी ने आगे को झुककर बहुत धीमे से कहा, "जिस ज़मीन में कोई समाधि या क़ब्र या मन्दिर हो उसे सरकार नहीं ले सकती..."

"लेकिन अब तो इस खेत में समाधि का निशान तक नहीं है। बहुत बरस पहले एक बाढ़ में बह गयी थी। अब तो मुद्दत से हल चले हैं।" मुखिया की उठती आशा ढह गयी।

"अरे चौधरी, वहाँ नहीं रही तो क्या हुआ ! मेरे खसरों-शजरों में तो है।" पटवारी आगे को झुककर फुसफुसाया, "वहाँ मन्दिर बना दो। ज़मीन बच जायेगी और वंश का नाम चलता रहेगा।...बस ?"

पटवारी की बात मुखिया की समझ में कुछ-कुछ आ रही थी। पटवारी ने गरदन पर कड़ा फेरकर मैल की बत्तियाँ बटोरते हुए कहा, "पण्डित को बुलाकर शुभ मुहूर्त निकलवाओ और जल्दी से मन्दिर की नींव रखवाओ।"

"उसके लिए पैसा कहाँ से लाऊँ पटवारीजी ?" मुखिया ने पूछा।

"ज़मीन बचानी है तो खर्च करना ही पड़ेगा।" फिर कुछ सोचकर सुझाव दिया, "फ़िलहाल चबूतरा ही बनवा दो। ऊपर शिवजी की पिण्डी रखा दो।

इस बहाने ज़मीन तो बच जायेगी।"

पटवारी के जाने के बाद मुखिया कुछ देर सोच में खोया-खोया बैठा रहा, फिर खेतों में निकल गया और घूमता-फिरता उस खेत में पहुँचा जहाँ पटवारी ने मन्दिर बनाने की सलाह दी थी। उसने पहले खेत की परिक्रमा की। फिर ठीक उस स्थान पर पहुँचा जहाँ कभी समाधि थी और ध्यान से ज़मीन के उस टुकड़े को देखता रहा।

सूरज सिर पर आ गया तो मुखिया गाँव को लौट आया और बैठक में जाने के बजाय सीधा घर पहुँचा। मुखियानी चौके-चूल्हे में लगी थी। मुखिया ने पानी माँगा। पानी पीकर खँखारता हुआ मुखियानी से बोला, "सोच रहा हूँ खजूरवाले खेत में जहाँ कभी समाधि थी, उसे फिर से बनवा दूँ।"

मुखियानी ने तीखे स्वर में कहा, "गाँव उजड़ने लगा है और तुम्हें समाधि बनाने की सूझी से।"

यह सुनकर मुखिया चुपचाप उठकर बैठक में आ गया और खाट पर पड़ा-पड़ा देर तक सोच में डूबा रहा कि समाधि बना डाले या चुप रहे। उसे यह भी डर था कि कहीं फिर भी सरकार ने ज़मीन ले ली तो समाधि बनाने में लगा रुपया भी अकारथ जायेगा और ऊपर से जग-हँसायी भी होगी। कोई रास्ता न देख उसने उत्तमपरकाश से सलाह करने की सोची।

सत्रह—

बंसीलाल दिन ढलने से पहले ही सूबेदार माड़ूसिंह को साथ लिये मुखिया की बैठक में पहुँच गया। ताऊ पहले से ही वहाँ मौजूद था। थोड़ी देर बाद दुनीचन्द भी आ गया। उसने ताऊ के हाथ में सुमदार लाठी देखकर पूछा, "चौधरी, लाठी क्यों? हम सहर जा रहे हैं, किसी जंगल की तरफ नहीं।"

"अरे, क्या सहर में कुत्ते-बिल्ली नहीं होवें?" ताऊ ने पूछा।

"ताऊ, हाथ में लाठी अच्छी नहीं लगेगी। वे लोग सोचेंगे हम बिलकुल ही गँवार हैं।" बंसीलाल ने कहा।

"सोचने दो। तुम पक्के कागज पर लिख देना कि तुम गँवार नहीं हो।"

"मगर ताऊ, मोटर से जाना है।" बंसीलाल ने समझाया।

"बामण, तुझे क्या तकलीफ से। लाठी मेरी है और मुझे ले जानी है। मैं

जानूँ मेरा काम।" ताऊ का स्वर बदला।

"क्या बहस ले बैठे बंसी!" मुखिया ने बात खतम करने के लिए कहा।

"मैं तो ताऊ के साथ अठखेली कर रहा था।" बंसीलाल बोला।

"बंसी, अपने बाप से भी अठखेली करे था क्या?" ताऊ ने पूछा।

"ताऊ, अव्वल तो तू मेरे बाप की आयु का नहीं है। मगर मैं तो अपने बाप से भी ऐसी अठखेली कर लेता था।"

बंसीलाल की बात पर सब लोग हँस पड़े। ताऊ झेंप गया और खाट की पायंती को लेट गया।

कुछ देर बाद गाँव के बाहर मोटर की घूँ-घूँ और हॉर्न बजने की आवाज हुई।

"आ गये वे!" मुखिया ने उत्तेजित-सा होते कहा और उठकर खड़ा हो गया। ताऊ भी उठा। हाथ में लाठी पकड़ते देख बंसीलाल ने फिर टोका, "ताऊ, फिर उठा लिया इसे?"

"ले बामण, छोड़ देता हूँ यहीं। तेरी आँखों में चढ़ गयी से।" ताऊ ने लाठी को बैठक के एक कोने में खड़ा कर दिया।

वे चारों-पाँचों गली में यों निकले जैसे बारात में जा रहे हों। मोटर में एक ही आदमी आया था। पास पहुँचने पर ताऊ और बंसीलाल मोटर को ध्यान से देखते हुए अचरज से बोले, "यह तो वही मोटर है जिसमें हाकिम आये थे। आदमी भी यही था।"

मुखिया ने भी ध्यान से देखा लेकिन आँखें सिकोड़ता हुआ बोला, "होगी यही मोटर। कोई और भी हो सकती है।"

"यही थी। मैं ही तहसीलदार साहब को लेकर आया था।" ड्राइवर ने बताया। फिर हाथ नचाता हुआ बोला, "तहसीलदार वख्त का हाकिम है। हमारी कम्पनी को रोज उनसे काम पड़ता है। मोटर तो क्या, वह जान भी माँगे तो देनी होगी!"

"क्या उत्तमपरकाश की तहसीलदार से जान-पहचान है?" मुखिया ने उत्तेजित-सा होते पूछा।

"जान-पहचान?" ड्राइवर ने हैरानी से उनकी ओर देखा, "यह समझो सगे भाइयों-जैसा। उठना-बैठना, खाना-पीना सब साँझा है।" ड्राइवर ने मुसकराते हुए बताया, "उनके बच्चों को सनेमा से घर छोड़कर इधर आया हूँ।"

"अच्छा!" मुखिया की आँखें फैल गयी। फिर गर्व से बोला, "उत्तम-परकाश का सितारा बहुत बुलन्द है। चाहे तो साँप के मुँह से कौड़ी निकाल लाये।"

"हमारा काम बना दे तो रहती दुनिया तक गुण गायेंगे। ताऊ ने कहा।

मुखिया, ताऊ और बंसीलाल पिछली सीट पर बैठ गये। सूबेदार माड़ू सिंह और दुनीचन्द ड्राइवर के साथ अगली सीट पर जमे। पक्की सड़क पर पहुँचकर कार ने स्पीड पकड़ ली। बड़ा अजीब-सा लग रहा था सबको विशेषकर ताऊ को—जब उसे दोनों ओर के पेड़ पीछे की ओर दौड़ते दिखे।

"बहुत तेज दौड़े से यह तो!" ताऊ ने हैरत में आते हुए कहा। "तगड़े से तगड़े बैल भी इसका मुकाबला नहीं कर सैं।"

"चौधरी, केह कह रिहे हो? बैल और मसीन का क्या मुकाबला है! उत्तमपरकाश बतावे था कि इब हल चलानेवाली मसीनें भी हैं। कह रहा था कि लोग धीरे-धीरे बैलों की जगह उन मसीनों से ही हल चलाया करेंगे।" मुखिया ने भौंहें ऊँची करके और हाथ नचाते हुए बताया।

मोटर ज़खीरे से बहुत इधर ही बायें हाथ मुड़ गयी। कच्चे रास्ते पर हच-कोले लगने लगे और बाहर और भीतर सब धूल ही धूल भर गयी। ड्राइवर ने पीछे को मुड़कर देखते हुए कहा, "बस सड़क का थोड़ा-सा ही हिस्सा कच्चा है। पटेलनगर से आगे तो सड़क एकदम पक्की है..."

बंसीलाल बीच में ही बोला, "ताऊ, यह सड़क अभी बनी है।" दुनीचन्द ने हाँ में हाँ मिलाते हुए कहा, "हाँ, पहले तो यह पूसा तक थी।"

"इस ओर तो बहुत आबादी हो गयी है। सरकार ने कई हजार क्वाटर बनाये हैं। लोगों ने भी प्लाट खरीदे हैं। कहीं-कहीं तो आलीशान कोठियाँ बनी हैं।" ड्राइवर ने बताया।

कुछ दूर जाकर सड़क के दोनों ओर पीले रंग के क्वारटरों की लम्बी क़तारें नज़र आने लगीं। बायीं ओर तो जैसे एक सिलसिले से बने हुए थे।

"यह क्या, यहाँ तो खेत होते थे? इब यहाँ मकान बन गये! वहाँ उधर शादीपुर के चौधरी दलबीरसिंह का बेरियों का बाग होता था...।" ताऊ उचक-कर बाहर देखने लगा।

"यह सब जमीनें सरकार ने ले ली हैं।" ड्राइवर ने बताया।

"शादीपुर के लोग कहाँ गये?" ताऊ ने घबराये-से स्वर में पूछा।

"मुझे खास तो पता नहीं। लेकिन इतना ज़रूर मालूम है कि इस गाँव के पाँच चौधरियों का पैसा हमारी कम्पनी में जमा है। वे कह रहे थे कि ज़मीन बेचकर वे पहले से सुखी हो गये हैं। इन्हें रक़म पर ब्याज इतना मिल जाता है कि ऐश-आराम से रहते हैं। एक चौधरी ने मोटर साइकिल ले ली है। एक टैक्सी बनाने की सोच रहा है।...सुना है, कुछ लोग बाहर ज़मीनें ख़रीदकर खेती कर रहे हैं।" ड्राइवर ने बताया।

पक्की सड़क आने पर लोगों की चहल-पहल बढ़ने लगी। सड़क के दोनों ओर कहीं-कहीं तो बड़ी शानदार कोठियाँ थीं। ताऊ उकड़ूँ बैठा सारा नज़ारा

एक ही बार में सहेज लेना चाहता था। ज्यों-ज्यों मोटर आगे बढ़ रही थी, आबादी और लोगों की चहल-पहल भी बढ़ रही थी।

कनॉट प्लेस पहुँचकर तो चौधरी पागल-से हो गये। जिधर देखते उधर ही ऊँचे-ऊँचे चौबारे थे। चारों ओर मोटरें दौड़ रही थीं। लोग इतने थे जैसे मेला लगा हो। बरामदों में गज-गज पर दुकानें सजी हुई थीं और वहाँ तितलियों की तरह बनी-ठनी स्त्रियाँ घूम रही थीं।

"यह लाट साब का हाट-बजार है या इन्द्रपुरी ?" बनीलाल ने अचम्भे में आते हुए कहा।

ड्राइवर ने एक जगह कार रोक दी और नीचे उतरकर दोनों दरवाज़े खोले। "आओ चौधरीजी, दफ्तर पहुँच गये हैं।"

चौधरियों ने अपने आप को जैसे समेटते हुए कार से बाहर निकाला। वहाँ की भीड़ और चहल-पहल देखकर वे हैरान और खोये-खोये-से खड़े रह गये।

ड्राइवर ने गाड़ी को लॉक करने के बाद उन्हें पीछे-पीछे आने का संकेत किया और बरामदे में होकर सीढ़ियाँ चढ़ने लगा। सीढ़ियाँ चढ़कर वे एक बड़े कमरे में पहुँचे जहाँ एक कोने में एक युवती बैठी थी। वह भी बहुत बनी-ठनी थी। उसके दोनों बगल और सामने आराम कुरसियाँ रखी थीं।

"पंजाबन होगी। हमारे देस की छोरियाँ ऐसा पहनावा न करें।" लड़की को कनखियों से देखकर बनीलाल के कान में ताऊ फुसफुसाया।

ड्राइवर उस लड़की के पास को बढ़ गया। चौधरी भी उसके पीछे जा खड़े हुए। ड्राइवर मुसकराया तो लड़की भी जवाब में मुसकरा दी और हँस-हँसकर उसके साथ कुछ बात करने लगी।

"इसकी लुगाई होगी तभी तो ऐसे बातें करे से !" ताऊ ने अनुमान लगाया।

"साहब कहाँ हैं ?" ड्राइवर ने पूछा।

"अपने कैबिन में। ठहरो, मैं पूछ देती हूँ।" कहते हुए उसने टेलिफ़ोन का चोंगा उठाया और कुछ ही शब्दों के बाद बोली, "कैबिन में ही ले आओ।"

ड्राइवर ने उन्हें फिर अपने पीछे आने का संकेत दिया। वे उसके पीछे-पीछे अन्दर चले गये। ड्राइवर ने एक कैबिन का दरवाज़ा खोला और सैल्यूट देकर बोला, "सर, वे लोग आ गये हैं।"

"अन्दर ले आओ।"

ड्राइवर ने एक ओर हटकर उन्हें अन्दर जाने का संकेत दिया।

"हाँ, तुम जाना नहीं। इन्हें वापस भी छोड़ना है।" उत्तमचन्दलाल ने पेन को स्टैण्ड पर रखते हुए कहा।

"यस सर।" ड्राइवर सैल्यूट देकर बाहर चला गया।

सबसे पहले मुखिया अन्दर दाखिल हुआ। उसके पीछे ताऊ, फिर बनीलाल,

दुनीचन्द और माड़ू सिंह अन्दर गये।

उत्तमप्रकाश कुरसी से उठा और घूमकर उनके सामने आ गया। उसने हाथ जोड़कर उनका स्वागत किया। फिर वह मुखिया के पाँव की ओर झुका, मगर मुखिया ने उसे बीच में ही पकड़कर छाती से लगाया। मुखिया ने ताऊ की ओर देखते हुए कहा, "यह चौधरी हरिराम।"

उत्तमप्रकाश ताऊ के भी पाँव की ओर झुका और ताऊ ने भी उसे रास्ते में ही दबोचकर छाती से लगा लिया। फिर वह बंसीलाल के पाँव की ओर झुका तो बंसीलाल ने उसकी पीठ थपथपाकर आशीर्वाद दिया, "सुखी रहो, बढ़ो-फूलो!"

दुनीचन्द और माड़ू सिंह के साथ हाथ मिलाकर उसने उन्हें सोफ़े पर बैठने के लिए कहा और सबके बाद आप भी उनके साथ बैठता हुआ बोला, "कहिए, रास्ते में कोई तकलीफ़ तो नहीं हुई।"

"नहीं, बहुत आराम से आये। नूँ कहूँ मोटर में आज पहली बार बैठा हूँ। जब मोटर तेज दौड़ने लगती तो मेरा साँस रुक जाता कि कहीं उलट न जाये।" ताऊ ने प्रसन्न भाव से कहा।

उत्तमप्रकाश ने थोड़ा आगे झुककर बटन दबाया। ख़ाकी वरदी पहने हुए एक चपरासी द्वार खोलकर अन्दर आया और सैल्यूट देकर एक ओर खड़ा हो गया।

"मौसाजी, ठण्डा पियोगे या गरम?" उत्तमप्रकाश ने आदर-भरी मुसकराहट के साथ पूछा।

"क्यों चौधरी?" मुखिया ने ताऊ की ओर देखकर पूछा।

"जरूरत नहीं से। अभी तो घर से खा-पीकर आये हैं।"

"अच्छा, कोल्ड ले आओ, चाय बाद में पियेंगे।" उत्तमप्रकाश ने चपरासी से कहा।

चपरासी के जाने के बाद कुछ सेकंड सब चुप बैठे रहे। ताऊ उचक-उचककर कमरे में चारों तरफ देख रहा था। नजर बचाकर उसने सोफ़े पर लगे कपड़े को भी टटोला था। दीवार पर लगी तसवीर पर तो उसकी निगाह टिकी ही रह गयी। दुनीचन्द ने ताऊ को तसवीर देखते पाकर कहा, "ताऊ, यह हमारे देश का नया राजा है—पण्डित जवाहरलाल नेहरू।"

"मैं यही पहचान कर रिहा था। एक दिन अखबार में तसवीर देखी थी। हाँ, तूने ही तो दिखायी थी।" ताऊ ने दुनीचन्द से कहा। फिर कुछ सोचता हुआ बोला, "कपड़े तो साधारन ही पहने हैं। राजोंवाली तो इसमें कोई बात नहीं है।"

ताऊ की बातें सुनकर उत्तमप्रकाश खिलखिलाकर हँस पड़ा। और लोग भी

हँसने लगे तो ताऊ खुश हो गया कि शायद उसने बहुत शानदार बात कही है। वह भी हँसता हुआ बोला; "हम साधारन आदमी हैं। बुजुर्गों से दिल्ली दरबार की कहानियाँ सुनी थीं। वे बताते थे कि राजे-महाराजे हीरे-मोती से लदे-फँदे होते हैं।"

"ताऊजी, पण्डितजी जनता के राजा हैं—बेताज बादशाह हैं। ये तो खुद जवाहर हैं। इन्हें पत्थर के मोती पहनने की क्या जरूरत है।" उत्तमप्रकाश ने ताऊ को समझाया। फिर बोला, "वैसे बहुत अमीर थे। इनके कपड़े विलायत से धुलकर आते।"

इतने में चपरासी ट्रे में स्क्वैश के गिलास ले आया। स्क्वैश के ऊपर बर्फ़ की छोटी-छोटी डलियाँ तैर रही थीं। उत्तमप्रकाश ने अपने हाथों से गिलास उठाकर उन्हें दिये।

"यह क्या से ?" ताऊ ने पूछा।

"नींबू का शरबत। इसकी तासीर ठंडी होती है।" उत्तमप्रकाश ने समझाया।

"लस्सी से भी ज्यादा ठंडी ?" ताऊ ने पूछा।

"कभी मुकाबला नहीं किया।"उत्तमप्रकाश मुसकरा दिया।

स्क्वैश पी चुके तो उत्तमप्रकाश ने गम्भीर स्वर में पूछा, "कोई आयी सरकारी इत्तला जमीनें ऐक्वायर करने के बारे में ?"

"हाँ, तहरीरी हुकम आ गया है। पटवारी पढ़कर सुना गया था।" मुखिया ने डूबी हुई आवाज में कहना शुरू किया। विस्तार से सारी बात बताकर वह बोला, "उस दिन से न अच्छी तरह खाया-पिया है, न ही नींद आयी है। ऐसा लगे से कि हमारी आँखों के सामने ही हमारे घर में सेंध लग रही है और हम बेबस हुए पड़े हैं।"

"सरकार बहुत जुल्म ढा रही है," ताऊ ने धीरे स्वर में कहा। फिर निहोरा करती नजरों से उत्तमप्रकाश की ओर देखते हुए पूछा, "क्या सरकार का फैसला टल नहीं सकता ?"

उत्तमपरकाश कुछ क्षण चुप रहा। फिर उसने गम्भीर स्वर में कहना शुरू किया, "आप जब मुनीरकावाले मौसाजी के साथ आये थे उसके बाद मैं उस महकमे के अफ़सरों से मिला था। उनसे रिक्वेस्ट भी की थी कि आपकी जमीनें ऐक्वायर न करें। लेकिन वे लाचार थे। हुकम ऊपर से, मिनिस्टरी से, आया था और उसे मिनिस्टर ही बदल सकता था।" कहकर उत्तमप्रकाश चुप हो गया। फिर बोला, "मैं मिनिस्टर से भी मिलता लेकिन फ़ायदा कोई नहीं था क्योंकि दिल्ली के चारों ओर दस-दस मील तक सब जमीनें सरकार ने लेने का निर्णय किया हुआ है। धीरे-धीरे ये सब जमीनें सरकार ले लेगी।"

"क्या करेगी सरकार इतनी जमीनें लेकर ? क्या खेती करेगी ?" ताऊ ने

पूछा।

ताऊ का प्रश्न सुनकर उत्तमप्रकाश हँस दिया। उसकी ओर दिलचस्पी से देखता हुआ बोला, "चौधरीजी, सरकार आपसे अच्छी खेती नहीं कर सकती। खेती करनी होती तो सरकार इन ज़मीनों को कभी छूती भी नहीं," उत्तमप्रकाश ने दृढ़ स्वर में कहा। फिर समझाता हुआ बोला, "इन ज़मीनों पर नयी कॉलोनियाँ बनेंगी। कारखाने बनेंगे। स्कूल, कॉलिज, पार्क, दुकानें बनेंगी। दिल्ली में इतना आदमी आ रहा है उसे कहीं न कहीं आबाद तो करना है। इस काम के लिए जो कमेटी बनी है मैं भी उसका मेम्बर हूँ। इस समय शहर की सड़कों-मैदानों और ख़ाली जगहों पर कम से कम पाँच लाख रिफ़्यूजी पड़े हैं। उनके पास सिर छिपाने तक का ठिकाना नहीं है।" कहकर उत्तमप्रकाश ने उनकी ओर देखा।

वे सब चुप, गुमसुम बैठे थे। उत्तमप्रकाश भी चुप हो रहा तो दुनीचन्द बड़ी शिष्टता के साथ बोला, "साहिबजी, हमें केवल इसीलिए उजाड़ा जा रहा है कि पंजाबियों को आबाद किया जा सके?"

"आपको उजाड़ा नहीं जा रहा। ज़मीन के बदले में सरकार आपको पैसा देगी। अगर आप खेती के लिए ज़मीन लेना चाहेंगे तो आपको किसी दूसरी जगह ज़मीनें देगी। कोई और धन्धा करना चाहेंगे तो उसके लिए ज़रूरी मदद देगी।" उत्तमप्रकाश ने शालीनता-भरे स्वर में बताया।

"खेती के लिए जो ज़मीनें हमें दी जायेंगी वहाँ पंजाबियों को क्यों नहीं बसा दिया जाता?" दुनीचन्द ने पूछा।

"लाला जी, खेती की ज़मीन को रिहाइश के काम का बनाने के लिए लाखों रुपये खर्च करने पड़ते हैं। दूसरे जितनी ज़मीन से एक किसान दस आदमियों के लिए साल-भर का अनाज पैदा करता है, वहाँ पर पाँच सौ आदमियों की रिहाइश का इन्तज़ाम किया जा सकता है।" उत्तमप्रकाश की आवाज़ ऊँची हो रही थी।

उत्तमप्रकाश के तर्क से दुनीचन्द सन्तुष्ट नहीं हुआ। वह उसकी आँखों में झाँकता हुआ बोला, "साहिबजी, यह कहाँ का न्याय है कि उजड़े हुए लोगों को बसाने के लिए मूल-कदीम से बसे लोगों को घर से उखाड़ा जाये और उन्हें फिर कहीं और बसाया जाये? पंजाबियों को पहले ही उन जगहों पर क्यों नहीं बसा दिया जाता जहाँ उजाड़ने के बाद हमें बसाना है।"

दुनीचन्द के सवाल-जवाब को सब लोग बहुत दिलचस्पी से सुन रहे थे। ताऊ तो बहुत ही प्रसन्न था। वह सोफ़े पर उकड़ूँ बैठा गरदन आगे बढ़ाये कभी उत्तमप्रकाश के मुँह की ओर देखने लगता, कभी दुनीचन्द के।

उत्तमप्रकाश ने दुनीचन्द के एक-एक शब्द को ध्यान से सुना। फिर वह सधे हुए स्वर में बोला, "लालाजी, पंजाबी रिफ़्यूजियों ने बहुत बड़ी क़ुरबानी दी है।

वे खुशी से अपने घरबार छोड़कर नहीं आये। उन्हें जबरदस्ती निकाला गया है। यहाँ लुट-पुटकर पहुँचे हैं। जो व्यवहार इनके साथ हुआ है वह ईश्वर करे किसी दुश्मन से भी न हो। लखपति लोग पलक झपकते में कंगाल हो गये। मुरब्बों के मालिक सिर छिपाने के लिए दो-दो गज की झोंपड़ी के मोहताज बन गये," कहते-कहते उत्तमप्रकाश भावुक हो आया। बोला, "मेरे ही दफ़्तर में एक बाबू है। लाहौर से आया है। वहाँ उसका लाखों का कारोबार था। अब वह साठ रुपये महीने पर मुन्शीगीरी कर रहा है। यह मैंने सिर्फ़ एक उदाहरण दिया है। ऐसे-ऐसे हजारों लोग हैं।...ख़ैर, छोड़िए इन बातों को। आइए, चाय पीने चलें।" उत्तमप्रकाश ने घड़ी देखते हुए कहा।

उत्तमप्रकाश उन्हें अपने दफ़्तर के नीचे एक रेस्तरां में ले गया। वहाँ की मद्धिम रोशनी में एक बार को तो उन्हें जैसे कुछ भी दिखाई नहीं दिया। फिर धीरे-धीरे दीखने लगा। उत्तमप्रकाश उन्हें एक कोने में ले गया जहाँ से समूचा हॉल नजर आता था। सभी वहाँ बैठकर फटी-फटी आँखों चारों तरफ़ देखने लगे। स्त्रियों और पुरुषों को एक साथ बैठे हुए गपशप्पियाँ करते और चाय पीते देखकर वे बेहद हैरान थे। ताऊ बसीलाल के कान में बुदबुदाया, "सहरों में बेसरमी बहुत से। देखो इन लुगाइयाँ को कितनी नदीदी बनें में। मरद इनके अपने भी हों तो भी यह कोई तरीका नहीं है।" ताऊ ने आक्रोश-भरे लहजे में कहा।

"ताऊ, पंजाबी हैं!" दुनीचन्द ने दो स्त्रियों के साथ बैठे एक सिख की ओर संकेत करते हुए कहा, "अपने देस के लोग ऐसी बेसरमी कभी न करें।"

बेटर उनकी मेज के पास आया तो उत्तमप्रकाश ने सबकी तरफ़ एक नजर डालते हुए पूछा, "मौसाजी, क्या लेंगे?"

"हमें क्या पता, यहाँ क्या मिले से।" दुनीचन्द ने उत्तर दिया।

"मैं न खाऊँगा, न पियूँगा।" बसीलाल ने निर्णयात्मक स्वर में कहा।

"क्यों?" उत्तमप्रकाश ने अचरज से पूछा।

"बंसीलाल बामण है!" दुनीचन्द ने कहा, "यह तो काँच के गिलास में पानी नहीं पीता। आपके दफ़्तर में पता नहीं शरबत कैसे पी लिया।"

"क्यों पण्डितजी?"

"हाँ, ये ठीक कहे से। जहाँ तक हो सके अपने धरम का पालन करना ही चाहिए। मैंने बाहर जाकर कभी खाया-पिया नहीं। पता नहीं इनके बरतन कैसे हैं। परोसनेवाले कौन जात हैं। मैं तो चीनी-काँच के बरतन इस्तेमाल नहीं करता।" बसीलाल ने गर्व से कहा।

"पण्डितजी, अब जमाना बदल रहा है। इनसान को जमाने के साथ बदलना चाहिए।" उत्तमप्रकाश ने सलाह दी।

"आपने जो खाना-पीना है खाइए-पीजिए। मैं बहुत आनन्द में हूँ।" बंसीलाल ने बात ख़त्म करने के लिए दृढ़ स्वर में कहा और हॉल में इधर-उधर देखने लगा।

वेटर ने मीनू-कार्ड सामने रख दिया। उत्तमप्रकाश ने कार्ड पर सरसरी-सी निगाह डाली और बोला, "देखो, तीन प्लेट चीज़ पकौड़ा, वनीला पेस्टरी और चाय।"

वेटर चला गया तो उत्तमप्रकाश ने बंसीलाल से कहा, "पण्डितजी, आप सन्तरे का रस ले लें। बाहर एक पंजाबी बहुत अच्छा बनाता है। उसके पास पीतल के गिलास भी हैं। वह गिलास को अपने हाथ से रगड़कर साफ़ करेगा।"

"पंजाबी ऊँचा बराहमन हो तो भी धरमभरष्ट है। पंजाबियों का कोई दीन-ईमान नहीं होता।...ना-ना, इनके हाथ से कभी कुछ न खाना।" दुनीचन्द ने कानों को छूते हुए बंसीलाल की ओर देखते हुए कहा।

चाय आ गयी तो चौधरी प्लेटों को ध्यान से देखते रहे। वे हैरान थे कि सामने यह क्या रख दिया गया है। काँटे-छुरियाँ देखकर तो वे सहम ही गये।

"लीजिए।" उत्तमप्रकाश ने पनीर-पकौड़ों की प्लेट उनकी तरफ़ बढ़ाते हुए कहा।

"यह गोल-गोल केह से, लड्डू जैसा ?" ताऊ ने पूछा।

"पनीर के पकौड़े।" उत्तमप्रकाश ने बताया।

"पनीर के पकौड़े भी बने हैं ?" ताऊ ने हैरानी से पूछा।

"हाँ, आपके सामने जो है। इन्हें सॉस के साथ खायें।" उत्तमप्रकाश ने ताऊ की प्लेट में सॉस उँडेलते हुए कहा।

वे सब उत्तमप्रकाश को देखते रहते और जिस तरह वह खाता उसी तरह वे भी खाने लगते।

"है स्वाद !" ताऊ ने एक पकौड़ा चबाते हुए कहा।

"बहुत स्वाद है।" दुनीचन्द ने कहा।

"और मँगवाता हूँ।" उत्तमप्रकाश गरदन उठाकर वेटर को देखने लगा।

"मैं ऐसे पकौड़ों का इस चटनी के साथ एक टोकरा खा लूँ।" ताऊ ने हँसते हुए कहा।

चाय पीने के बाद वे फिर उत्तमप्रकाश के दफ्तर में आ गये। उत्तमप्रकाश ने चपरासी को बुलाकर कहा, "रिसेप्शन पर कह दो कि कोई मुझे मिलने आये तो बोलें मैं कॉन्फ्रेन्स में हूँ। विज़िटर से काम पूछकर बाद में मुझे बता देना।"

उत्तमप्रकाश ने मेज़ से फ़ाइलें उठाकर ट्रे में रख दीं और कुरसी घसीटकर उनके पास बैठता हुआ बोला, "ताऊजी, मौसाजी ने आप लोगों को बताया होगा।" उसने बड़े मीठे स्वर में कहना शुरू किया, "सरकार का फ़ैसला बदल-

चाना असम्भव है। मैंने कोशिश कर देखी है।" इतना कहकर वह चुप हो रहा, जैसे कहीं खो गया हो।

दो सेकेण्ड बाद आनंकित स्वर में बोला, "वे दिन याद आते हैं तो सिहर उठता हूँ। जब सरकार ने जमीन लेने के बारे में हमारे गाँव को नोटिस दिया तो हम सारा-सारा दिन पागलों की तरह एक दफ़्तर से दूसरे दफ़्तर तक दौड़ते रहते थे। अफ़सरों से मिले, मन्त्रियों के दफ़्तरों में हाज़िरी दी।...मैं तो नेहरूजी के पास भी फ़रियाद लेकर पहुँचा था।"

उत्तमप्रकाश चुप हो गया तो ताऊ ने उत्तेजित स्वर में पूछा, "फिर क्या कहा उसने? कुछ मदद की?"

"नहीं।" उत्तमप्रकाश ने सिर हिलाते हुए निराश स्वर में कहा, "सरकार का फ़ैसला अटल था। आखिर घर देखने के बाद और पत्थर चाटकर हम चुप होकर बैठ गये।"

वे पाँचों भी सहमे हुए बैठे थे। उत्तमप्रकाश ने उसी लहजे में बात जारी रखी, "जमीनें सरकार ने ले लीं तो खेती से आमदनी का ज़रिया बन्द हो गया। दूसरा ज़रिया था नहीं। हमारे गाँव का एक बुजुर्ग, चौधरी बनवारीलाल, इसी सदमे से मर गया।"

"पल्ले से आदमी कितने दिन खा सकता है।" दुनीचन्द ने कहा, "बेकार बैठकर खाओ तो धन के कुएँ भी दिनों में ही खतम हो जावें। कुएँ में पानी के सरोत न हों तो दो दिन में ही खाली हो जायें।"

"लालाजी, आपकी बात बिल्कुल ठीक है।" उत्तमप्रकाश ने दुनीचन्द का भरपूर समर्थन करते हुए कहा, "गाँव में मैं ही पढ़ा-लिखा था। सलाह लेने सब मेरे पास आते थे। बहुत सोच-विचार के बाद अन्त में हमने एक कम्पनी बनायी। मुआवज़े में जितना पैसा मिला था, उसमें जमा कर दिया। कोई ट्रक, बस, टैम्पू, टैक्सी चलाना चाहता तो उसे इस्टाम्प लिखवाकर रुपये क़र्ज़ देने लगे। उससे जो आमदनी होती, उसमें से जमा-पूँजी पर छह रुपये सैकड़ा सूद देते हैं। यों समझो कि जिस आदमी का पाँच हज़ार रुपया जमा है उसे हम हर महीने तीस रुपये देते हैं। जिसका दस हज़ार जमा है उसे साठ रुपये देते हैं। चाहे कोई हर महीने सूद ले ले या तिमाही-छमाही या सालाना ले ले। असली जमा-पूँजी धरी की धरी है। इस तरह हर आदमी का रोटी-पानी का वसीला बन गया है।"

दुनीचन्द ने भोलेपन से कहा, "हाँ, कई लोगों की तो कायाकल्प हो गयी से। साहीपुर के चौधरियों को ही देख लो। सारा दिन ठाठ से बैठकर शतरंज-चौपड़ खेलें से। सुना उनमें से कई तो तमाशबीनी के लिए काठबजार भी जावें हैं।"

सब खिलखिलाकर हँस पड़े। बंसीलाल ने डाँटकर पूछा, "साला, तू कैसे जाने है? क्या तू भी वहाँ जावे है?"

दुनीचन्द झेंप गया। सफ़ाई पेश करता हुआ बोला, "मुझे तो वहाँ के एक जान-पहचान के लाले ने बताया था।"

"तू झूठ बोल रहा है। आज ही लालायन को कहूँगा कि अपना मरद सँभाले। बिगड़ रहा है। आज वहाँ जावे है, कल को घर में बिठा लेगा।" बंसीलाल ने हँसते हुए कहा।

"नहीं, आप लालाजी को ग़लत समझे हैं। इनके कहने का मतलब है कि उन लोगों को आमदनी इतनी होने लगी है कि वे ऐयाशी करने लगे हैं।" उत्तमप्रकाश ने दुनीचन्द की ओर मुसकराकर देखा और फिर बातचीत को असली काम की तरफ़ मोड़ते हुए कहा, "जिस दिन मौसाजी मेरे पास आये थे और उन्होंने मुझे बताया था मैं उसी दिन से सोच रहा था कि कुछ ऐसा काम किया जाये जिससे आपको ज्यादा से ज्यादा फ़ायदा पहुँच सके।"

"यह तो उत्तमपरकाश, तेरी बरखुरदारी है।" मुखिया ने स्नेह-भरे स्वर में कहा।

"मौसाजी, यह तो मेरा फ़र्ज़ है। अगर मैं कुछ कर पाया तो वह आप पर एहसान नहीं होगा, बल्कि यह समझिए कि मैंने अपना फ़र्ज़ पूरा किया।"

उत्तमप्रकाश की बात सुनकर सबको बहुत अच्छा लगा। ताऊ तो गद्गद स्वर में बोल उठा, "जीते रहो उत्तमपरकाश! तुमार हमार फैदा न सोचे तो कौन सोचे है!"

उत्तर में उत्तमप्रकाश भी मुसकरा दिया। उसने अपनी मेज़ की दराज़ से कई नक़्शे निकाले। उनमें से छाँटकर एक नक़्शा अपने पास रख लिया और बाक़ी सबको दराज में ही जहाँ का तहाँ रख दिया। फिर अपनी कुरसी पर पीछे को झुकता हुआ बोला, "हमें तो सरकार से मुआवजा भी बहुत कम मिला था। यूँ समझो मिट्टी के मोल ही जमीन गयी थी।"

"बहुत अन्याय है, घोर अन्याय है!" दुनीचन्द ने अफ़सोस करते हुए कहा।

उत्तमप्रकाश ने उनपर एक नजर डाली और एक गहरी पीड़ा के साथ बोला, "हमें तो कोई सलाह देनेवाला भी नहीं था। देता भी कौन? किसी को उस तरह का तजरबा ही नहीं था।"

"सच कहे हो साहिबजी...लूट मची से। सरकार तो चाहे से कि सबकी जमीन-जायदाद लूटकर पंजाबियों की झोली में डाल दे।" दुनीचन्द ने कड़वेपन से कहा।

उत्तमप्रकाश ने उसकी बात को अनसुना करते हुए मेज़ पर नक़्शा फैलाकर कहा, "यह रहा आपकी जमीनों का नक़्शा।"

वे पाँचों सोफ़ों पर से उचककर मेज़ के पास आ खड़े हुए। उत्तमप्रकाश ने नक़्शे पर ठीक उस जगह उँगली रखी जहाँ लाल पेन्सिल से निशान लगाया हुआ

दा और कहा, "आपकी ये ज़मीनें सरकार ने रखी हैं।"

ये लोग नक़्शे पर झुक गये और ध्यान से लाल लकीरों को देखने लगे। उत्तमप्रकाश ने निशानवाली जगह पर उँगली घुमाते हुए कहा, "कुल रक़बा ग्यारह-सौ-छब्बीस बीघे और चौदह मरले है।"

"क्या यह पक्की बात से ?" ताऊ ने चिन्ता के स्वर में पूछा।

"पक्की ही समझो। सरकार अब किसी के टाले नहीं टलेगी।" उत्तमप्रकाश ने मजबूती के साथ कहा। फिर उन्हें बताया, "मुझे जब पता चला तो भागा-भागा वहाँ पहुँचा। बहुत ज़ोर लगाया, लेकिन कोई बात सुनने को भी तैयार नहीं था। हर बात का एक ही जवाब मिलता कि हुक्म मिनिस्टरी से आया है। इसे रद्द करना तो दूर, रोका भी नहीं जा सकता।"

वे सब निराश भाव से उत्तमप्रकाश की ओर देख रहे थे। उत्तमप्रकाश बड़े अपनेपन के साथ बोला, "अब हुक्म जब जारी हो गया है तो कोशिश यह करनी चाहिए कि ज़मीनें मलबे के मोल न जायें। आपको ज़्यादा से ज़्यादा मुआवज़ा मिले।"

"हम क्या कोशिश करेंगे बेटा..." मुखिया ने लाचार और बेबस होकर कहा, "हमारी डोर तो अब तेरे हाथ में है।"

यह सुनकर उत्तमप्रकाश जैसे सन्तुष्ट हो गया। उनकी आँखों में झाँकता हुआ बोला, "अगर आप मेरी सलाह पर चलें तो बहुत फायदा हो सकता है। एक-एक को हज़ारों का और सारे गाँव को लाखों का।"

"क्यों नहीं चलेंगे ? तेरे पास इसीलिए तो आये हैं कि हमें फायदा हो।" कहकर मुखिया ने बंसीलाल की ओर देखा, "क्यों बंसी, ठीक कहूँ ना ?"

"हाँ चौधरी।" बंसीलाल सिर हिलाता हुआ बोला।

ताऊ और दूसरे लोगों ने भी हामी भर दी तो उत्तमप्रकाश निश्चिन्त हो गया। पेंसिल को नक़्शे पर रखता हुआ बोला, "पता नहीं आपको मालूम है या नहीं कि ज़मीन का मुआवज़ा पिछले पाँच साल में बिकी ज़मीन की रजिस्टरियाँ देखकर तय किया जाता है। दूसरा तरीका है उपज और लगान के हिसाब से।"

पाँचों जन बड़ी तन्मयता से सुन रहे थे। उत्तमप्रकाश ने मेज़ की दराज़ से एक काग़ज़ निकाला और उसकी तहें खोलता हुआ बोला, "मैंने तहसील से दोनों तरीकों से हिसाब लगवाया है। आपके गाँव में पिछले पाँच साल में तीन रजिस्टरियाँ हुई हैं। दो साल हुए मुसम्मी रणछोर वल्द चेतसिंह ने धनीराम वल्द हरलाल से पाँच बीघे ज़मीन सवा पाँच सौ रुपये बीघे के हिसाब से ख़रीदी थी।"

"मैंने ही सौदा करवाया था।" दुनीचन्द ने गर्व से कहा।

"बाक़ी दो रजिस्टरियाँ इससे भी कम की हैं।" उत्तमप्रकाश ने बताया।

"मुझे मालूम है," दुनीचन्द ने बताया। "एक तो देवीदयाल ठगे ने ज़मीन

बेची थी, दूसरी तावड़ों के दलीपसिंह ने। दोनों खेत सड़क के पार भट्टों के नज़दीक थे।"

"बिल्कुल ठीक," उत्तमप्रकाश ने बात जारी रखते हुए कहा, "इस हिसाब से आपको ज़्यादा से ज़्यादा आठ-सवा-आठ आने फ़ी गज़ के हिसाब से मुआवज़ा मिलेगा।"

"सरकार क्या गज़ों के हिसाब ज़मीन खरीदेगी ?" ताऊ ने हैरत में आते हुए पूछा।

उत्तमप्रकाश मुसकरा दिया और ताऊ के मन की बात भाँपता हुआ बोला, "आपकी मरज़ी है चाहे गज़ों के हिसाब से पैसे ले लो चाहे बीघे के हिसाब से। बात एक ही है। पैसे उतने ही मिलेंगे।"

"ना ना हम तो बीघे के हिसाब से ही पैसे लेंगे।" ताऊ ने दो-टूक में कहा। फिर दुनीचन्द की ओर देखता हुआ बोला, "दुनिया, कपड़ा गजों में मापे से, जमीन तो जरीब से मापी जाये से !"

ताऊ की सादगी पर उत्तमप्रकाश मुसकरा दिया। उसे समझाता हुआ बोला, "ताऊजी, खेती की ज़मीन बीघों में ही मापी जाती है। लेकिन जब वह रिहाइशी बन जाती है तो उसे गज़ों में मापते हैं।"

ताऊ को हक्का-बक्का देख वह फिर बोला, "जैसे मिट्टी मनों में तोली जाती है और सोना तोले-माशे और रत्ती के हिसाब से बिकता है।" फिर असली विषय की ओर पलटते हुए बोला, "मैं आप लोगों की इस समस्या में फँसा कई दिन सो नहीं सका। अपने वकील से भी सलाह ली। वह भी यही बोला कि ज़मीन को ऐक्वीज़ीशन से बचाना नामुमकिन है। मुआवज़े का फ़ैसला हो जाने के बाद गुंजाइश हुई तो क़ानूनी चाराजोई करेंगे। अपील दायर कर सकेंगे ताकि मुआवज़ा ज्यादा मिल सके।"

मुखिया और वे चारों मुँह बाये उत्तमप्रकाश की ओर देख रहे थे। वह कुरसी की पीठ पर पीछे ऐसे झुका जैसे थक गया हो। फिर एकदम आगे होकर धीरे-धीरे बोला, "इस कम्पनी में यों तो कई पार्टनर हैं। लेकिन ज्यादा हिस्से मेरे और एक पंजाबी के हैं।"

"साहिब जी, अगर पंजाबी तुम्हारा हिस्सेदार है तो बच के रहियो। पंजाबी तो हाथ पर हाथ मारकर चीज उड़ा ले जावें।" दुनीचन्द ने सावधान किया।

"नहीं, वह बिल्कुल खरा आदमी है।" उत्तमप्रकाश ने विश्वास के साथ कहा।

"मैं न मानूँ कोई पंजाबी खरा होवे। हमारे बुजुर्ग कहते थे," दुनीचन्द ने सब पर नज़र डाली, "पंजाबी कभी न सच्चा, सच्चा तो गधे का बच्चा।"

उत्तमप्रकाश ने उसकी ओर आंख भरकर देखा, लेकिन बात को नजरअन्दाज़

करते हुए बोला, "तो मैं कह रहा था, मैंने उससे बात की। उसे बताया कि रिश्तेदारी का मामला है, मदद जरूर करनी है। उसने तुरन्त हामी भर दी। कहने लगा अपनी गिरह से पैसे लगें—हजार-दो-हजार, चार हजार भी खर्च हो जायें—परवाह नहीं। लेकिन तेरे रिश्तेदारों का नुकसान न हो।" कहते-कहते उत्तमप्रकाश जैसे कुछ जोश में आ गया।

"उत्तमप्रकाश, बेटा तेरी बरखुरदारी है।" मुखिया ने एक बार फिर गद्गद होते हुए कहा।

"उसने भी बहुत सोच-विचार किया। पटवारी, गिर्दावर, क़ानूनगो, तहसीलदार से लेकर मिनिस्टरी तक में अफसरों से मिला। भूखा-प्यासा सारा-सारा दिन, दफ्तरों में मारा-मारा फिरता रहा। इस हफ़्ते-दस दिन में उसने इतनी मोटर दौड़ायी है कि आदमी कलकत्ते पहुँच जाता। बहुत माथा-पच्ची करने के बाद हम इस नतीजे पर पहुँचे कि ज्यादा मुआवज़ा लेने का एक ही तरीक़ा है कि पेशतर इसके कि सरकार मुआवज़ा तय करे, आसपास की जमीन बेचकर ऊँची दर से रजिस्टरी करा लें। इस तरह सरकार को भी ज्यादा मुआवज़ा देना पड़ेगा।" कहकर उत्तमप्रकाश ने दोनों हाथ मेज़ पर टिका दिये और उनकी आँखों में झाँकने लगा।

पाँचों ख़ामोश बैठे थे; ख़ाली-ख़ाली नज़रों से दीवारों को घूर रहे थे। मुखिया ने निराश स्वर में कहना शुरू किया, "उत्तमप्रकाश, आसपास कौन जमीन बेचेगा? कोई हमारी ख़ातिर अपनी जायदाद क्यों बेचेगा?"

"और कोई तो नहीं बेचेगा, मगर आप तो बेच सकते हैं! सड़क के पार आप लोगों की जमीन है। सरकार उस जमीन को ऐक्वायर नहीं कर रही है। आप फौरन उस ज़मीन को बेचकर रजिस्ट्रियाँ करा दें।" उत्तमप्रकाश ने स्वर कुछ ऊँचा करके कहा।

यह सुनकर उन सब पर एक सन्नाटा-सा छा गया। उनके चेहरे उतर गये, जैसे भीतर तक काँप गये हों। जमीन बेच देने के ख़याल से ही [illegible] का तो सारा शरीर सिहर उठा था। उन्हें चुप देखकर उत्तमप्रकाश ने [illegible] के तौर पर कहा, "यही एक तरीका रह गया है। और कोई [illegible] है। आप सोच-विचार लें। लेकिन वक़्त बहुत कम है। एक बार यह [illegible] और मौका [illegible] निकल गया तो फिर कुछ नहीं किया जा सकेगा।"

सुनकर उनके मुँह और भी उतर गये। कई [illegible] रहे। दुनीचन्द ने सबसे पहले आँखें ऊपर [illegible] देखकर रुक-रुककर कहना शुरू किया, "[illegible] मेरी तो गाँव में छोटी-सी दुकान है। लेकिन [illegible] खाते आये हैं। इनकी सेवा करते रहे हैं। [illegible]

इनके फायदे में हमारा फायदा है। आपकी सब बातें ठीक हैं। लेकिन आप भी जानते हैं कि किसान की पूंजी सिर्फ जमीन है। अगर गाँव के पूरब की जमीन भी बेच दें तो इनके पास क्या रह जायेगा? इनमें और गाँव के कम्मियों में क्या फरक रह जायेगा? कम्मियों ने तो अभी से आँखें दिखाना शुरू कर दिया सै।"

"लालाजी, आप तो बहुत स्याने आदमी हैं। ज़मीन हो, मकान हो, दुकान हो या कारख़ाना हो। सबको धन से बनाया या ख़रीदा जा सकता है। असली चीज़ धन है। ज़मीन की उपज मण्डी में ले जायी जाती है—क्यों?" उत्तमप्रकाश ने पूछा, फिर स्वयं ही उत्तर दिया, "इसलिए कि उसे बेचकर धन अपने हाथ लिया जा सके।"

"यह बात तो ठीक है।" सबने एक आवाज़ में कहा।

"गाँव के पूरब की ज़मीन इतनी उपजाऊ भी नहीं है। कुछ तो पथरीली है, फिर ढलान भी है। छह पुराने भट्ठे भी हैं उसमें। आसपास पथेर के गढ़े हैं।" उत्तमप्रकाश ने एक-एक बात पर ज़ोर देते हुए कहा।

"हाँ, एक भट्ठा तो मेरी ज़मीन में है। वह ज़मीन ठेके पर दी हुई थी।" ताऊ ने बताया।

"ताऊजी, आपने भट्ठे के लिए ज़मीन ठेके पर क्यों दी थी?"

"इसलिए कि उपज कम होती थी और ठेके पर देने से उसी ज़मीन से ज़्यादा आमदनी होती थी।" ताऊ ने उत्तर दिया।

"यही बात मैं कह रहा हूँ। अगर ज़मीन बेच देने से फ़ायदा हो तो उसे बेचने में संकोच नहीं होना चाहिए। ज़्यादा से ज़्यादा कितने दाने निकलते हैं साल-भर में?" उत्तमप्रकाश ने पूछा।

"कोई ख़ास नहीं। बस यह समझो कि लगान के पैसे निकल आवें। मैंने कई साल इस ज़मीन को जोता ही नहीं।" मुखिया ने कहा।

"मैं भी पिछले चार-पाँच साल से इस ज़मीन को जोतूं से।" ताऊ ने बताया।

"तो आप यह मानते हैं कि उस ज़मीन में खेती करने से ज़्यादा आमदनी नहीं हो सकती। अच्छा ताऊजी, आप बतायें। आपकी वहाँ पर कोई बत्तीस बीघे ज़मीन है। आप पूरे जी-जान से खेती करें तो उसमें से साल-भर में कितनी आमदनी होगी?" उत्तमप्रकाश ने खुले शब्दों में पूछा।

"कभी हिसाब नहीं लगाया।" ताऊ ने जवाब दिया।

"अभी हिसाब लगा लेते हैं। क्यों लालाजी, आप हिसाब जोड़ें।"

"मैं बताता हूँ।" बंसीलाल सोचता हुआ बोला, "उस जमीन में गेहूँ होता नहीं। जो होवे से। तो एक बीघे से बीस-पच्चीस रुपये से ज्यादा की उपज नहीं हो सकती। वह भी तब जब कि आदमी जान मारे।"

"और यह आमदनी भी पक्की नहीं। इसलिए कि एक तो फ़सल का दाम

घटता-बढ़ता रहता है। दूसरे बरखा और मौसम पर भी निर्भर है।" उत्तमप्रकाश ने कहा।

"हाँ, कई बार खेत में डाला हुआ बीज भी नहीं निकलता।" ताऊ ने माना।

"अगर आपको घर बैठे-बिठाये, हाथ-पाँव हिलाये बिना, मास में एक बीघे के पीछे चालीस-पचास रुपये मिल जायें और ज़मीन की रक़म खड़ी रहे तो आपको नुकसान है या फ़ायदा ?" कहकर उत्तमप्रकाश ने उनकी ओर ध्यान से देखा। सब चुप थे।

"देखने में तो कोई बुरा सौदा नहीं से।" बंसीलाल ने कहा।

"हाँ, पचास रुपये बीघे के मिलें तो ताऊ को साल में सोलह सौ रुपये मिल जायेंगे। महीने का सवा सौ रुपया !..." ताऊ तू तो बादशाह बन जायेगा !" दुनीचन्द ने हिसाब लगाकर जोश-भरी ख़ुशी के साथ कहा।

"यह तो ठीक से। रकम खड़ी रहेगी और ब्याज लगता रहेगा। लेकिन हम करेंगे क्या ? कहाँ जायेंगे ?" ताऊ ने मुखिया की ओर देखते हुए पूछा।

"ताऊजी, आप लोगों की जेब में पैसे होंगे, रोटी-पानी की फ़िक्र होगी नहीं, फिर किस बात का डर लगता है ? इन पंजाबियों को देखो : कितनी मुसीबतें झेलकर यहाँ पहुँचे हैं। धन-दौलत, गहना-कपड़ा, ज़मीन-जायदाद सब कुछ हाथ से गया। यहाँ आकर कैम्पों में रहे, वहाँ जगह न मिली तो सड़कों पर डेरा लगाया। लखपति लोग टोकरी ढोने पर मजबूर हुए, लेकिन किसी ने संकोच नहीं किया। जो काम मिला सो कर लिया। पैसा नहीं रहा तो उधार लिया। धीरे-धीरे किस्तों में चुकाया। हिम्मत होनी चाहिए। सब काम आ जाते हैं।" उत्तमप्रकाश ने समझाया। फिर अफ़सोस-भरी आवाज़ में बोला, "इधर ये हम लोग हैं। छाती पर बेर पड़ा हो तो भी उठाकर नहीं खाते। इसी इन्तज़ार में रहते हैं कि कोई उनके मुँह में डाल दे।" उत्तमप्रकाश उत्तेजित हुआ कहता गया, "लालाजी, बुरा मत मानना।...बहुत दिनों की बात है। मैं छोटा था। स्कूल में पढ़ता था। मैं अपनी बुआ के पास पहाड़गंज में आया। सर्दी के दिन थे। बुआ ने अँगरेज़ी साबुन लाने के लिए मुझे सवेरे-सवेरे बाज़ार भेजा। लाला अँगीठी सेंक रहा था। मैंने साबुन माँगा तो इनकार कर दिया। मैंने बताया कि सामने पड़ा है तो खिड़ककर बोला, 'भाग जा, बेचने के लिए नहीं है।' लेकिन किसी पंजाबी से आसमान पर चीज़ पहुँचाने के लिए कहो तो फ़ौरन वहाँ पहुँचायेगा।"

"पंजाबी यों भी सस्ती चीज़ बेचे से।" बंसीलाल ने दुनीचन्द की तरफ़ नज़र डालते हुए कहा।

दुनीचन्द खिसियाना-सा होकर चुप रह गया। उनके और साथी होंठों में मुसकरा रहे थे। उत्तमप्रकाश ने एक भारीपन-सा लेते हुए कहा, "हिम्मत ही

तो आप लोग भी सब कुछ कर सकते हैं। सरकार कई नयी स्कीमें खोल रही है। उनसे लाभ उठा सकते हैं। अगर पंजाबी बिना पैसे के काम-धन्धा शुरू कर सकता है तो आप पैसा होते हुए क्यों नहीं कर सकते ? सब कुछ कर सकते हैं, आप : मन बनाने की बात है।"

"समझो मन बना लिया।" ताऊ ने उत्तमप्रकाश की आंखों में झांकते हुए कहा।

"फिर विश्वास और भरोसा होना चाहिए।" उत्तमप्रकाश ने कहा।

"समझो, वह भी किया।" ताऊ बोला।

"फिर कोई दिक़्क़त ही नहीं है।" उत्तमप्रकाश सरल मुसकराहट के साथ बोला।

मुखिया और बंसीलाल को कुछ खुसर-फुसर करते देख उसने अगले ही क्षण कहा, "मौसाजी, कोई शक-शुबह है तो मुझे बतायें।"

"हां-हां बोलो, औरतों की तरह मुंह से मुंह जोड़कर क्या बातें कर रहे हो ?" ताऊ ने तुनककर कहा।

मुखिया खिसिया-सा गया। बोला, "बंसी से मैं पूछ रहा था कि अगर हम बेचना भी चाहें तो उस जमीन को खरीदेगा कौन ?"

"हां, ऊबड़-खाबड़ और गड्ढों से भरी उस ज़मीन को कौन लेगा ?" उत्तम-प्रकाश ने उत्साहित होते हुए कहा, "मैंने यही सवाल अपने पंजाबी पार्टनर से किया था। उसने फ़ौरन जवाब दिया कि हम खरीदेंगे। रिश्तेदारों की मदद करनी है तो पूरी तरह से करो। दस-बीस हज़ार की डस लगती है तो लगने दो।" उत्तमप्रकाश की आंखों में गर्व की चमक झलक आयी थी।

"जमीन का क्या दाम लगेगा ?" बंसीलाल ने पूछा।

"दाम क्या लगना चाहिए ?" उत्तमप्रकाश ने हंसते हुए पूछा। फिर आप ही जवाब दिया, "आपकी जो दो-फ़सली ज़मीन सरकार ऐक्वायर कर रही है उसका आपको पांच-साढ़े पांच सौ रुपया बीघा मिलेगा। सड़क पारवाली ज़मीन तो उससे बहुत हलकी है। उसका दाम कम होना चाहिए।"

"फिर भी क्या दाम होगा ?" बंसीलाल ने पूछा।

"हम आपको ढाई सौ से चार सौ रुपये बीघा देंगे। गड्ढोंवाली ज़मीन का ढाई सौ और हमवार ज़मीन का चार सौ। लेकिन रजिस्टरी दो हज़ार रुपये बीघा की करवायेंगे। रजिस्टरी का ख़र्च भी आपको ही देना होगा। पटवारी, गिर्दावर, क़ानूनगो और तहसीलदार की फ़ीस भी आपके जिम्मे होगी।" उत्तमप्रकाश ने व्यवसायी के स्वर में कहा।

उसकी इस बात को सुनकर उनके रंग फक हो गये। ताऊ तो कड़वा होता बोला, "नूं कहूं इसमें तो धोखा नजर आवे सै।"

"साहिबजी, बुरा न मानना।" दुनीचन्द ने कहा, "यह राह आपको पंजाबी ने ही सुझायी होगी। हमारे लोगों को ऐसे छल-फरेब नहीं आते।"

"लालाजी, यह राह पंजाबियों ने नहीं, आपने सिखायी है—जो एक मन अनाज देकर डेढ़ मन लेते हैं, जो दस रुपये उधार देकर सौ रुपये लेते हैं, जो चवन्नी की चीज का रुपया लेते हैं और बदनाम पंजाबियों को करते हैं।" उत्तमप्रकाश ने आवेश में कहा।

दुनीचन्द अपने इस अपमान पर बहुत बिगड़ा। उत्तमप्रकाश फ़ौरन उसके घुटने छूता हुआ बोला, "लालाजी, माफ़ी देना। सख़्त बात मुँह से निकल गयी।" फिर उसे समझाता हुआ बोला, "मेरा पार्टनर बहुत अच्छा आदमी है। उसके ख़िलाफ़ मैं आधी बात नहीं सुन सकता। उसकी सूझबूझ और मेहनत के बल पर ही तो मैं आज सायों के कारोबार में बराबर का हिस्सेदार हूँ। यूँ समझो कि मैं लकड़ी के साथ पत्थर तैर रहा हूँ।"

"मैं उसकी बात नहीं कर रहा था। आम पंजाबी खोटे हैं।" दुनीचन्द ने ठण्डा पड़ते हुए कहा।

उत्तमप्रकाश ताऊ की ओर देखता हुआ बहुत ही नम्र स्वर में बोला, "ताऊजी, रजिस्टरी इसलिए ज्यादा रुपये की करानी है कि आपको दूसरी जमीन का मुआवजा उसी हिसाब से मिल सके। अगर हमने पाँच-सौ रुपये बीघे की रजिस्टरी करवायी तो आपको इससे अधिक मुआवजा नहीं मिलेगा। दो हजार की करायेंगे तो बारह-पन्द्रह सौ रुपये फ़ी बीघा मुआवजा जरूर मिल जायेगा।" फिर हँसते हुए कहा, *"आपका इतना फ़ायदा करा रहा हूँ कि आपको सड़क पारवाली जमीन तो मुझे मुफ़्त ही दे देनी चाहिए।"*

"मुफ़्त ले लो, तू हमारा अजीज है।" मुखिया ने स्नेह जताते हुए कहा।

माड़ू सिंह अब तक ख़ामोश था, जैसे इस बातचीत से उसका कोई सम्बन्ध न हो। उसने जब महसूस किया कि मुखिया इस सौदे पर राजी है, बंसीलाल लगभग तैयार है, और ताऊ अनमना है—तो वह भठारता हुआ पाटदार आवाज में बोला, "यहाँ इस बात का फ़ैसला नहीं किया जा सकता। हम पाँच आदमी अपनी जमीन बेचने या न बेचने के बारे में अपनी मरजी से काम ले सकते हैं। लेकिन उस जमीन के और भी बीसियों मालिक हैं। बेचो तो सब एक साथ। पूरी बात समझ ली है। फ़ैसला अपने घर में ही बैठकर करेंगे।" सूबेदार माड़ू सिंह ने साफ़ शब्दों में कहा।

सूबेदार माड़ू सिंह की बात सुनकर दुनीचन्द खिल उठा। ताऊ की तरफ़ मुँह करके बोला, "ताऊ, सूबेदार ठीक कहे से। तुम्हारी क्या मरजी है?"

ताऊ सोच में पड़ा हुआ चुप रहा तो मुखिया ने कहा, "यहाँ करो या गाँव में; फ़ैसला वही होगा जो आप मिलकर करेंगे।"

"और भी तो तीस-पैंतीस मालिक हैं उस ज़मीन के ? उनसे पूछे बिना फ़ैसला कैसे कर लें ?" सूबेदार माड़ू सिंह ने तीखी आवाज़ में कहा।

"हूँ !" मुखिया हुंकारा, "सूबेदार सच कहूँ ? बुरा तो नहीं मानोगे ?"

सूबेदार माड़ू सिंह मुँह उठाये उसकी ओर देखता रहा तो वह बोला, "छोटे मालिक लँगड़े बैल की तरह हैं। वे भी उधर ही जायेंगे जिधर तगड़े बैल जायेंगे। बाकी, गाँव की पंचायत में बात करनी है, बहुत शौक से करो।"

उत्तमप्रकाश ध्यान से उनकी बातचीत सुन रहा था। बड़े सँभले हुए स्वर में वह बोला, "आप अपने घर पर ही बैठकर फ़ैसला करें। किसी से सलाह लेनी हो तो वह भी लें। कोई हर्ज नहीं है। लेकिन एक बात बता दूं कि जो भी फ़ैसला हो जल्दी कर लें। हम अगर यह ज़मीन ख़रीदने के लिए तैयार हैं तो सिर्फ़ आपके फ़ायदे के लिए। हमें इसमें कोई लाभ नहीं है। वहाँ कभी आबादी होगी तो हमारे पैसे निकलेंगे, वरना हमारी तो लाखों रुपये की रक़म खटाई में पड़ी रहेगी।"

मुखिया ने उनकी ओर देखते हुए पूछा, "बोल सूबेदार, क्या विचार सै ?"

"हफ़्ता, दस दिन तो लग ही जायेंगे।" सूबेदार माड़ू सिंह ने सोचते हुए कहा।

"हफ़्ता, दस दिन बहुत ज़्यादा हैं। आपको फ़ैसला जल्दी करना चाहिए। हफ़्ता, दस दिन हम इन्तज़ार नहीं कर सकते। आज हम आपके पास चलकर आये हैं। आपको यहाँ लिवाने के लिए मोटर भेजी है। मार्केट रेट से ज़्यादा दाम दे रहे हैं।" कहकर उत्तमप्रकाश एक क्षण चुप रहा, फिर ज़ोर देता हुआ बोला, "कल को आप हमारे पीछे घूमेंगे। ज़रूरी नहीं कि आप आयें तो हम सब काम छोड़कर आपकी बात सुनें।"

उत्तमप्रकाश को गम्भीर हुआ देख वे लोग सहम-से गये।

उत्तमप्रकाश आवाज़ को ऊँचा उठाते हुए बोला, "अगर आप यह समझते हैं कि वहाँ खेती हो सकती है तो बहुत भूल में हैं। वहाँ चारों तरफ़ आबादी हो जायेगी तो आपकी खेती बचेगी कैसे ? फिर अगर सरकार ने ज़मीन ली तो वह दवन्नी गज़ के हिसाब से भी पैसे नहीं देगी।"

"क्यों सूबेदार, इब बोल क्या कहे है ?" मुखिया ने पूछा।

"चौधरी, तुम तो अँगूठा लगाने को तैयार खड़े हो चाहे वह फांसी का काग़ज़ ही क्यों न हो।" सूबेदार माड़ू सिंह ने तीखे पड़ते हुए कहा।

मुखिया को यह बात बहुत चुभी। भड़कता हुआ बोला, "सूबेदार तो जनम से ही बोड़ा सै। हमारे गांव के रयों (राजपूतों) की सुर बाकी गांव से अलग ही रहती सै। लोग पूरब में जायेंगे तो ये पच्छिम को भागेंगे।"

"चौधरी, मैंने तेरा क्या बिगाड़ा सै ? मैं ज़मीन नहीं बेचना चाहूँ, मुझपर

कोई धौंस से ?" सूबेदार माड़ू सिंह ने गुस्से से कहा।

"और मैं बेचूँ तो क्या तू मेरी बाँह पकड़ेगा ? तेरी जमीन जाटों और तगों की जमीन में घिरी हुई है। हम बेच दें तो तू किधर से आकर अपने खेत जोतेगा ? हम राह नहीं देंगे तो तू वहाँ कैसे पहुँचेगा ? ज़ोर-ज़बरदस्ती करेगा तो हाथ पाँव तुड़वायेगा ?" मुखिया ने धनकती हुई आवाज में कहा।

"चौधरी, तू जाट है तो मैं राजपूत हूँ। तेरे पास बन्दूक है तो मेरे पास रफ़ल है।" सूबेदार माड़ू सिंह ने तुर्की-ब-तुर्की जवाब देते हुए कहा।

"सूबेदार, रफल की धौंस मत दे।" ताऊ ने बिगड़ते हुए कहा, "सबसे पहले मैं बेचूँगा जमीन। तू कर ले क्या करे सै। बोल बसी, तू बेचे या नहीं ?" ताऊ ने दो-टूक पूछा।

"हम तो उधर ही जायेंगे जिधर बाकी गाँव जायेगा।" बंसीलाल ने कहा।

"ले, हमारी जमीनों में तो आदमी बसेंगे। तू अपनी जमीन में गादड़ बसा लेना।" ताऊ ने टिकाचरी करते हुए सूबेदार माड़ू सिंह से कहा।

इस झगड़े से वातावरण बहुत ख़राब हो आया था। पाँचों के पाँचों एक साथ बोल रहे थे। उत्तमप्रकाश सब उन्हें शान्त करने की कोशिश कर रहा था। यह तनाव दूर करने के लिए हँसता हुआ बोला, "आपने पंचायत की मीटिंग यहीं शुरू कर दी है।"

चौधरी लोग आपस में उलझे हुए ही थे कि साथ वाली कैबिन से घण्टी बजी। उत्तमप्रकाश मुँह उठाकर उधर देखने लगा। फिर बुदबुदाया कि शायद रणजीत आ गया है। वह उठकर जल्दी से बाहर निकला और उस कैबिन में घुस गया।

"कब आये रणजीत ?"

"अभी...पाँच मिनट पहले।" उसने कुरसी की पीठ पर झुकते हुए थकी हुई आवाज में कहा।

"काम हो गया ?" उत्तमप्रकाश ने उत्सुकता से पूछा।

"हो गया ..परसों रजिस्ट्री करवाने के लिए आयेंगे। ऐप्लीकेशन्ज पर सबके सिगनेचर और थम्ब इम्प्रेशन ले आया हूँ। दो सौ प्लॉट बिक गये हैं। पचास पर्सेंट डाउन पर, अढ़सठ आधी क़ीमत नक़द पर...बाक़ी यूजुअल किस्तों पर।" रणजीत ने विजय के भाव से कहा।

"गुड, इसका मतलब कि हमें पचास-साठ हजार रुपये फ़ौरन मिल जायेंगे।" उत्तमप्रकाश ने ज़ोर से हाथ मिलाते हुए चहकती आवाज में कहा।

दूसरी कैबिन से अभी भी उसी तरह आवाजें आ रही थीं। रणजीत ने सुनकर पूछा, "कहाँ के लोग आये हैं ?"

"दारापुर के।" उत्तमप्रकाश ने बताया।

"मौसाजी ?" रणजीत ने पूछा।

"हाँ, चार आदमी और साथ हैं। एक कोई सूबेदार है—राजपूत। वह कुछ अनमना है। उसी की बात पर बहस हो रही है।"

"तो मनाओ उसको भी। जल्दी फ़ैसला होना चाहिए।" रणजीत ने कहा।

"तुम भी उधर ही आ जाओ। दोनों मिलकर कोशिश करते हैं।" उत्तमप्रकाश ने आग्रह से कहा।

"प्रकाश देखो, मैं डायरेक्टर सेल्ज़ हूँ, तुम डायरेक्टर परचेज़ हो। लोकल आदमी हैं : मुझे देखकर बिदक जायेंगे।" रणजीत ने हँसते हुए कहा।

"तुम आओ तो सही! तुम्हारे बारे में उन्हें पहले ही बता चुका हूँ। तुम्हारी बहुत तारीफ़ की है।" उत्तमप्रकाश ने जोर देते हुए कहा।

"चलो अच्छा!" रणजीत ने दराज़ के ताले को खींचकर उठते हुए कहा, "आज परचेज़ का तजरबा भी हो जाये।"

जब वे कैबिन में पहुँचे तो दुनीचन्द बीच-बचाव करा रहा था। इन्हें देख वे सब चुप हो गये। रणजीत ने मुसकराते हुए झुककर सबको हाथ जोड़े।

"ये मेरे पार्टनर हैं—मिस्टर रणजीत, जिनके बारे में मैंने बताया था।" उत्तमप्रकाश ने कहा।

वे सब खड़े हो गये तो रणजीत ने मुसकराते हुए बड़ी विनम्रता से कहा, "बैठिए-बैठिए, क्यों मुझपर इतना बोझ चढ़ा रहे हैं। मैं तो आपका बच्चा हूँ।" कहता हुआ वह सीधा सूबेदार माड़ूसिंह के पास आ बैठा। हाथ मिलाते ही सूबेदार के हाथ की सख़्ती को महसूस करते हुए रणजीत ने पूछा, "आप आर्मी में रहे हैं ?"

"जी साब।" माड़ूसिंह ने नम्र स्वर में कहा।

"मेरा अन्दाज़ा ठीक निकला।" रणजीत ने सूबेदार की मूँछों और क्रियुक्ट हेयर स्टाइल की ओर इशारा करते हुए कहा, "अभी सर्विस में हैं या...?"

"पिछले साल पेनशन पायी है।" माड़ूसिंह ने कहा।

"आर्मी लाइफ़ तो बहुत ऐक्टिव होती है। आजकल क्या शुग़ल रखा है ?" रणजीत ने पूछा।

"कोई ख़ास नहीं। थोड़ी जमीन है गाँव में। सोचा था खेती करूंगा। लेकिन ज़मीन सरकार ले रही है।" सूबेदार माड़ूसिंह ने सपाट आवाज़ में कहा।

"आप तन्दुरुस्त हैं। उम्र भी ज्यादा नहीं—यही पैंतालीस के लगभग होगी ?" रणजीत ने जान-बूझकर कम बताते हुए कहा।

"नहीं साब, पचास से ऊपर हूँ।"

"अच्छा!" रणजीत ने हैरान होते हुए कहा, "पर आप लगते नहीं इतनी उम्र के।"

माड़ू सिंह खुश हो गया। छाती फुलाता हुआ बोला, "फ़ौजी ज़िन्दगी में डिसिप्लिन बहुत होता है। वक़्त पर उठना, खाना-पीना-सोना, पीटी-परेड—सेहत अच्छी रहती है।"

"यहाँ नौकरी के लिए कोशिश नहीं की? किसी कारख़ाने में—सिक्योरिटी ऑफ़िसर की?" रणजीत ने पूछा।

"साब, सोलजर बोर्ड के पास नाम दर्ज है। देखें कब नम्बर आता है। वाकफ़ीयत हो तो भाईबन्दी से काम जल्दी भी हो जाता है।" माड़ू सिंह ने कहा।

"फ़िलहाल फ़रीदाबाद में कोशिश की जा सकती है। मेरा एक दोस्त वहाँ फ़ैक्टरी लगा रहा है। अगर आप फ़रीदाबाद जाना चाहें तो उससे पता कर सकता हूँ।" रणजीत ने कहा।

"मेहरबानी होगी साब! फ़रीदाबाद भी चला जाऊँगा। अगर इधर मिल जाये तो ज़्यादा सहूलत रहेगी।" माड़ू सिंह ने कहा।

"इधर भी मिल सकती है।" रणजीत ने सोचते हुए कहा, "लेकिन वक़्त लगेगा। नजफ़गढ़ रोड पर इन्डस्ट्रियल एरिया बन रहा है। आप साल-छह महीना इन्तज़ार कर सकें तो यहीं कोशिश करेंगे।"

"साब, ध्यान में रखें। मैं भी आपसे मिलता रहूँगा।" सूबेदार माड़ू सिंह ने शुक्रिया अदा करते हुए कहा।

रणजीत और माड़ू सिंह को घुल-मिलकर बातें करते देख दुनीचन्द का माथा ठनका। वह माड़ू सिंह को सम्बोधित करता हुआ बोला, "सूबेदारजी, गाँव लौटना है या रात को यहीं सोने का इरादा है?"

"चले जाना। मेरे साथ भी दस मिनट बैठ जाओ। पहली बार आप लोगों के दर्शन करने का मौक़ा मिला है।" रणजीत ने आग्रह करते हुए कहा।

"आप तो यों बातों में लगे हैं जैसे नातेदारी सूझ गयी हो।" ताऊ ने हँसते हुए कहा।

"नातेदारी तो है ही।" रणजीत ने आगे झुककर ताऊ की ओर देखते हुए कहा, "जब आप चौधरी साहब के नातेदार हैं तो मेरे अपने आप नातेदार हो गये।" कहकर रणजीत हँसने लगा। फिर उत्तमचन्द को सम्बोधित करते हुए पूछा, "चौधरी साहब, मेहमानों की कोई ख़ातिरदारी भी की है या सूखी मग़ज़-पच्ची करते रहे हो?"

"चाय पी है, शरबत लिया है।" मुखिया ने कहा।

"चाय-शर्बत पिलाना कोई ख़ातिरदारी नहीं।" रणजीत ने हँसते हुए कहा।

दुनीचन्द ने ध्यान से रणजीत की ओर देखा। फिर पास बैठे बंसीलाल के कान में फुसफुसाया, "देखा पंजाबी को? कितनी मिठास है ज़बान में! जैसे बिर्लिंग

की सारी चीनी घुल गयी हो। नूं कहूँ इसकी बोलबाणी का सवाद शहद का है, लेकिन असर ज़हर का होगा।"

बंसीलाल ने कोई जवाब नहीं दिया तो दुनीचन्द खिसियाना हो गया और पीछे सोफ़े की पीठ पर टिक गया। फिर एकदम आगे को झुकता हुआ बोला, "चौधरी, अगर आपको जाने में देर है तो मैं चलता हूँ। खारी बावली में काम है। घर बोल आया था सवेरे आऊँगा।" उसने मुखिया की ओर देखते हुए कहा।

"लाला जी, बैठो न; इनके साथ ही मोटर में जाना।" उत्तमप्रकाश ने आग्रह करते कहा।

"साहिब जी, मैं जाऊँगा।" दुनीचन्द ने उठते हुए कहा।

"मोटर छोड़ आती है।" उत्तमप्रकाश ने कहा।

"नहीं, क्यों कष्ट करते हैं। बाहर निकलते ही तांगा मिल जायेगा।" दुनीचन्द ने अपना अँगोछा सँभालते हुए कहा।

दुनीचन्द बाहर चला गया तो बंसीलाल बोला, "अच्छा हुआ दुनिया चला गया। वह भी बगैड़ा है!"

"बगैड़ा सै बगैड़ा! बैठे-बिठाये हमें लड़ा दिया।" ताऊ ने हँसते हुए कहा।

कुछ क्षण वे चुप रहे। रणजीत अपने निचले होंठ के बायें कोने को दाँतों में भींचता रहा। उत्तमप्रकाश दोनों हाथों की उँगलियों को आपस में मरोड़ता हुआ बोला, "रणजीत!"

रणजीत ने चौंककर उसकी ओर देखा तो उत्तमप्रकाश सहज भाव से बोला, "मैंने पूरी बात इन्हें बता दी है। लेकिन ऐसा लगता है कि इनके मन में अभी कुछ शक-सुबह है।" उसने सूबेदार माड़ू सिंह की ओर देखा।

सूबेदार ने बेचैनी से पहलू बदला और संयत स्वर में बोला, "चौधरी जी शक-सुबह की बात नहीं है। मैं उसूल की बात कर रहा था। गाँव के बाकी मालिकों को पूछना जरूरी है।"

"सूबेदार जी, हफ़्ते भर इन्तज़ार करना बहुत मुश्किल है।" उत्तमप्रकाश ने एक-एक शब्द पर जोर देते हुए कहा।

सूबेदार माड़ू सिंह ने फिर अपनी दलीलें दोहरानी शुरू कीं तो मुखिया और ताऊ भी बोलने लगे। रणजीत कुछ देर धीरज रखे उनकी बहस सुनता रहा। फिर दाहिना हाथ थोड़ा ऊपर उठाकर मुसकराता हुआ बोला, "ऐसा लगता है कि आप काफ़ी देर से इस झंझट में फँसे हुए हैं। थक गये होंगे। आपको ताज़ा दम करने के लिए कुछ मँगवाया जाये...आप बीयर पसन्द करेंगे या ह्विस्की?" रणजीत ने उनकी ओर देखते हुए पूछा।

"हम तो देसी पीनेवाले हैं। बहुत जोर मारा तो आबकारी की पी ली।" सूबेदार ने हँसते हुए कहा।

"इब तो मैंह बरसेगा ! सूबेदार भी खिला है।" मुखिया ने हँसते हुए कहा।

"इब चलना चाहिए।" बंसीलाल ने गोद में अँगोछा उठाते हुए कहा।

"तू कैसा बामण है। मुफ्त का नशा छोड़ के भागे है ?" ताऊ ने बंसीलाल का हाथ पकड़ते हुए कहा। फिर बोला, "पी ले, इससे प्रेम बढ़े सै।"

रणजीत ने घण्टी बजाकर चौकीदार को बुलाया और उसे एक चिट देता हुआ बोला, "बहादुर, नीचे जाओ।"

"दिल्ले साब के पास ?" बहादुर ने पूछा।

रणजीत ने हाँ में सिर हिला दिया तो वह होंठों में मुसकराता हुआ नीचे उतर गया।

थोड़ी ही देर में छह गिलास आ गये। बैरा सोडे की बोतलें, बर्फ और स्नैक्स रख गया। रणजीत ने एक बोतल खोलकर पेग बना दिये। उत्तमप्रकाश ने सोडा डाला। मुखिया, ताऊ और बंसीलाल इस क्रिया को बहुत दिलचस्पी और हैरानी से देख रहे थे।

रणजीत ने अपना गिलास उठाया और सूबेदार के गिलास से टकराकर बोला, "आपके साथ दोस्ती और आपके सुख के लिए !" रणजीत ने गिलास होंठों से लगाया और फिर साइड टेबल पर रख दिया।

मुखिया, ताऊ और बंसी ने एक ही साँस में गिलास खाली कर दिये और कड़वाहट को दूर करने के लिए खँखारे। ताऊ ने रणजीत और उत्तमप्रकाश के गिलास भरे हुए देखे तो चकित होता बोला, "थुमार दूध पियो या सराब ?"

"ताऊ, साहब लोग ऐसे ही पीते हैं।" सूबेदार ने बताया।

"अच्छा !" ताऊ को बड़ी हैरानी हुई। फिर वह कहने लगा, "अगर घूंट-घूंट सराब पीने से आदमी साहब बने सै तो अगली बार हम भी साहब बन सैं।"

रणजीत ताऊ को दिलचस्पी से देख रहा था। वह सिग-सिगर उठाता हुआ बोला, "ताऊ जी को देख मुझे अपने तापा जी की याद आ गयी। वे भी ऐसे ही पीते थे।"

"अच्छा ! फिर तो जरूर भले आदमी होंगे।" उत्तमप्रकाश ने कहा।

ताऊ खुश हो गया और होंठों पर हाथ फेरता हुआ बोला, "चबा-चबाकर पीने में क्या मजा है ? मजा तो तब आये जब दाह सीने में जाके लगे।"

दो पेग के बाद उन्हें नशा हो गया। रणजीत का इशारा पाकर उत्तमप्रकाश ने फिर सारी बात दोहराते हुए अन्त में दोबारा कहा, "लेकिन ऐसा लगता है कि इन्हें अभी तक शक-शुबह है।" उत्तमप्रकाश ने सूबेदार की ओर इशारा किया।

"मैंने जमीन बेचने से इनकार नहीं किया था। सिर्फ़ यह कहा था कि बाक़ी मालिकों से सलाह-मशवरा जरूरी है। इस काम में थोड़ा टेम लगेगा ही।" सूबेदार माड़ू सिंह ने कहा।

रणजीत ने सबके लिए नया पैग बनाया और एक चुस्की भरकर उत्तमप्रकाश की ओर संकेत करता हुआ बोला, "चौधरी साहब ने आपको सब कुछ बता ही दिया है। लेकिन कोई शक-सुबह नहीं रहना चाहिए। मैं आपको एक बार फिर स्पष्ट कर दूं।" कहकर रणजीत ने उन चारों की ओर देखा और एक-एक शब्द को चबाता हुआ बोला, "हमें आपकी ज़मीन ख़रीदने में कोई दिलचस्पी नहीं थी। मौसा जी आये और बखेड़ा सुनाया तो हमने सोच-विचार किया कि आप का नुक़सान न हो। हम जो कुछ कर रहे हैं सिर्फ़ आप के फ़ायदे के लिए। बाकी रहा 'टैम' का सवाल—तो हम दो-चार-छह महीने भी रुकने के लिए तैयार हैं, लेकिन उसमें आपका ही नुक़सान है। आप यह समझो कि दुश्मन सिर पर खड़ा है।" कहकर रणजीत ने सूबेदार की तरफ़ देखा और पूछा, "आप ही बतायें, पहला वार उसे करने देना है या ख़ुद करना है?"

"हम करेंगे। जो पहल करता है वह आधी लड़ाई जीत लेता है।" सूबेदार ने अपना अनुभव बताया।

"इस वक़्त आपकी दुश्मन सरकार है। कम पैसा देकर ज़मीन लेना चाहती है। पेशतर इसके कि सरकार मुआवज़ा तय करे आप घटिया ज़मीन महँगे दाम पर बेच दें। फिर सरकार को भी कम से कम वह दाम तो देना ही पड़ेगा।" कहकर रणजीत सूबेदार की आँखों में झाँकने लगा।

सूबेदार यों सिर हिला रहा था जैसे बात उसके ख़ाने में बैठ गयी हो। वह पाटदार आवाज़ में बोला, "साब, मैं फ़ौजी आदमी हूँ। बात समझ में आ जाये तो लम्बी-चौड़ी तकरार मुझे आती नहीं। मैं अभी, इसी टैम, इकरारनामा लिखने के लिए तैयार हूँ।"

"सूबेदार जी, मर्द का क़ौल अदालती तहरीर से भी कहीं ज़्यादा पक्का होता है। आपने कह दिया, हमारे लिए यही इक़रारनामा है।" रणजीत ने कहा। फिर भौंहें ऊपर चढ़ाता हुआ बोला, "हमने आपके लिए क्या कुछ सोचा है, अभी बताऊँगा तो आप समझेंगे कि झाँसा दे रहा हूँ। हमारा तो एक ही उसूल है कि जिसकी मदद करनी है, डटकर करो। जहाँ मदद नहीं करनी है, साफ़ जवाब दे दो। सख़ी से सूम भला जो तुरत दे जवाब।" रणजीत ने निर्णयात्मक स्वर में कहा।

"यही तो मर्दों का उसूल सै।" ताऊ बोला।

मुखिया ने बंसीलाल की तरफ़ देखा। उसकी पलकें भारी हो पुतलियों पर झुक आयी थीं। वह सोफ़े पर गरदन टिकाये जैसे सो गया था।

"बंसी तो गया।" मुखिया ने कहा।

"बामण मुफ्त के लालच में जादा पी गया सै।" ताऊ ने हँसते हुए कहा।

"एक-एक पेग और हो जाये?" रणजीत ने बोतल उठाते हुए कहा।

"ना बस, इब और नहीं।" मुखिया ने लड़खड़ाती हुई आवाज़ में मना किया।

"इब जायेंगे, घनी देर हो गयी है। घरवाले फ़िकर में बैठे होंगे।" ताऊ बोला।

मुखिया ने बंसीलाल को झंझोड़कर जगाया। वे जाने के लिए खड़े हो गये तो उत्तमप्रकाश ने पूछा, "आख़िरी फ़ैसला क्या हुआ?"

"फ़ैसला हो गया। जब जी चाहे, जहाँ जी चाहे, अँगूठा लगवा लो, क्यों सूबेदार?" मुखिया ने कहा।

"हाँ, मैं तो अभी तैयार हूँ।" सूबेदार ने रणजीत की जेब में लगे पेन की ओर हाथ बढ़ाते हुए कहा।

"नहीं कल। आप दूसरे मालिकों से भी बात कर लें। हम दोपहर के बाद आयेंगे।" रणजीत ने कहा।

चारों सीढ़ियाँ उतर आये तो ड्राइवर उठकर आया और कार के दरवाज़े उसने खोल दिये। मुखिया रणजीत को थोड़ा परे ले जाकर बोला, "आपसे एक सलाह लेनी थी!"

"क्या?" रणजीत ने थोड़ा आगे झुकते हुए पूछा।

"पटवारी आया था। एक तरकीब बता गया सै जिससे चार बीघे ज़मीन बच सके है।" मुखिया ने गोपनता के स्वर में कहा।

"कल गाँव में आ ही रहा हूँ। वहीं बात करेंगे। जैसा मुनासिब होगा, कर लेंगे।" रणजीत ने भरोसा दिया।

ताऊ कार की ओर बढ़ता हुआ बोला, "मैं आगे बैठूँगा। पवन खुला होकर।"

वे कार में बैठ गये तो उत्तमप्रकाश और रणजीत दोनों ने हाथ जोड़े। कार चली गयी तो रणजीत बोला, "प्रकाश ठीक हो गया न?"

"फ़र्स्ट रेट।" उत्तमप्रकाश ने कहा।

अठारह—

दुनीचन्द दुकान की देहली के पास उकड़ूँ बैठा धीरे-धीरे पंखा कर रहा था। बीच-बीच में वह गली में दोनों ओर दूर तक झाँकता और फिर दीवार के साथ पीठ टेके पंखा हिलाने लगता। उसने गली में किसी के जूतों की चीं-चीं सुनी तो उसके

भीतर एक उबाल-सा उठा। पंखा उसने ज़मीन पर डाल दिया और उचककर खड़ा हो गया। रणसिंह को आता देखा तो मुसकराकर बोला, "कहो चौधरी जूता क्यों इतना चरड़-चरड़ करे है ?"

"इतना चरड़-चरड़ नहीं करे है जितना पाँव को काटे है। झोटे की खाल से बना है।" रणसिंह ने दोनों पाँवों को जूते में मचमचाते हुए कहा।

"ईब फेंक दे इसे। विलायती जूता ले ले: फलैक्स का बढ़िया जूता जो गोरे साब लोग पहनते थे।" दुनीचन्द ने आवाज को ऊँचा करते हुए कहा।

"लाला, विलायती जूता कैसे लूं। न ताजा-ताजा बाबु (बाप) मरा है न जमीन बिकी सै।" रणसिंह ने हँसते हुए कहा।

दुनीचन्द भी हँस दिया। उसने रणसिंह को दुकान में आने का इशारा किया। रणसिंह बाहर आ खड़ा हुआ तो दुनीचन्द ने उसे भीतर आने का आग्रह किया।

रणसिंह आकर बैठ गया तो उसी की बात को पकड़कर दुनीचन्द ने आँखें आधी बन्द करते हुए कहा, "बाबु को मरे तो देर हो गयी है। हाँ, तुम्हारी जमीन जरूर बिक रही है। सुना है कल मुखिया, ताऊ, बंसी, माँड़ू सिंह सौदा भी कर आये हैं। तुम्हें पता ही होगा ! कल सब मोटर में बैठकर शहर गये थे।" दुनीचन्द ने मोटर पर जोर देते हुए कहा।

"तू भी तो उनके साथ ही था।" रणसिंह ने कहा।

"मैंने जब देखा कि ये गाँव को बेचने पर राजी हो गये हैं तो मैं उठ आया था।" दुनीचन्द ने सफ़ाई दी।

"पक्की बात है ?" रणसिंह ने पूछा।

"मैं कैसे कहूं ?" दुनीचन्द ने उसकी आँखों में आँखें पिरोते हुए कहा, "मुखिया से पूछो या माड़ू सिंह से।" फिर आप ही आगे बोला, "बात पक्की होगी तभी तो मोटर लेने और छोड़ने आवे है। बिना स्वारथ के कोई अपना गधा न देवे !"

रणसिंह सोच में हुआ तो दुनीचन्द बोला, "सुना है आज गाँव की पंचायत हो रही है।" फिर होंठ बिचकाते हुए कहने लगा, "पंचायत तो फण्डबाजी है। फैसला तो वहीं कर आये हैं। सुना है सराब में डूबकर आये थे। ताऊ और बंसी तो नसे में अन्धे थे। अपना घर भूलकर पड़ोसियों के द्वार पीटते रहे।" दुनीचन्द ने जैसे कोई भेद की बात बताने के स्वर में कहा।

रणसिंह और भी सोच में पड़ा तो दुनीचन्द मानो अपने को ही सुनाता हुआ बोला, "कैसा माड़ा जमाना आ गया है ! जागते की पाँयत घेर रहे हैं !"

रणसिंह के नथुने फड़फड़ाने लगे थे। उसने गुस्सा-भरी नज़रों से दुनीचन्द की ओर देखा तो वह बोला, "चौधरी इब करोध दिखाने से केह फायदा। मरे साँप का जहर किस काम का ?"

"बेच के दिखाये कोई मेरी जमीन ! हाथ काट दूँगा।" रणसिंह भड़क उठा।

"देखेंगे चौधरी ! ऐसी भड़क पंचायत में भी मारी तो मानें !" दुनीचन्द ने उसे और शान पर चढ़ाते हुए कहा।

रणसिंह बिना किसी का नाम लिये गालियाँ और धमकियाँ देता हुआ गली में आ गया। दुनीचन्द फिर अपनी दहलीज में बैठा पंखा झलने लगा। बार-बार उचककर गली में भी झाँक लेता। किसी को उधर आता न देख कभी वह पिण्डली और कभी रान को खुजाने लगता।

टेकराम की माँ गुरजो को दुकान का चबूतरा चढ़ते देख दुनीचन्द खिसककर गद्दी पर आ बैठा। गुरजो अपनी ओढ़नी में से गोथनी खोलकर तराजू के पलड़े में लौटती हुई बोली, "आधे नाज का नमक दे, आधे का सोदा।"

"माँ, मैं समझा था कि तू नोटों से भरा मोट खोलेगी। तू तो गोथनी उठा लायी।" दुनीचन्द ने नाज को हाथ से तराजू में सँभालते हुए कहा।

"नोट तो तेरे पास होंवे जो बणज-व्यापार करे। हमारे घर में तो नाज ही मिले।" गुरजो ने पल्लू में इधर-उधर अटके दानें बीनकर तराजू में चढ़ाते हुए कहा।

"माँ, अब खेतों से नाज नहीं उगेगा, नोट उगेंगे।" दुनीचन्द ने गहरी नजरों से उसकी ओर देखा।

"दुनिया, क्यों अनहोनी बात कहे ! जब तू अपने पेट से बच्चा जनेगा तब खेतों में भी नोट उगेंगे।" गुरजो ने झुँझलाहट के साथ कहा।

दुनीचन्द खिसियाना हो गया। फिर बहुत नरमी के साथ बोला, "माँ तू तो गुस्सा खा गयी।"

"तू माँ बराबर मुझे मसखरी जो करे से !" गुरजो ने जरा तीखेपन से कहा, "अपने को बहुत चातुर समझे से !"

"ना माँ, मैं कहूँ तो मुझ कोढ़ निकले।" दुनीचन्द ने फौरन सफाई पेश की और बोला, "सुना है कि गाँव के पंचों ने सड़क के पारवाली जमीन भी बेच दी है। अब सबको पैसे दिखायेंगे। तुम्हारी ज्यादा जमीन तो उधर ही है।"

"जमीन किसने बेची है ?" गुरजो ने सारा तीखापन भूलकर चिन्तित होते हुए पूछा।

"पक्का तो पता नहीं। सुना है मुखिया, सूबेदार, बंसी, ताऊ कल दिल्ली जाकर किसी कम्पनी से सौदा कर आये हैं।" दुनीचन्द ने भूलती-सी आवाज में आगे कहा, "आप लोगों से पूछकर ही सौदा किया होगा।"

"नाँ, हमें किसी ने नहीं पूछा।" गुरजो बोली।

"माँ, मुखिया बात करे, बंसी सहमत हो, तो कौन रोकेगा उन्हें ? चाहें तो

चीख भी नहीं मारे। एकदम स्वास गुम हों। इन्होंने उसे गाँव में बुलाया है। लठ गाड़कर खड़े हो जाओ तो बच जाओगे। ज़मीन गयी तो आबरू धेल्ले की रह जायेगी।" पहलादसिंह के साथ ही दुनीचन्द भी उठ गया।

चबूतरे पर आकर वे रुक गये। दुनीचन्द दूर सामने खेतों की तरफ़ देखता बोला, "चौधरियों की ज़मीनें बिक गयीं तो वे बेकार होंगे ही। हम लोग साथ में मुफ्त में मारे जायेंगे।" दो क्षण बाद पहलादसिंह के कन्धे पर हाथ रखकर बोला, "मेरी बात याद रखना। तुम लोगों ने लठ गाड़ दिया तो गाँव बच जायेगा। वरना एक दिन ये मकान भी पंजाबियों के हो जायेंगे।"

पहलादसिंह फुफकारता हुआ चारे का गट्ठा उठाकर अपने तबेले की तरफ़ बढ़ गया। दुनीचन्द कुछ देर उसे जाते हुए देखता रहा, फिर आकर दुकान में बैठ गया। हर क्षण उसके अन्दर बेचैनी बढ़ रही थी। वह कभी लेटकर पंखा करने लगता, कभी झाड़न उठाकर सौदे से भरे पीपों-डब्बों और मटकों की सफ़ाई में लग जाता और कभी चबूतरे पर आकर गली में झाँकने लगता।

देर तक भी जब गाँव में कोई शोर-पुकार नहीं मची, किसी की ऊँची आवाज़ सुनाई नहीं दी, तो वह उदास होने लगा। उसे सारे गाँव पर गुस्सा आ रहा था। उसका दिल यह सोच-सोचकर बैठा जा रहा था कि ज़मीनें बिक गयीं तो उसका धन्धा भी चौपट हो जायेगा।

कब दीवार से पीठ टिकाये-टिकाये वह ऊँघ गया, उसे पता न चला। पता चला जब गली में लोगों के बोलने की आवाज़ सुनाई दी। वह हड़बड़ाकर उठा और आँखें झपकता हुआ बाहर चबूतरे पर आ गया। त्यागियों के मुहल्ले के कई लोग आपस में कुछ बातें करते हुए मुखिया की बैठक की तरफ़ जा रहे थे। दुनीचन्द ने सोचा शायद पंचायत शुरू होने वाली है।

वह फिर आकर दुकान में बैठ गया। कुछ मिनटों बाद गली में फिर आवाज़ें सुनाई दीं। दुनीचन्द लपककर चबूतरे पर आ गया। तँवरों के मुहल्ले के कई लोग ज़ोर-ज़ोर से बातें करते हुए मुखिया की बैठक की तरफ़ चले जा रहे थे। दुनीचन्द के मन में खुदबुद होने लगी। उसकी बेचैनी बढ़ती जा रही थी। वह चबूतरे पर धूप में खड़ा हुआ मुखिया की बैठक की तरफ़ देखता रहता। आवाज़ें सुनने की कोशिश करता, लेकिन किसी तरह का हल्ला कानों में न पड़ा तो उसका मन उदास हो आया। मुँह ही मुँह बुदबुदाया, "आग लगे तो धुआँ जरूर उठे है। मेरे पास ही भड़क रहे थे। पंचायत में गुड़ बने बैठे होंगे।"

दुनीचन्द ऐसा हो रहा था जैसे उसका सब कुछ लुटने को तैयार हो। वह भगवान् को याद करता, पंजाबियों को गालियाँ देता और गाँव के लोगों को कोसता हुआ ज़ोर-ज़ोर से पंखा कर रहा था जब दुकान के चबूतरे पर पहलादसिंह ने क़दम रखा। दुनीचन्द ने पंखा रख दिया और आँखें फाड़े उसके मुँह को

देखने लगा।

"लाला चल पंचायत में। मुखिया बुलावें सैं।"

"मेरा वहाँ क्या काम ?" दुनीचन्द ने कहा।

"यह तो मैं न जानूं। पंचायत ने तुम्हें बुलाया सै। तुरत चल।"

"सुख-शान्ति सै ?"

"नहीं, लठ चले है ? तू भी सरीर को थोड़ा तेल लगा ले।" पहलादसिंह ने आँखें तरेरकर कहा।

"क्या फैसला किया सै पंचायत ने ?" दुनीचन्द ने जूते में पाँव डालते हुए पूछा।

"फैसला तेरे सामने होगा।"

पहलादसिंह और दुनीचन्द अभी मुखिया की बैठक से दूर ही थे कि उन्हें शोर सुनाई देने लगा। दुनीचन्द के दिल की धड़कन तेज हो रही थी। उसने डरते-डरते पूछा, "तूने अपना लठ गाड़ा कि नहीं ?"

"हर आदमी लठ गाड़ के बैठा सै। चल के देख तो सही।" पहलादसिंह ने कहा।

वे जब बैठक में पहुँचे तो बहस चल रही थी। कई लोग एक साथ बोल रहे थे। दुनीचन्द को आगे धकेलता हुआ पहलादसिंह ऊँचे स्वर में बोला, "लै, लाला को ले आया हूँ।"

बैठक में कुछ सेकण्ड के लिए सन्नाटा छा गया। सब आँखें दुनीचन्द की तरफ उठ गयीं जैसे उसे पहली बार देख रहे हों। दुनीचन्द डर-सा गया और दहलीज में ही ठिठक रहा।

"बणिया, इधर आ।" मुखिया ने गुस्से के साथ कहा।

दुनीचन्द का माथा ठनका। उसे लगा जैसे लोगों के चेहरे बदल गये हैं। वह डरा हुआ-सा खाट पर जा बैठा तो मुखिया कड़कती आवाज में बोला, "दुकान में बैठा-बैठा क्यों लुतरी लगावे सै। यहाँ पंचायत में बैठकर मर्दों की तरह बात कर।"

"चौधरीजी, मैं क्यों लुतरी लगाऊँ। मुझे किसी से क्या लेना-देना है ?" भीतर-भीतर कांपते हुए दुनीचन्द ने कहा।

"ना-ना, यह बेचारा लुतरी क्यों लगावे !" ताऊ ने दुनीचन्द का मुँह चिढ़ाते हुए कहा, "यह तो सवेरे से खाली बैठा बोरो तौले सै।"

लोग खिलखिलाकर हँस पड़े। दुनीचन्द खिसियाकर मुँह झुकाते हुए अपना निचला होंठ चबाने लगा।

"दुकान पर बैठा क्या अन्याय तौल रहा था ?" बलीराम ने आँखें तरेरकर उससे पूछा।

"मैंने कोई अल्लाम नहीं फाँका ?" दुनीचन्द ने अटकते-अटकते कहा।

दुनीचन्द को बिल्कुल यूँ महसूस हुआ जैसे उसे मुजरिम बनाकर अदालत के कटघरे में खड़ा कर दिया गया हो और गाँव के सब लोग मुनसिफ़ बनकर बैठे हों।

मुखिया ने पहलादसिंह को सम्बोधित करते हुए पूछा, "पहलाद, दुनिया ने तुमसे क्या कहा था ?"

दुनीचन्द ने फटी-फटी नज़रों पहलादसिंह की ओर देखा। वह अपनी जगह पर बैठा हुआ बोला, "दुनिया बताये है कि तुम लोग सराब पीकर पंजाबी के पास हमारी ज़मीनों का सौदा कर आये हो।"

"पहलाद, क्यों झूठ बोले है ?" दुनीचन्द ने भीतर-भीतर घबड़ाते हुए कहा।

"झूठ तू बोले या पहलाद ?" ताऊ ने फटकारा, "गधी मरै कुम्हार की, धोब्बण सत्ती हो ! ज़मीनें हमारी बिकें ज्वर दुनिया को चढ़े !"

"इसकी असामियें जो मरे हैं। ज़मीनें बिक गयीं तो यह मन नाज दे, दो मन किससे लेगा। खाया खेत गिलहरी ने पड़या नौल के सिर। गाँव को लूटे दुनिया, दोष दे पंजाबी को।" सूबेदार माड़ूसिंह ने कहा।

इस अचानक हमले से दुनीचन्द सिटपिटा गया। उसे कोई जवाब नहीं सूझ रहा था। मुखिया उसे समझाता हुआ बोला, "देख लाला, क्यों व्यर्थ औंधी बात करे है।"

"मैं क्या औंधी बात करूँ। मैं तो गाँव के हित की बात करूँ।" दुनीचन्द की आवाज़ में घपचियाहट भी थी और कुछ उद्दण्डता भी।

"पंचायत में लठ गाड़ने की मत दे...भड़क मारने को कहे। क्या यह गाँव के हित की बात है ?" ताऊ ने गुस्से से पूछा। फिर अपनी लाठी उसकी ओर फेंककर कहा, "ले तू लठ गाड़। मैं देखूँ तुम्हें।"

"क्या तू चाहे कि गाँव में दंगा हो ?" मुखिया ने आँखें तरेरीं, "दुनिया, यह खेल छोड़ दे। नहीं तो बुरा होवेगा। पुस्तों से रखी-रखायी बिगड़ जावेगी।"

"चौधरीजी, आपकी पंजाबियों से नयी-नयी साझेदारी क्या हुई सै, दुनीचन्द बुरा हो गया। उनसे नातेदारी हो गयी तो अग्गास से ताले तोड़ोगे।" दुनीचन्द ने घुटी हुई-सी आवाज़ में कहा, "मैं तो चाहूँ आपकी ज़मीन बिक जाये। पैसा मिल जावे। मैं भी दस-दस, पन्द्रह-पन्द्रह साल से फँसी हुई रकम वसूल करूँ।"

दुनीचन्द इतना कहकर खाट पर से उठ गया। उसे किसी ने नहीं रोका। वह बुदबुदाता हुआ बैठक से चला गया।

"जिन जनों को दुनिया की बात पर विसवास है वे भी जावें।" ताऊ ने ऊँचे गले से कहा।

किसी के जूतों के चरमराने की आवाज़ आयी। दरवाज़े के पास से एक व्यक्ति उठकर बाहर निकल गया।

"कौन गया सै ?" ताऊ ने पूछा।

"माधो।" कई आवाजें एक साथ आयीं।

"क्या वह भी आया था ?" मुखिया ने आश्चर्य से पूछा। फिर हँसा, "पंचायत की सुनकर उसे तो दूसरे गाँव जाना चाहिए था।"

"बनिया, सौर, माधो कभी न गाँव के साथी।" ताऊ खिलखिलाकर हँसा। कई और ठहाके भी उसकी हँसी में घुलमिल गये, जो मुँह लटकाये गली से जाते दुनीचन्द का दूर तक पीछा करते रहे।

मुखिया ने सामने बैठे लोगों पर एक नजर डाली और रिजक के भाव से पूछा, "है कोई और सलाहकार तो उसे भी बुला लो ? अभी फैसला हो जावे।" फिर वह बड़े सहजे से बोला, "मैं नहीं चाहता कि उत्तमनगर आवे तो कोई बोली-ठोली बके, ओछी बात करे, न्यारा चूल्हा धरे।"

सब लोग चुप बैठे थे। रणसिंह ने बुझी हुई आवाज में पूछा, "चौधरीजी, मुआवजे का क्या तय हुआ ?"

"वही जो सरकार देगी। सरकार बीघे का पाँच सौ रुपये दे सै। उधर गड्ढे भरे हैं, उनका साढ़े तीन सौ बीघे का बतावे है।" मुखिया ने कहा।

"कम है।" रणसिंह ने कहा।

"तेरा बंजड़ बाबा के मोल कौन ले ? जिस जमीन में गड्ढे होंगे उसका तो यह मोल भी ज्यादा सै।" मुखिया ने खरे शब्दों में कहा।

रणसिंह चुप हो गया। बैठक में फिर एक बोझिल चुप्पी छा गयी। कुछ लोग अपने-अपने सोच में डूबे थे, कुछ लोग औरों को चुप देखकर चुप थे।

मुखिया ने फिर सब लोगों से पूछा, "क्यों चन्दबाजी करो। जल्दी बोलो क्या निर्णय करना सै। उत्तमनगर आवे ही आवे है।"

कुछ देर मुखिया को कोई उत्तर किसी से नहीं मिला। उसने फिर पूछा तो रणसिंह बोला, "निर्णय तो आप लोग पहले ही कर आये सैं। इब किस बात का निर्णय चाहें ?"

"फेर ओछी बात करे ?" मुखिया उसे समझाता हुआ बोला, "निर्णय तब समझो जब सारा गाँव सहमत हो। तै अपनी मरजी बता।"

"मेरी क्या मरजी ?" रणसिंह ने कहा, "तै गाँव का मुखिया सै। अगर तुम्हें जमीन बेचने में गाँव का फायदा दीखै तो बेच दे। नहीं दीखै तो रहने दे।"

"सच्ची बात कहूँ ?" मुखिया की नजर सर्चलाइट की तरह घूमती हुई सब पर पड़ी, "जमीन बेचने को मन नहीं चाहे है। लेकिन अपील करे भी नहीं। सरकारी हुक्म मिले भी कई दिन हो गये हैं। दो-फसली जमीन सरकार ले रही सै। एक-फसली बंजड़ को क्या चाटें ? उधर की फसल इब गाहट-गूहट खावेंगे। जो बच गयी उसे पड़ावो उठावेंगे।"

मुखिया एक क्षण रुककर बोला, "उत्तमपरकाश अपना अजीज है। हमारा हित ही सोचे सै। दुसमन नहीं जो बुरा चाहेगा। उसकी मरजी है कि ये जमीन अभी बेच दें तो लाभ होगा। बाद में क्या हो, कौन कह सके है। सरकार दिल्ली के चारों ओर जमीन खरीदे सै।"

मुखिया की निगाहें एक-एक को तोलती हुई सब पर पड़ीं। रणसिंह ने सोच में खोये हुए कहा, "चौधरी, कोई धोखाधड़ी न हो, यह विचार ले।"

"धोखाधड़ी कैसी ? जाण मारे बाणिया, पच्छाण मारे चोर। उत्तमपरकाश न बाणिया है न चोर...।" मुखिया ने ठहरे हुए लहजे में कहा।

"सुना है कि मुआवजा कम देगा रजिष्टरी ज्यादा की कराये है।" रणसिंह ने कहा।

"वह यों कि सरकार से ज्यादा मुआवजा मिले। वह अपना नहीं गाँव का भला सोचे है। तुम्हें मनजूर नहीं तो जो दाम ले उसकी रजिष्टरी करा दे!" मुखिया ने एक-एक शब्द पर जोर देते हुए कहा।

रणसिंह कुछ कहने जा रहा था कि कई लड़के एक साथ दौड़ते हुए बैठक में आये और साँस फूल आने के कारण हाँफते हुए एक साथ बोले, "मोटर आयी सै।"

सब लोग एकदम चौकन्ने हो गये। एक क्षण के लिए जैसे सबकी साँस रुक गयी, शरीर में एक तनाव-सा पैदा हुआ और गले में कुछ आकर जहाँ की तहाँ फँसकर अटक गयी।

मुखिया लपककर बैठक के दरवाजे की ओर बढ़ गया। कई लोग उसके पीछे जा खड़े हुए। कुछ गली में निकल गये। कुछ खाटों पर ही बैठे गरदन आगे बढ़ाये हुए दरवाजे की तरफ़ देखने लगे।

दो-तीन मिनट गये होंगे कि उन्हें गली में तीन आदमी आते दिखाई दिये। मुखिया पहचानता हुआ बोला, "उत्तमपरकाश के साथ तिहाड़वाला बड़ा चौधरी धनीराम और तातारपुर का मुखिया रामधन भी हैं।"

"कौन, अपनी तेरहाँ गांव की पंचायत का मुखिया ?" बंसीलाल ने कान खड़े करते हुए पूछा।

"हाँ" कहकर मुखिया तेजी से उनकी ओर बढ़ गया।

चौधरी धनीराम के पास पहुँचकर मुखिया ऊँचे स्वर में बोला, "चौधरीजी पांओं लागूं।"

उत्तर में चौधरी धनीराम मुसकरा दिया और मुखिया का कन्धा थपथपाते हुए बोला, "कहो चौधरी, परसन्न हो, घर में सब सुख से हैं ?"

"हाँ चौधरीजी, परमात्मा की दया है। आप बजुर्गों का परताप है।" फिर उसके दोनों हाथ पकड़ता हुआ बोला, "चौधरीजी, आज तो हमारी धरती पवित्तर

होवे है। आपके चरन पड़े हैं।"

मुखिया ने सातारपुर के मुखिया रामधन का भी अभिवादन किया और तब उत्तमप्रकाश की ओर बढ़ गया।

"मौसाजी, पाँवों लागूं।" उत्तमप्रकाश ने हाथ उसके घुटने की ओर बढ़ाते हुए कहा।

"जीते रहो! भगवान तुम्हारा सितारा और भी ऊँचा करे!" मुखिया ने कहा।

गाँव के अधिकतर लोगों ने उत्तमप्रकाश का अब तक नाम ही सुना था। आज पहली बार उसे देखा था। लम्बा, तगड़ा, सुन्दर, विलायती वेश-भूषा में वह बहुत ही जँच रहा था। सब उसे दिलचस्पी से देखते हुए मन ही मन उसकी प्रशंसा कर रहे थे।

मुखिया सम्मानपूर्वक उन्हें अपनी बैठक में ले आया। पीछे-पीछे और सब लोग भी आ गये। गाँव के जो चौधरी पंचायत में नहीं आये थे वे भी अब तिहाड़-वाले चौधरी और उत्तमप्रकाश के आने की ख़बर पाकर पहुँच गये।

सब लोग जैसे दम साधे बैठे थे। कोई आवाज़ किसी तरह भी नहीं आ रही थी। बस खाट पर बैठे लोगों में से कोई इधर-उधर को होता तो हलकी-सी चूं-चढ़ की आवाज़ आती। बंसीलाल ने चुप्पी को तोड़ते हुए चौधरी धनीराम से कहा, "चौधरीजी, आपने बहुत दिनों के बाद दरशन दिये हैं।"

"तीन साल हो गये। काकू के ब्याह में आये थे।" मुखिया बोला।

"हाँ, तभी आया था। रात भी रहा था।" चौधरी धनीराम ने कहा। फिर दोनों हाथ बाहीं पर टिकाकर पीछे को झुकते हुए मुखिया से पूछा, "चौधरी, कहो कैह हाल-चाल से?"

"चौधरीजी, ठीक है। दिन काट रहे हैं। जब से आजादी आयी है नित नयी खबर सुनें सैं। न्यारी बातें देखें सै। उधर से पजाबियों की बाढ़ आयी सै, इधर सरकार हमारी ज़मीनें छीनें सै।"

चौधरी धनीराम को सुनकर सोच में पड़ा देख लोगों ने सांस रोक ली। सबकी आँखें जैसे उसी के चेहरे पर जा लगीं। वह खखारता हुआ बोला, "चौधरी, इब न तो पजाबियों की बाढ़ रुके सै और न ही ज़मीनें बचे हैं। चारों तरफ यही हवा चले सै। हमने तो अपनी नैया उत्तमपरकाश के हाथ में दे दी सै। जिधर हाँकेगा, चले जायेंगे।"

सबकी निगाह उत्तमप्रकाश की ओर उठ गयी जो गरदन झुकाये बैठा था। उसने चौधरी धनीराम की ओर देखा और उनके घुटनों की ओर सरकता हुआ बोला, "चौधरीजी, ये आप क्या कह रहे हैं?"

"ना भाई उत्तमपरकाश, सच कहूँ। इब पढ़े लिखे लोगों का जमाना है।"

फिर सबकी ओर देखते हुए उसने कहा, "आज तेरे सदके बड़े-बड़े अफसरों से मिला। उनसे इज्जत पायी। वरना हम जैसे अनपढ़ मूढ़ आदमी को सहर में कौन पहचाने है ?"

"उत्तमपरकाश बहुत बरखुरदार सै।" मुखिया ने उसके कन्धे पर हाथ रखते हुए कहा, "इतना पढ़-लिख गया सै...बड़ा ओहदा सै, लेकिन इतनी इज्जत करे सै...।"

उत्तमप्रकाश होठों में मुसकरा दिया। चौधरी धनीराम ने मुखिया की ओर देखते हुए कहा, "चौधरी, हमने अपनी जमीन की रजिष्टरियाँ उत्तमपरकाश को दे दी हैं। जो चाहे करे। यह हमें जहाँ बिठायेगा, आँखें मींचकर बैठ जायेंगे। क्यों उत्तमपरकाश ?"

"चौधरीजी, आप मालिक हैं। मेरी तो यही कोशिश है कि अपने लोगों को ज्यादा से ज्यादा फ़ायदा पहुँचे। हवा का रुख़ देखकर चलना ही अक़्लमन्दी है।" उत्तमप्रकाश ने अपने खिले हुए चेहरे को अधिक से अधिक गम्भीर बनाने की कोशिश करते हुए कहा।

मुखिया कुछ क्षण ख़ामोश रहा। फिर उसने सब पर नज़र डाली और उलाहना देता हुआ ऊँचे स्वर में बोला, "सुनी बड़े चौधरीजी की बात! तेरहा गाँव की पंचायत के मुखिया हैं। सैकड़ों बीघे जमीन के मालिक सैं। अगर उन्हें उत्तमपरकाश पर इतना विस्वास है तो तुम्हें, जो दस-बीस या तीस—बहुत बढ़ के चालीस बीघे—के मालिक हैं, क्यों विस्वास नहीं ?"

मुखिया की आवाज़ में कुछ तीखापन आ गया और वह चौधरी धनीराम की ओर देखकर अपने सामने बैठे पहलादसिंह, रणसिंह वग़ैरह की ओर उँगली उठाता हुआ बोला, "इन जनों को देखो। हम पर तो शक करें सैं, साथ उत्तमपरकाश को भी न बख़्सें। हम सब फरेबी हो गये और ये साधू !"

"चौधरी, इब नयी हवा चली सै। पहले गाँव में एक ही चौधरी होता था। सारा गाँव उसकी बात मानता था। इब हर आदमी चौधरी है। अपनी अकल को घनी आण्डी समझे है।" चौधरी धनीराम ने कहा।

मुखिया ने एक बार फिर सब पर नज़र डाली और कहा, "बड़े चौधरीजी और उत्तमपरकाश बैठे हैं। कोई शक है तो पूछ लो। बाद में अल्लाम मत फांकना।"

जब किसी के मुंह से कोई बोल न फूटा तो बंसीलाल ने पहलादसिंह का नाम पुकारकर पूछा, "पहलाद, पूछ ले इब जो पूछना सै। फिर बाद में लठ मत गाड़ियो।"

पहलादसिंह चुप रहा तो ताऊ कड़वा होता बोला, "रणसिंह, तू बहुत चों-चों करे था। तू बोल।"

"ताऊ, मैं क्या बोलूँ। सच्ची बात यह है कि जमीन बेचते हुए डर लगे सै। एक ही टार सै ये भी चली गयी तो क्या करेंगे। बाकी गाँव के साथ हैं।"

"यह को न खरी बात !" चौधरी धनीराम ने कहा।

मुखिया ने और कई लोगों से बारी-बारी पूछा। लेकिन उसे कोई उत्तर नहीं मिला। वह फिर सबकी ओर देखता हुआ बोला, "तो बोल दूँ उत्तमपरकाश से कि सड़क के पार की जमीन उसको दो ?"

इस बार भी किसी ने कोई उत्तर नहीं दिया। मुखिया ने एक बार फिर कहा, "सोच लो। मन में कोई धक-धुबह हो तो बोल दो।"

पीछे बैठे लोगों में कुछ खुसर-फुसर होने लगी तो मुखिया तीखे स्वर में बोला, "मुखिया, के हू खुसर-फुसर करे सै ? सामने आके खुल के बात कर।"

उधर बैठे लोगों में कुछ हलचल हुई। दो-तीन ने रणसिंह को जबरदस्ती खड़ा कर दिया तो उसने सहमी हुई आवाज में पूछा, "जमीन का पैसा कब मिलेगा और किस हिसाब से मिलेगा ?"

मुखिया ने उत्तमप्रकाश की ओर देखा। उसने मुँह ऊपर उठाया और धीरे-धीरे कहना शुरू किया, "यह जमीन सड़क से बहुत नीची है। गड्ढे भी घने हैं। लेकिन हम इस जमीन का वही मोल दे रहे हैं जो सरकार इधर वाली ऊँची जमीन का देगी। इस जमीन का मोल चार सौ रुपये बीघे से लेकर पाँच सौ रुपये तक होगा। बाकी खेतों में पेड़ हों, कुआँ हो, मकान हो—उसके मालिक आप हैं। उन्हें मौके से काट लें, वहाँ से उठा लें। पैसे रजिस्टरी होते ही आपके हाथ में थमा देंगे।"

उत्तमप्रकाश ने चौधरी धनीराम और चौधरी रामधन की ओर देखा, "इनके गाँव में भी हम जमीन खरीद रहे हैं। इनसे पूछ लो क्या दाम दिया है। आपको पचास रुपये बीघा ज्यादा ही दे रहे हैं।"

"यही दाम दिया है।" चौधरी धनीराम ने कहा फिर सबको सुनाता हुआ बोला, "पहले तो इस बजड़ को भट्ठेवाला ही लेवे था—ठेके पर—वह भी मिट्टी के मोल। धनवाद दो उत्तमपरकाश को जो इस जमीन का भी मोल डाल रहा है।"

उत्तमप्रकाश ने फिर सबकी ओर देखा, "और कुछ पूछना है तो पूछ लो।"

जब किसी ओर से कोई आवाज नहीं आयी तो मुखिया बोला, "फिर कह दूँ उत्तमपरकाश से कि जमीन इब तेरी सै ? हम अपनी फसल दस-पन्द्रह दिन में समेट लेंगे।"

कोई आवाज किसी तरफ से नहीं आयी तो मुखिया ने कहा, "भाई, बोल के हाँ या ना कहो। तुम कोई घूँघट काढ़ के तो बैठे नहीं।"

जब कई जनों के मुँह से मरी-सी हाँ की आवाज आयी तो मुखिया का चेह-

ा। उत्तमप्रकाश ने भी इतमीनान की एक लम्बी सांस ली।

"तो मैंने कह दिया उत्तमपरकाश से कि ज़मीन इसकी।" कहकर मुखिया की ओर झुक गया।

"चोधरीजी, इब के सर्दी में सांग बुला रिहे हो?" वंसीलाल ने चौधरी राम से पूछा।

"हां पण्डतजी, ज़रूर बुलायेंगे। इब की बार तो मथरा से सांग मँगवायेंगे। हज़ार रुपया लग जाये।" चौधरी धनीराम ने भौंहें उचकाते हुए कहा।

जब मुखिया, उत्तमप्रकाश, ताऊ, वंसीलाल, माड़ूसिंह इत्यादि आपस में करने लगे तो लोग आहिस्ता-आहिस्ता उठने लगे।

कुछ देर बाद दुनीचन्द ने जब सबको बाहर निकलकर गली की तरफ़ आते तो नजरें बचाने के लिए दुकान में दरवाज़े के पीछे बैठ गया।

्नीस—

उत्तमप्रकाश और रणजीत के साथ मुखिया, वंसीलाल, ताऊ और सूबेदार ूसिंह कार में बैठकर तहसील पहुंचे और बाक़ी लोगों को कम्पनी की ओर से में लाया गया।

कम्पनी के दो आदमियों ने कार की डिकी से एक ट्रंक निकाला जिसमें ज़मीन रजिस्ट्री से सम्बन्धित तमाम काग़ज़ात थे। उत्तमप्रकाश और रणजीत के ़-पीछे वे ट्रंक तहसीलदार के कमरे में ले गये। गांव के सब लोग आंगन में -दूसरे से जुड़कर यूं खड़े हो गये जैसे बाड़े में बन्द पशु हों।

उत्तमप्रकाश और रणजीत काफ़ी देर तक अन्दर बैठे रहे। इन्तज़ार में -खड़े जब ये लोग थक गये तो उनमें से कुछ तहसील की दीवार के पास पेड़ों के । जा बैठे और कुछ तहसील के खुले बरामदों में फैल गये।

"यहां तो कोई खबर न ले सै।" ताऊ ने खीजते हुए कहा।

"ताऊ, तहसील में आये हो ससुराल में नहीं जो सब जनें तेरी सेवा करें। ा-कचहरी के काम धीमे ही चलें हैं।" वंसीलाल ने समझाया।

लोग थकावट और उकताहट से ऊँघ रहे थे जब कम्पनी का अहलकार उनके आया और मुसकराता हुआ बोला, "चोधरीजी, आओ चाय-पानी पी आयें। तक काग़ज़ात तैयार हो जायेंगे।"

ये सब उसके पीछे-पीछे तहसील के अहाते से निकलकर सड़क पार चाय की बड़ी दुकान पर आ बैठे। कम्पनी के अहलकार ने उनकी गिनती की और दुकानदार को चाय के पैसे देकर बोला, "आप लोग चाय पीकर वहीं आ जायें। अब आप लोगों की आवाज पड़ने ही वाली है। पैसे मत देना, मैंने दे दिये हैं।" उसने ताकीद की।

ये अभी चाय पी रहे थे कि वही अहलकार तेजी से पाँव उठाता हुआ आया और बोला, "जिन्होंने चाय पी ली है वे मेरे साथ आ जायें। आवाज पड़ गयी है।"

सब लोग बड़े-बड़े घूँट भरने लगे तो उसने समझाया, "इतनी जल्दी नहीं है। चाय पी लीजिये।" लेकिन मुखिया चाय बीच में ही छोड़कर उठ गया, "हाकिम का केह पता है! कब मन बदल जाये। जब बुलाये तुरत हाजिर होना चाहिए।" और लोग भी चाय बीच में ही छोड़-छोड़कर मुखिया के पीछे-पीछे तहसील की ओर बढ़ गये।

तहसीलदार का कमरा बहुत लम्बा हुआ था, छत भी ऊँची थी। पिछली दीवार से लगा हुआ एक काफी बड़ा चबूतरा था। उसपर चढ़ने के लिए दोनों ओर छोटी-छोटी सीढ़ियाँ थीं। चबूतरे के आगे लकड़ी का जंगला था। उसके पास ही एक बहुत बड़ी मेज थी और पीछे एक ऊँची कुरसी। इसी कुरसी पर तहसील-दार बैठा था। उसके बायीं तरफ उत्तमप्रकाश और [illegible] बैठे थे और दाहिनी तरफ दो सरकारी अहलकार। पीठ के पीछेवाली दीवार पर मुस्कराते हुए महात्मा गान्धी की एक बड़ी-सी तसवीर लगी थी और बाईंवाली दीवार पर बड़ा क्लॉक लटक रहा था।

तहसीलदार ने इन सब पर एक नजर डाली और अहलकार ने मुखिया को इशारा किया। मुखिया आगे बढ़ा। उसने नीचे तक झुककर अपनी सलाम किया और लकड़ी के जंगले के पास आ खड़ा हुआ। तहसीलदार ने एक उड़ती-सी नजर उसपर डाली। फिर पास बैठे अहलकार से कहा, "[illegible] की रकम के एक फीसदी के हिसाब से इन्हें रेडक्रॉस के टिकट दे दो और पैसे ले लो।"

अहलकार ने मुखिया को पाँच सौ रुपये का टिकट दे दिया और पैसों के लिए उसकी ओर हाथ बढ़ाया।

"हाकिमजी, इस पर्चे का मैं क्या करूँगा ?"

"मोगाजी, यह आपकी तरफ से रेडक्रॉस फण्ड में पाँच सौ रुपये के चन्दे की रसीद है। पैसे मैं दे देता हूँ, बाद में हिसाब कर लेंगे। आप टिकट सँभाल लो।" उत्तमप्रकाश ने समझाया। फिर उस अहलकार की ओर मुड़ता हुआ बोला, "पण्डितजी, आप इनके नाम और रकम लिखते जायें। बाद में हम सबकी ओर से पैसे जमा करा देंगे। लिस्ट की एक फालतू कॉपी बना लें। मुझे इसमें [illegible]

खिला। उत्तमप्रकाश ने भी इतमीनान की एक लम्बी सांस ली।

"तो मैंने कह दिया उत्तमपरकाश से कि जमीन इसकी।" कहकर मुखिया उसकी ओर झुक गया।

"चौधरीजी, इब के सर्दी में सांग बुला रिहे हो ?" वंसीलाल ने चौधरी धनीराम से पूछा।

"हां पण्डतजी, जरूर बुलायेंगे। इब की बार तो मथरा से सांग मंगवायेंगे। चाहे हजार रुपया लग जाये।" चौधरी धनीराम ने भौंहें उचकाते हुए कहा।

जब मुखिया, उत्तमप्रकाश, ताऊ, वंसीलाल, माड़ूसिह इत्यादि आपस में वातें करने लगे तो लोग आहिस्ता-आहिस्ता उठने लगे।

कुछ देर बाद दुनीचन्द ने जब सबको बाहर निकलकर गली की तरफ़ आते देखा तो नजरें बचाने के लिए दुकान में दरवाज़े के पीछे बैठ गया।

उन्नीस—

उत्तमप्रकाश और रणजीत के साथ मुखिया, वंसीलाल, ताऊ और सूबेदार माड़ूसिंह कार में बैठकर तहसील पहुंचे और बाक़ी लोगों को कम्पनी की ओर से बस में लाया गया।

कम्पनी के दो आदमियों ने कार की डिकी से एक ट्रंक निकाला जिसमें ज़मीन की रजिस्ट्री से सम्बन्धित तमाम काग़ज़ात थे। उत्तमप्रकाश और रणजीत के पीछे-पीछे वे ट्रंक तहसीलदार के कमरे में ले गये। गांव के सब लोग आंगन में एक-दूसरे से जुड़कर यूं खड़े हो गये जैसे बाड़े में बन्द पशु हों।

उत्तमप्रकाश और रणजीत काफ़ी देर तक अन्दर बैठे रहे। इन्तज़ार में खड़े-खड़े जब ये लोग थक गये तो उनमें से कुछ तहसील की दीवार के पास पेड़ों के नीचे जा बैठे और कुछ तहसील के खुले बरामदों में फैल गये।

"यहाँ तो कोई खबर न ले सै।" ताऊ ने खीजते हुए कहा।

"ताऊ, तहसील में आये हो ससुराल में नहीं जो सब जनें तेरी सेवा करें। थाने-कचहरी के काम धीमे ही चलें हैं।" वंसीलाल ने समझाया।

लोग थकावट और उकताहट से ऊंघ रहे थे जब कम्पनी का अहलकार उनके पास आया और मुसकराता हुआ बोला, "चौधरीजी, आओ चाय-पानी पी आयें। तब तक काग़ज़ात तैयार हो जायेंगे।"

ये सब उसके पीछे-पीछे तहसील के अहाते से निकलकर सड़क पार चाय की बड़ी दुकान पर आ बैठे। कम्पनी के अहलकार ने उनकी गिनती की और दुकानदार को चाय के पैसे देकर बोला, "आप लोग चाय पीकर यहीं आ जायें। अब आप लोगों की आवाज पड़ने ही वाली है। पैसे मत देना, मैंने दे दिये हैं।" उसने ताकीद की।

वे अभी चाय पी रहे थे कि वही अहलकार तेजी से पाँव उठाता हुआ आया और बोला, "जिन्होंने चाय पी ली है वे मेरे साथ आ जायें। आवाज पड़ गयी है।"

सब लोग बड़े-बड़े घूँट भरने लगे तो उसने समझाया, "इतनी जल्दी नहीं है। चाय पी लीजिये।" लेकिन मुखिया चाय बीच में ही छोड़कर उठ गया, "हाकिम का मेहू पता है! कब मन बदल जाये। जब बुलायें तुरत हाजिर होना चाहिए।" और लोग भी चाय बीच में ही छोड़-छोड़कर मुखिया के पीछे-पीछे तहसील की ओर बढ़ गये।

तहसीलदार का कमरा बहुत खुला हुआ था, छत भी ऊँची थी। पिछली दीवार से लगा हुआ एक काफ़ी बड़ा चबूतरा था। उसपर चढ़ने के लिए दोनों ओर छोटी-छोटी सीढ़ियाँ थीं। चबूतरे के आगे लकड़ी का जंगला था। उसके पास ही एक बहुत बड़ी मेज थी और पीछे एक ऊँची कुरसी। इसी कुरसी पर तहसीलदार बैठा था। उसके बायीं तरफ उत्तमप्रकाश और रणजीत बैठे थे और दाहिनी तरफ़ दो सरकारी अहलकार। पीठ के पीछेवाली दीवार पर मुसकराते हुए महात्मा गान्धी की एक बड़ी-सी तसवीर लगी थी और साइडवाली दीवार पर बड़ा क्लॉक लटक रहा था।

तहसीलदार ने इन सब पर एक नजर डाली और अहलकार ने मुखिया को इशारा किया। मुखिया आगे बढ़ा। उसने नीचे तक झुककर फ़रशी सलाम किया और लकड़ी के जंगले के पास आ खड़ा हुआ। तहसीलदार ने एक उड़ती नजर उसपर डाली। फिर पास बैठे अहलकार से कहा, "रजिस्ट्री की रकम के एक फीसदी के हिसाब से इन्हें रेडक्रॉस के टिकट दे दो और पैसे ले लो।"

अहलकार ने मुखिया को पाँच सौ रुपये का टिकट दे दिया और पैसों के लिए उसकी ओर हाथ बढ़ाया।

"हाकिमजी, इस पर्चे का मैं केह् करूँ ?"

"मौगाजी, यह आपको तरफ से रेडक्रॉस फ़ण्ड में पाँच सौ रुपये के चन्दे की रसीद है। पैसे मैं दे देता हूँ. बाद में हिसाब कर लेंगे। आप टिकट सँभाल लो।" उत्तमप्रकाश ने समझाया। फिर उस अहलकार की ओर मुड़ता हुआ बोला, "पण्डितजी, आप इनके नाम और रकम लिखते जायें। बाद में हम सबकी ओर से पैसे जमा करा देंगे। लिस्ट की एक फ़ालिस कॉपी बना लें। मुझे इतने पैसे पास

लेने में सहूलत रहेगी।" उत्तमप्रकाश मुसकरा दिया।

एक घण्टे के भीतर-भीतर सब रजिस्ट्रियों पर तहसीलदार की मुहर लग गयी और दस्तख़त हो गये। रणजीत ने तमाम कागज़ात समेटकर ट्रंक में रखे और ताला लगा दिया। फिर उस ट्रंक को कम्पनी के दो अहलकार उठाकर बाहर ले गये। तहसीलदार ने उत्तमप्रकाश और रणजीत के साथ उठकर हाथ मिलाया और वे भी तहसील से बाहर आ गये।

सब लोग तहसील के सदर दरवाज़े के पास खड़े थे। उत्तमप्रकाश और रणजीत भी उनके पास आ गये। "आज तो जल्दी ही फ़ारिग़ हो गये।" उत्तमप्रकाश ने घड़ी में वक़्त देखते हुए कहा, "सिर्फ़ तीन घण्टे लगे।"

"उत्तमप्रकाश, यह तेरा रसूख सै। वरना यहाँ तो साल-भर में काम न होवे सै।" मुखिया ने कहा।

"मौसाजी, अब क्या प्रोग्राम है?" उत्तमप्रकाश ने पूछा।

"गाँव ही चल सै। यहां इब केह काम रह गया सै।" मुखिया ने कहा।

जो लोग कार में आये थे वे कार की ओर बढ़ गये और जो बस में आये थे वे बस में जा बैठे। आधे घण्टे में सब कोई गाँव पहुँच गये। बस से उतरने के बाद कुछ लोग एक तरफ़ को खड़े होकर कुछ खुसर-फुसर करने लगे। बाद में उन्होंने मुखिया को भी बुला लिया। उनकी बात सुनकर मुखिया लौटकर उत्तमप्रकाश के पास आया। एक-एक करके फिर और लोग भी वहीं आ जुड़े। मुखिया ने एक नज़र डालकर अन्दाज़ा कि सब जन आ गये या नहीं और फिर उत्तमप्रकाश से बोला, "उत्तमप्रकाश, ये पूछे सैं कि इब सब काम हो गया। रक़म कब मिल सै।"

"मौसाजी, आप लोगों की रक़में हमारे पास अमानत पड़ी हैं। जब चाहो ले लो।" उसने चारों ओर खड़े लोगों को देखा और कहा, "आप लोगों की फ़सल तैयार खड़ी है। इसे समेट लो। खेत ख़ाली हो जायें तो हमारी चीज़ हमें दे दो और अपनी हमसे ले लो।"

"क्यों भई, ठीक सै?" मुखिया ने ठोक बजाते हुए सबकी ओर देखा।

"ठीक ही सै।" ताऊ बोला।

"आज ही आप लोगों की तरफ़ से पचास से लेकर पाँच सौ रुपये तक जमा कराये हैं। रजिस्ट्रियों का ख़र्च अलग दिया है।" उत्तमप्रकाश बोला।

"उत्तमप्रकाश, ए केह फण्ड सै।" ताऊ ने कुतूहल से पूछा। फिर क़मीज़ की भीतरवाली जेब से परची निकालकर बोला, "इस परची का मां केह कर सै।"

"ताऊजी, आपने सरकारी खाते में दान दिया है।" उत्तमप्रकाश ने मुसकराते हुए कहा।

"गजब सै! सरकार भी दान ले सै!"

उत्तमप्रकाश मुसकराया। बंसीलाल ने ज़रा आगे आकर उससे पूछा, "पैसा

लेने फिर कब आयें ?"

"फ़सल कितने दिन में समेट लेंगे आप लोग ?"

"यही दस-पन्द्रह दिन में।" उसने हिसाब लगाकर बताया।

"बस, इक्कीसवें दिन आ जाओ, आज चौदह तारीख़ है। इकतीस दिन का महीना है। अगले महीने की चार तारीख़ को आ जाओ।" उत्तमप्रकाश ने कहा।

उत्तमप्रकाश ने बग वापस भिजवा दी और सबसे राम-रमैया करके कार की ओर बढ़ गया। रणजीत ने पीछे मुड़कर मुखिया को आवाज़ दी। मुखिया आ गया तो रणजीत ने चलते-चलते हुए कहा, "उस दिन आप कह रहे थे कोई सलाह लेनी है।"

मुखिया एक क्षण को सोच में पड़ा। फिर याद आने पर बोला, "हाँ, एक दिन पटवारी आया था। कह रहा था कि चार बीघे ज़मीन बच सके है।"

"वह कैसे ?" रणजीत ने पूछा।

"वह देखो," मुखिया ने खजूर के एक पेड़ की ओर इशारा किया, "उस खेत में हमारे किसी बजुर्ग की समाधि थी। पटवारी कह थे कि वह खेत सरकार नहीं ले सकती।"

"हूँ।" रणजीत बुदबुदाया, "आइए, खेत देख लें।"

मुखिया उन्हें खेत में ले गया और एक जगह रुककर बोला, "शायद यहाँ समाधि थी।...कई साल पहले ज़ोर की बाढ़ आयी थी। उसमें समाधि बह गयी। हमने ऊपर से हल चला दिया।"

"क्या मामला है ?" उत्तमप्रकाश ने रणजीत से अंगरेज़ी में पूछा। उसने अंगरेज़ी में ही दो शब्दों में बता दिया और मुखिया की ओर मुड़ता हुआ बोला, "पटवारी ने क्या कहा था ?"

"पटवारी कह थे कि सरकार धरम अस्थान की जगह नहीं ले सके। इस बात को क़ानून भी माने है। यह भी कह थे कि अगर समाधि दोबारा बन जाये तो ये खेत बचाया जा सके है। पर ज़ोर ज़्यादा लग है। सरकार से शायद मुक़दमेबाज़ी भी हो है। लेकिन मन्दिर बन जाये तो सरकार इस जगह की तरफ़ आँख उठाकर भी न देख है।"

धीरे-धीरे दोनों सड़क पर आ गये। रणजीत ने एक बार फिर उस पूरी जगह का जायज़ा लिया और मुखिया से पूछा, "चौधरी, कितनी जगह है ?"

"चार बीघे से ऊपर है।"

रणजीत मन ही मन कुछ सोचता और हिसाब-सा लगाता हुआ उत्तमप्रकाश के साथ-साथ कार की ओर बढ़ता गया। वहाँ पहुँचकर बोनट के सहारे खड़ा होता हुआ उत्तमप्रकाश से अंगरेज़ी में बोला, "मेरे ख़याल में यह बहुत अच्छी सिनेमा साइट है।"

"धर्मस्थान के नाम पर इसे ऐक्वायर होने से बचाकर वहां सिनेमा कैसे बना सकोगे ?" उत्तमप्रकाश ने अँगरेजी में ही पूछा।

मुखिया कुछ दूर खड़ा उन्हें बात करता देखता रहा। दो मिनट बाद वे दोनों मुखिया के पास आ गये। उत्तमप्रकाश ने उससे पूछा, "क्या पटवारी की खतौनी में समाधि का रिकॉर्ड है ?"

"है। उसने मुझे आप बताया था कि अगर खेत में समाधि नहीं खड़ी है तो क्या हुआ। उसके कागजों में तो खड़ी है।" मुखिया ने बताया।

'मौसाजी, एक बात बताइए। आप आख़िर ज़मीन का यह टुकड़ा ऐक्वायर होने से क्यों बचाना चाहते हैं ?" रणजीत ने पूछा।

"काका," मुखिया ने रुक-रुककर कहना शुरू किया, "तू भी जाने है कि खानदान का नाम जायदाद से चले सै। हमारी जायदाद ज़मीन है। ज़मीन बिक गयी तो खानदान का नाम कैसे चलेगा ? सोच रहा हूं कि अगर यह ठुकड़ा ही किसी ढंग से बच जाये तो वखत पाकर समाधि के साथ धरमशाला बना दूंगा। अपने बजुर्ग के नाम पर मन्दिर बना दूंगा। उसके नाम के साथ खानदान का नाम भी चलता रहेगा।"

रणजीत और उत्तमप्रकाश एक बार फिर ज़रा उधर को चले गये। उत्तम-प्रकाश ने रणजीत से धीमे से कहा, "मौसाजी के विचार तो ठीक हैं। सिनेमा साइट भी यह बहुत अच्छी हो सकती है। लेकिन इस बात की क्या गारण्टी है कि गौमिण्ट इस जगह को ऐक्वायर नहीं करेगी। दूसरे, मान लो यह जगह ऐक्वायर होने से बच भी जाती है तो इस बात की क्या गारण्टी हमें यहाँ सिनेमा हाउस बनाने दिया जायेगा।" उत्तमप्रकाश ने शंका जाहिर की।

दोनों सोच में पड़े हुए कार की ओर आ गये। फिर वहाँ सड़क के दूसरे किनारे पर चले गये। रणजीत ने उत्तमप्रकाश की ओर भरपूर नज़रों से देखते हुए कहा, "मैं यह ज़मीन ज़रूर हासिल करूंगा। मेरा दिल उस टुकड़े पर जम गया है। पाँच-छह साल बाद यह टुकड़ा सोने की खान बन जायेगा।"

"सो तो ठीक है, मगर जो मूल बात है उसे कैसे हल किया जाये ?" उत्तमप्रकाश ने कहा।

रणजीत खड़ा-खड़ा पास के पेड़ की टहनी मरोड़ रहा था। एकाएक उसके होंठों पर एक मुसकान खेल आयी, "मैंने हल तलाश लिया। हम इस धर्मस्थान के लिए एक ट्रस्ट बनाते हैं। मौसाजी, तुम, मैं, माताजी, मेरी वाइफ़, तुम्हारी वाइफ़, मौसाजी की वाइफ़—ये सात ट्रस्टी ! समझे..."

सुनकर उत्तमप्रकाश भी खिल उठा, "बहुत अच्छा आइडिया है : ब्रिलि-एण्ट !"

"इस धर्मस्थान को चलाने के लिए ट्रस्ट यहां कुछ प्रॉपर्टी भी बना सकती

है।" रणजीत ने समझाया।

"यह सब बाद की बातें हैं। पहले ट्रस्ट बनाना चाहिये।" उत्तमप्रकाश बोला।

दोनों मुखिया के पास आ गये। रणजीत ने बड़ी नम्रता से कहा, "मौसाजी, माफ़ करना। आपने समस्या ही ऐसी बता दी कि हम आपको और अपने को भी भूल गये।"

"कुछ सोचा फिर?" मुखिया ने बेचैनी से पूछा।

"मौसाजी, जगह तो बचा लेंगे। लेकिन जोर बहुत लगाना पड़ेगा—एक ट्रस्ट बनाना पड़ सकता है।" उत्तमप्रकाश ने बताया।

मुखिया की समझ में बात नहीं आयी। वह हैरान-सा उनकी तरफ़ देखने लगा। रणजीत ने मुखिया को ट्रस्ट की सारी बात समझायी तो वह ख़ुश होकर बोला, "आप लोग साथ हों तो काम किस्त न बन जे। जो मरजी करो, जमीन का यह टुकड़ा बचा लो।"

रणजीत ने खेत पर नजर डाली और मुखिया की ओर मुड़कर कहा, "मौसा-जी, एक काम करना।"

"क्या?"

"फ़सल बिलकुल तैयार है। हो सके तो आज ही, वरना कल को इसकी कटाई शुरू करा दो। दो दिन लगेंगे।" रणजीत ने कहा।

"हाँ, दो नहीं तो तीन दिन लग से।"

"चलो तीन दिन सही। चौथे दिन समाधि बनाना शुरू कर दें। बाद में खेत के चारों तरफ़ पक्की दीवार खड़ी कर देंगे।" रणजीत ने सुझाव दिया।

मुखिया चुप रहा तो उत्तमप्रकाश ने पूछा, "मौसाजी, आप किस सोच में पड़ गये?"

"उत्तमपरकाश, मेरे पास इतनी रकम नहीं से।" मुखिया ने निराश होते कहा।

"उत्तमप्रकाश हँसा, "बस, इस छोटी-सी बात पर उदास हो गये। जब धर्म-स्थान को ट्रस्ट चलायेगा तो पैसा भी वही लगायेगा। हम सब ट्रस्ट के मेम्बर हैं। पैसे की फ़िक्र न करो।"

मुखिया ख़ुश हो गया, "उत्तमपरकाश यह तेरी बरखुरदारी है।"

"मौसाजी, आप फ़सल की कटाई शुरू करायें। कल ईंटें पहुँच जायेंगी। परसों समाधि बना देंगे।"

उत्तमप्रकाश और रणजीत चले गये तो मुखिया देर तक खेत में इधर-उधर देखता और समझता रहा कि समाधि ठीक-ठीक किस जगह पर थी। लौट कर आया वह तो कुछ मिनट बैठक में बैठा रहा, फिर घर में जाकर खाट पर

जा बैठा। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि मुखियानी से कैसे बात शुरू करे क्योंकि एक बार पहले बात उठायी थी तो वह बिगड़ ही उठी थी।

"दलील कहाँ सै ?" मुखिया ने पूछा।

"माँ केह जानूं।" मुखियानी ने चूल्हे को सुलगाते हुए जवाब दिया।

मुखिया चुप हो गया। फिर उसने एक अजीब-सी आवाज मुंह से निकालते हुए भगवान् को याद किया। मुखियानी चौंकी। दो क्षण मुखिया की ओर देखती रही, फिर खाट के पास आकर उससे पूछा, "चित्त ठीक सै ?"

"चित्त तो ठीक है लेकिन मन बहुत उदास सै," मुखिया ने बुझी हुई आवाज में उत्तर दिया। फिर मुखियानी को अपने पास बैठने का इशारा करते हुए बोला, "रात सपने में हमारे बजुर्ग सिद्ध बाबा ने दर्शन दिये थे।"

"अच्छा ?" मुखियानी चौंककर उछल पड़ी।

मुखिया कुछ क्षण शून्य में टकटकी बांधे देखता रहा। उसके बाद धीरे-धीरे कहने लगा, "बाबाजी नाराज हैं। कह रहे थे कि पहले तो मेरी समाधि को तोड़ा। इब उस जमीन के टुकड़े को भी बेच दिया सै। इस पाप का फल कैसे भुगतोगे !"

मुखिया की बात सुनकर मुखियानी बहुत डर गयी। मुखिया उसी लहजे में बोला, "आज उत्तमपरकाश से बात की तो उसने राय दी कि बाबाजी को ख़ुश करना चाहिए। समाधि फिर से बनवाकर बाबाजी के नाम पर एक धरम-अस्थान भी वहाँ बना देना चाहिए।"

"नूं कहूँ जरूर बना दो। बाबाजी ने सराप दे दिया तो कुल नष्ट हो जावेगा।" मुखियानी का गला रुंध आया।

"इब सोचा है कि इस काम को कर ही दूं। बाबाजी के नाम के साथ खान-दान का नाम भी चलता रहेगा।" मुखिया ने कहा।

भगवती पण्डितायन ने आंगन में पांव रखा तो दोनों चुप हो गये। वह भी एक पल के लिए ठिठकी, फिर मुखियानी की ओर बढ़ती हुई बोली, "केह सोच रही सै चौधरानी ?"

मुखियानी ने सारी बात उसे बतायी तो वह हाथ मटकाते हुए बोली, "भगवान् इसी परकार अपने भक्तों की परीच्छा लेवें सैं। धरम अस्थान जरूर बनाओ।" सुमिरनी का मुंह फेरती हुई वह आगे बोली, "पुजारीजी भी कहते हैं कि जिस गांव में कोई धरम-अस्थान नहीं वहाँ कुकर्म होते हैं, पाप बढ़े सै और बहुत हान होवे है। इब तो बजुर्ग को परसन्न करने का जतन जरूर करो।"

"हाँ पण्डितायनजी, इब कहें सैं बाबाजी की समाधि बनाऊंगा। धरम अस्थान भी बनाऊँगा।" मुखियानी ने अपने पति की ओर देखते हुए गर्व से कहा।

"इससे अधिक शुभ काम क्या होगा ?" ज़रा ठहरकर बोली, "आप कन्दरों वाली गुई के मन्दिर के पुजारी से भी सलाह लें। बहुत विद्वान हैं। इतना पूजा-पाठ करते हैं कि बड़े-बड़े महात्मा भी क्या करते होंगे !"

"पुजारीजी से भी बात कर लेते हैं," कहकर मुखिया उठ गया।

भगवती ने शाम तक यह ख़बर सारे गाँव में फैला दी। मुखिया बैठक का दरवाज़ा खोलकर लालटेन जला रहा था कि बंसीलाल आ गया। उसने अचम्भे के साथ कहा, "चौधरी, धरमादे का काम चुपचाप ही कर दिया !"

"बंसी, सोच तो दिनों से रहा था। मन पर ही ऐसा परदा पड़ा रहा कि अपने बुज़ुर्ग की समाधि की ओर भी ध्यान नहीं दिया। शायद यह उसी का शाप है कि हमारी ज़मीन बिक गयी है।" मुखिया का गला भारी हो आया, "सोचा इस पाप को धो डालूँ। समाधि बना दूँ। वक़्त अच्छा हुआ तो धरम अस्थान भी बना दूँगा !"

"अगर समाधि बनाकर पाप से मुक्ति मिल जाये तो सस्ता सौदा है।" बंसीलाल ने कहा।

थोड़ी देर में ताऊ, सूबेदार साधूसिंह और गाँव के कई और लोग भी बैठक में पहुँच गये। किसी ने भी समाधि बनवाने की बात का विरोध नहीं किया। उन्हें अचरज था तो सिर्फ़ इस बात पर कि मुखिया को समाधि बनाने की इस वक़्त कैसे सूझी जब कि ज़मीनें सरकार ले रही है।

दुनीचन्द दो दिन से बाहर गया हुआ था। गाँव में पहुँचते ही उसने ख़बर सुनी तो सीधा मुखिया की बैठक में आया। राम-राम बुलाने के बाद धम से खाट पर बैठा तो मुखिया ने बताया, "दुनीचन्द, सोचा है खजूरवाले खेत में सिद्धबाबा का अस्थान बना दूँ।"

"जागे भाग हमारे ! इस गाँववालों को भी मत आयी कि यहाँ भगवान् का अस्थान होना चाहिए।" दुनीचन्द ने फिर व्यंग्य से कहा, "भगवान का शुक्र तुमने पंजाबियों से कोई अच्छी बात भी सीखी।"

वीस—

मुखिया के खजूरवाले खेत से सड़क की तरफ़ कोने से फ़सल काटी जा रही थी जब वहाँ एक रेढ़ा आकर रुका। उस पर नल खोदने का सामान लदा था

और चार आदमी बैठे थे। रेढ़े को देखकर मुखिया उधर चला गया। पास पहुँचा तो वे चारों आदमी नीचे उतर आये। एक बोला, "चौधरीजी राम-राम, मेरा नाम राजपाल है। मुझे उत्तमपरकाश साव ने यहाँ नल लगाने के लिए भेजा है।"

"अच्छा ! ले आओ रेढ़ा, इधर से निकालना।" मुखिया ने उधर की तरफ़ इशारा किया जहाँ से फ़सल कट चुकी थी।

खेत में रेढ़ा आ गया तो मुखिया ने वहाँ एक जगह पर रुककर कहा, "यहाँ बरमा गाड़ दो।"

"साव ने तो कहा था कि खेत के कोने में गाड़ना।" राजपाल ने बताया।

"तो जहाँ उत्तमपरकाश ने कहा है वहाँ गाड़ दो।"

राजपाल और उसके साथियों ने रेढ़े से सामान उतार लिया। एक आदमी सुम्बल से खुदाई करने लगा। राजपाल ने मुखिया से कहा, "चौधरीजी, पानी की एक बाल्टी मँगवा दो।"

मुखिया ने फ़सल काटने में लगे एक युवक को बालटी लाने के लिए गाँव भेज दिया और उन लोगों के पास आकर नल लगाने की क्रिया देखने लगा। तीनों जने बहुत जोश से काम कर रहे थे। जब उनके हाथ ढीले पड़ते तो राजपाल उन्हें ललकार कर कहता, "शाम तक नल फ़िट होना चाहिए वरना मैं साव को मुँह दिखाने के क़ाबिल नहीं रहूँगा।" और उनका हौसला बढ़ाने के लिए राजपाल स्वयं भी उनके साथ जुट जाता।

दिन ढले ईंटों से लदे ट्रक आये। मुखिया उन्हें भी खेत में लिवा आया और एक जगह की ओर इशारा करता हुआ बोला, "ईंटें यहाँ लगा दो।"

"साव ने तो कहा था एक कोने में लगाना।" ठेकेदार बिशनसिंह ने बताया।

"वहीं लगा दो जहाँ साव ने कहा है।" मुखिया कुछ खिन्न-सा होकर वहीं आ गया जहाँ नल लगाया जा रहा था।

पाइप तीस फ़ुट तक ज़मीन के अन्दर चला गया था और पतली-पतली रेत निकलने लगी थी। लोग अपना-अपना काम निपटाकर वहाँ जमा हो रहे थे और मुखिया को अपनी-अपनी समझ के अनुसार सुझाव दे रहे थे। कुछ लोग मुखिया के उद्यम की प्रशंसा कर रहे थे। अपनी तारीफ़ सुनकर वह फूला नहीं समा रहा था। उस समय तो उसकी गरदन गर्व से ऊँची हो गयी जब उसने किसी को यह कहते सुना कि अभी तो समाधि ही बन रही है, बाद में मन्दिर और धर्मशाला भी बनेगी और बिजली से चलनेवाला बरमा लगेगा। गद्गद होते हुए उसने उस दिन की कल्पना की जब यहाँ उसके पूर्वज की समाधि के पास मन्दिर और धर्मशाला होगी और लोग कहेंगे कि इन्हें बसई दारापुर के मुखिया चौधरी परताप-

सिंह ने बनवाया है।

शाम तक वहाँ अच्छी-खासी भीड़ इकट्ठी हो गयी थी। खेतों में मोड़ती हुई स्त्रियाँ आधे-आधे घूँघट निकाले दूर से ही देख रही थीं।

"बाबा, अगर यह उद्यम पहले कर लेता तो शायद सरकार का ध्यान हमारी जमीनों की तरफ आता ही नहीं।" पहलादसिंह ने कहा।

"भले कामों में देर होवे ही है।" बंसीलाल ने दार्शनिक भाव से कहा।

"मुझे तो इब भी अक्किल न आती अगर बाबाजी ने सुपने में दरसन न दिये होते।" लोगों में घिरे मुखिया ने कहना शुरू किया, "परसों की बात है, मैं गहरी नींद सोया हुआ था कि मुझे यों लगा जैसे मेरा नाम लेकर कोई मुझे बुला रहा है।...मेरे सामने बाबाजी खड़े थे और कह रहे थे, अरे जमीन के साथ मेरी हड्डियों को भी बेच दिया।" मुखिया की आँखें गीली हो आयीं, "भला हो उत्तमपरकाश और रणजीत का। मुझे यह उद्यम भी उन्होंने ही दिया है।"

मुखिया सब सुना ही रहा था कि सामने आकर एक ट्रक रुका। दो-तीन आदमी उसपर से उतरे और एक ने ऊँची आवाज में पूछा, "यह खेत चौधरी परतापसिंह का है क्या?"

"हाँ, मेरा से।" मुखिया ने आगे बढ़ते हुए रौब से कहा।

उस आदमी ने ट्रक को खेत में ले आने के लिए ड्राइवर को आवाज दी और वह आप मुखिया को राम-राम सुनाकर बोला, "चौधरी सैब, मैं सरलोया टैण्ट हौस से आया हूँ। हमें चौधरी उत्तमपरकाश साब ने आडर दिया है कि यहाँ कल को कोई परोगराम है। हम कनातें और शामियाने लगाने आये हैं।"

यह सुनते ही मुखिया की गरदन ऊँची हो गयी और वह गर्व से बोला, "आ जाओ, यही खेत है।" फिर वह ताऊ की ओर मुड़ता हुआ बोला, "चौधरी, देख ले उत्तमपरकाश का उद्यम...तू कहूँ यह तो यहाँ दिल्ली दरबार की रौनक पैदा कर देगा।"

ट्रक उनके नजदीक आकर रुका। उसमें से छह आदमी उतरे। उन्होंने जल्दी-जल्दी उसमें से सामान उतारा। चार आदमी जमीन की पैमाइश करके कोनों को रस्सियों से बाँधने लगे और दो खूँटे गाड़ने में लग गये।

मुखिया ने उन्हें खास जगह पर भी बाँस गाड़ते देखा तो मना करता हुआ बोला, "यहाँ बाँस क्यों गाड़ते हो? यहाँ तो बाबाजी की समाधि बनेगी।"

"चौधरीजी हम तो शामियाना वहीं लगायेंगे जहाँ साब ने आर्डर दिया है।" ठेकेदार ने जेब से एक कागज निकालकर मुखिया को दिखाते हुए कहा, "यह नक्शा दिया है साब ने हमें।"

मुखिया चुप रह गया और खड़ा-खड़ा शामियाने लगाए जाते देखता रहा। अँधेरा छाने लगा तो ठेकेदार ने चार पैट्रोमैक्स जला दिये। खेत तम्बू

रोशनी में जगमगा उठा। गाँव के लोग वहाँ फिर जमा हो गये और सारे में ख़ूब रौनक़ हो गयी। मुखिया चारों तरफ़ यों घूम रहा था जैसे दूल्हे का छोटा भाई हो।

जब क़नातें और शामियाने सब ठीक से लग गये और नल से भी साफ़ पानी आने लगा तो लोग देख-देखकर अचरज करते हुए अपने-अपने घर को लौट गये। जब शामियाने के नीचे दरियाँ भी बिछ गयीं तो मुखिया भी अपने पूर्वज सिद्ध-बाबा को याद करता हुआ घर चला गया।

इक्कीस—

मुखिया, उसकी पत्नी और बच्चे उजले कपड़े पहन-पहनकर सवेरे ही खेत में पहुँच गये। धीरे-धीरे गाँव के सभी लोग वहाँ इकट्ठे होने लगे। भगवती पण्डि-तायन भी अन्य स्त्रियों के साथ ढोलक-चिमटा आदि लेकर वहाँ पहुँच गयी।

मुखिया ने उस स्थान को एक बार फिर अच्छी तरह से साफ़ करवा दिया जहाँ समाधि बनायी जानी थी। पानी का नल, ऊपर तने हुए लाल-लाल शामियाने और दोनों तरफ़ क़नातें लगी देखकर लोगों को एक अजीब-सा कौतूहल हो रहा था। बच्चे ही नहीं, बड़े लोग तक चहकते हुए इस तरह घूम रहे थे जैसे मेले में आये हों। बन्दरवाली खुई के मन्दिर का पुजारी आया तो लोग उधर को बढ़ गये। सबने उसके चरण छूकर प्रणाम किया। पुजारी ने चारों ओर नज़र दौड़ायी। पानी का नया नल और शामियाने-क़नात देखकर वह भी प्रसन्न हुआ। मुखिया से बोला, "चौधरीजी, आज आप यह बहुत बड़ा पुण्य कमा रहे हैं।"

मुखिया ने उत्तर में हाथ जोड़ दिये। पुजारी ने फिर बड़े गम्भीर भाव से कहा, "सद्बुद्धि से तो प्राणी अपने आप सुकर्मों की ओर बढ़ चलता है।"

मुखिया ने फिर हाथ जोड़ दिये तो पुजारी ने पूछा, "कार्यक्रम क्या है?"

"महाराज कारयकरम ये है—पहले हवन-कीरतन, फिर समाधि की नींव और फिर रोटी।"

"अच्छा, भोजन का भी आयोजन है!" पुजारी ने सन्तोष प्रकट किया तो मुखिया ने बताया कि दाल-भात और आलू की सब्ज़ी का प्रबन्ध है।

पुजारी मुसकराया, "और मिष्ठान्न?"

मुखिया एक झटका-सा खाकर जैसे बग़लें झांकने लगा। उसी दम पुजारी के

पीछे से निकलकर रामदयाल सामने आया और मुखिया और वहाँ खड़े और लोगों को सुनाता हुआ बोला, "हलवा-पूरी में बनाती !"

"हाँ, यह विचार सुन्दर है।" पुजारी ने सराहना में सिर हिलाते हुए कहा।

"चौधरीजी सामान दिला दो। दो घण्टे में सब कुछ तैयार हो जायेगा।" रामदयाल ने भरोसा दिया।

रामदयाल सामान लाने के लिए दलीलसिंह के साथ गाँव चला गया। और लोग जो वहाँ इकट्ठा थे वे पुजारी को घेरे खड़े उसकी बातें सुन रहे थे कि दो कारें खेत के एक तरफ़ से आयीं और धीरे-धीरे शामियाने की ओर बढ़ने लगीं।

"उत्तमप्रकाश आ गया !" मुखिया ने उत्तेजित स्वर में कहा और लपककर उधर को बढ़ गया। उसके पीछे-पीछे गाँव के और चौधरी लोग भी चले गये।

अगली कार से उत्तमप्रकाश, उसकी पत्नी शान्ता और माता रुकमणी उतरे। दूसरी से रणजीत, उसकी पत्नी भारती और एक बुजुर्ग-से तिलकधारी पण्डित बाहर निकले। शान्ता और भारती के बाल कटे हुए थे और सिर भी खुले हुए थे। दोनों भड़कीली रेशमी साड़ियाँ और ऊँची एड़ी के सैण्डल पहने हुए थीं। हाथों में बड़ी-बड़ी लेडीज़ पर्स थीं। होंठों पर गाढ़ी लिपस्टिक और गालों पर रूज की हलकी सुर्ख़ी थी। रुकमणी ने बालों का जूड़ा बनाया हुआ था और गुलाबी बॉर्डरवाली सफ़ेद रेशमी साड़ी पहन रखी थी।

उत्तमप्रकाश और रणजीत मुसकराते हुए मुखिया की ओर को बढ़ आये। दोनों ने उसके घुटनों की ओर झुकते हुए प्रणाम किया। फिर वे अन्य लोगों से मिले। उत्तमप्रकाश ने साथ आयी स्त्रियों को अपने पीछे खड़ा देख मुखिया से कहा, "मौसाजी, आप सभी को तो जानते ही हैं।"

रुकमणी ने मुखिया की ओर हाथ जोड़े। फिर उत्तमप्रकाश ने शान्ता और भारती की ओर इशारा करते हुए कहा, "आपकी बहुएँ : शान्ता मेरी पत्नी, भारती रणजीत की पत्नी—मेरी भाभी।"

रुकमणी का इशारा पाकर दोनों बहुओं ने जल्दी-जल्दी साड़ी के पल्लू सिर पर लिये और थोड़ा-थोड़ा सिर झुकाकर हाथ जोड़े।

गाँव के लोग उन्हें बड़ी हैरानी और दिलचस्पी के साथ देख रहे थे। बच्चों और स्त्रियों के लिए तो वे बिलकुल ही कुतूहल का विषय बन गयी थीं। कई चौधरियों ने तो उनके नीचे कट के ब्लाउज़ और कमर के खुले भाग पर अजीब तरह से होंठ बिचका-बिचकाकर आपस में गुसर-पुसर तक की।

"औरतों को उधर भेज दो।" ताऊ ने कहा। फिर बगीराम के कान में बुदबुदाया, "शहर की औरतें कैसी बेशरम होरे हैं। मर्दों के बीच में मूँ मूँड़ उठाये खड़ी हैं जैसे भैंसों के बाड़े में बड़ी भैंड़ ! और होंठ तो देख, ऐसे लाल-लाल हो रिहे

हैं जैसे हड़वारे से मुरदार नोचकर निकले हुए कुत्तों की थोथनी होवे हैं।"

तीनों स्त्रियां पण्डाल में पहुँच गयीं, जहाँ कीर्तन की तैयारी हो रही थी, तो मुखिया भी यह कहता हुआ हड़वड़ाया-सा उधर को बढ़ा कि सबको बता दूं ये कौन हैं।

उसे अपनी ओर आता देखकर मुखियानी समेत बहुत-सी औरतों ने घूंघट खींच लिये। मुखिया अपनी पत्नी को सम्बोधित करते हुए बोला, "उत्तमपरकाश की माँ और बहू सान्ता और रणजीत की बहू हैं। तू अपने पास विठा ले।"

मुखिया लौटकर फिर सब लोगों में आ मिला। उत्तमप्रकाश ने उसकी ओर देखते हुए कहा, "मौसाजी, काम शुरू होना चाहिए।"

"मैं तो कब से तैयार हूँ बेटा। पण्डितजी भी आ गये हैं।" मुखिया ने एक ओर को खड़े पुजारी की ओर देखते हुए कहा।

"हम भी पण्डितजी साथ लाये हैं। सोचा शायद गांव में न हो।" रणजीत ने कहा।

"ना रणजीत, हमारे पण्डितजी हैं। बाबाजी के जोहड़ के पास मन्दिर है ना, वहीं के पुजारी हैं। महाराज, इधर आओ ना।" मुखिया ने इधर-उधर देखते हुए पुजारी को आवाज़ दी।

"दो पण्डित होंगे तो यज्ञ बढ़िया होगा।" उत्तमप्रकाश ने मुसकराते हुए कहा और दोनों ड्राइवरों को डिक्की से सब टोकरियां निकाल लाने के लिए कहा।

पांच टोकरियां उन्होंने लाकर वहां रख दीं। एक टोकरी में फूलों के हार थे। तीन में प्रसाद के लिए लड्डू थे। पाँचवीं में हवन की सामग्री थी।

"चलो मौसाजी समाधि जहां बनानी है।" उत्तमप्रकाश बोला।

मुखिया उसे शामियाने के बिलकुल ही पास एक साफ़ स्थान पर ले गया और बोला, "मेरी समझ में तो समाधि यहाँ थी।"

उत्तमप्रकाश ने रणजीत की तरफ़ देखा और आंखों-आंखों में ही कुछ बात हुई। उसका इशारा पाकर उत्तमप्रकाश ने बड़े ग़ौर से उस स्थान का भी निरीक्षण किया और थोड़ा-थोड़ा हटकर भी। फिर जैसे बड़ी गम्भीरता के साथ सोचता हुआ बोला, "समाधि आगे होनी चाहिए। यहाँ उसका कोई निशान नहीं है।"

"मैंने बताया ना, कई साल पहले बहुत जोर की बाढ़ आयी थी : समाधि उसमें बह गयी थी।" मुखिया ने कहा।

"तो फिर कहीं भी बना लें।" उत्तमप्रकाश ने सुझाव दिया। और आगे जाकर एक स्थान पर वह रुक गया। बड़े दृढ़ स्वर में वह बोला, "मैं तो कहूँगा, समाधि अब यहाँ बननी चाहिए। क्यों रणजीत?" उत्तमप्रकाश ने समर्थन के लिए उसकी ओर देखा।

रणजीत ने जेब से एक कागज़ निकाला और बड़े गौर से उसे देखकर सिर घुमाने लगा। फिर सोचता हुआ बोला, "मेरा ख़्याल है कि समाधि कुछ और आगे होनी चाहिए..." उसने दो-तीन डगें भरते हुए जगह की पैमाइश की और एक जगह रुककर बोला, "यहाँ, यह होगी जगह।"

मुखिया कुछ कहे-कहे कि उससे पहले ही रणजीत ने ठेकेदार को पुकारा और उस जगह को फ़ौरन साफ़ करने के लिए कहा। मुखिया बुत-सा खड़ा का खड़ा रह गया। उसका उदास मुंह देखकर रणजीत लपककर पास पहुंचा और नक़्शा दिखाता हुआ बोला, "मौसाजी, धर्मस्थान बनाने के लिए भी जगह ख़ाली रखनी है। यह देखिए, यहाँ से यहाँ तक हॉल बनेगा, इसके पीछे दूसरी इमारतें होंगी।" रणजीत ने कागज़ पर बने एक बड़े और दो छोटे आयताकार निशान दिखाये।

उन निशानों का अर्थ लगाना मुखिया के बूते से बाहर की बात थी। लेकिन देखकर उसे भरोसा-सा हो गया और वह हलके से सिर हिलाकर चुप हो गया। उसके मन का आश्वस्त भाव भांपकर रणजीत ने बिना एक मिनिट की देर किये उत्तमप्रकाश को पुकारकर कहा, "चौधरी साहब, ट्रस्ट के पेपर्ज़ पर मौसाजी के सिगनेचर तो करा लो।"

"बाद में करा लेंगे, मौसाजी के सिगनेचरों की जल्दी क्या है!"

"भई, बुनियाद रखोगे तब इमारत बनेगी। इस धर्मस्थान की तो बुनियाद ही ट्रस्ट है।" रणजीत ने एक-एक शब्द पर ज़ोर देते हुए कहा और वहाँ खड़े गाँव के लोगों की तरफ़ देखा।

मुखिया हैरानी के साथ बारी-बारी रणजीत और उत्तमप्रकाश की ओर देख रहा था। उत्तमप्रकाश ने बढ़कर मुखिया का हाथ पकड़ लिया और उसे अपनी कार की तरफ़ ले गया।

वहाँ अपने बैग से उसने कागज़ों का बण्डल-सा निकाला और उन्हें कार के बॉनिट पर फैला दिया। रणजीत ने अपना पेन मुखिया के हाथ में थमा दिया।

"इन्हीं चारों कागज़ों पर जहां पेन्सिल का निशान बना है वहाँ अपने दस्तख़त करना है।" उत्तमप्रकाश ने उंगली से निशान दिखाये।

मुखिया ने दस्तख़त कर दिये, पेन रणजीत की जेब में वापस पहुंच गया, उत्तमप्रकाश कागज़ों को समेटने लगा—तब रणजीत उसकी तरफ़ को हाथ बढ़ाता हुआ बोला, "ये कागज़ मुझे दे दें।"

"बाद में ले लेना।"

"नहीं भई, मुझे कल को ही रजिस्ट्री करानी है।"

उत्तमप्रकाश से कागज़ लेकर रणजीत ने अपने बैग में [illegible] संभालकर रख लिये और मुखिया को साथ लिये हुए [illegible] आ गये जहां समाधि बनानी तय की थी। [illegible]

चुकी थी और आसन भी डाल दिये गये थे। दोनों पण्डित आमने-सामने बैठ गये। एक तरफ़ मुखिया और मुखियानी बैठ गये; बाक़ी लोग उनके चारों ओर जम गये।

मन्त्रों का पाठ हुआ, होम किया गया, घी और सामग्री की सुगन्ध सब तरफ़ भर चली। पूजा के बाद दरियाँ उठा दी गयीं और मुखिया ने तालियों के बीच समाधि की नींव रखी। गले से फूल-मालाएँ झुलाते हुए मुखिया ने फिर प्रसाद बाँटा। चार राज अपने काम में लगे हुए तेज़ी से ईंटें चुन रहे थे, मज़दूर लोग दौड़-दौड़कर ईंटें और मसाला पहुँचा रहे थे। गाँव के तमाम लोग शामियाने के नीचे आसन से बैठे थे। पण्डितायन भगवती अपनी टोली के साथ ज़ोर-शोर से वहाँ कीर्तन में लगी थीं। रह-रहकर—

जब-जब होता नाश धर्म का और पाप बढ़ जाता है,
तब-तब लेते जनम प्रभु और विश्व शान्ति पाता है।—

की आवाज़ वातावरण में गूँज जाती थी। गाँव के लोग मुग्ध हुए भजन-कीर्तन में रमे थे और रणजीत हलके-हलके मुसकराता हुआ सिर झुकाये बैठा जेब में पड़े काग़ज़ों को सहला रहा था।

समाधि बन गयी तो उत्तमप्रकाश ने उसपर बसन्ती पताका लहरायी। फूलों की टोकरी समाधि के पास रख दी गयी। मुखिया, मुखियानी, रुकमणी, शान्ता, भारती, उत्तमप्रकाश और रणजीत ने समाधि पर मालाएँ चढ़ायीं और गाँव के अन्य लोगों ने फूलों की वर्षा की। अन्त में सहभोज हुआ।

दोपहर बीतने को था जब शामियाने और दरी-क़नातें समेटी गयीं। जो ट्रक इस सामान को वापस ले जाने के लिए आया खड़ा था उसमें एक बड़ा-सा बोर्ड भी था जिसे इस बीच सड़क के सामने खेत में गाड़ दिया गया था। बोर्ड पर हिन्दी और अँगरेज़ी में मोटे-मोटे अक्षरों में लिखा था—

धर्मस्थान सिद्ध बाबाजी
सिद्ध बाबा धर्मस्थान निर्माण ट्रस्ट (रजिस्टर्ड)

मुखिया ने समाधि की ओर देखा। दो क्षण उसकी दृष्टि पताका पर टिकी रही। फिर उसने बोर्ड की ओर देखा और अपने पूर्वज की याद में उसकी आँखें भीग आयीं।

उत्तमप्रकाश और रणजीत चले गये तो मुखिया भी गाँव को लौट गया। बन्दरवाली खुई के मन्दिर का पुजारी और रामदयाल नजफ़गढ़ रोड पर खुई की तरफ़ बढ़े जा रहे थे।

रामदयाल ने पूछा, "महाराज, मुखिया ने समाधि पहले क्यों नहीं बनायी?"

"यही तो मैं भी सोच रहा हूँ।" पुजारी ने रामदयाल की ओर देखा, "फिर जहाँ समाधि बनायी है वह ज़मीन तो सरकार ले रही है!"

रामदयाल ने पीछे मुड़कर दूर लगे उस बोर्ड और मिद्धवावा की उस समाधि की ओर देखा और एक लम्बी-सी 'हूँ' करके एकदम खामोश हो गया—मन्दिर की बाहरी दीवार से लगाकर सड़क पर एक पक्की दुकान भी नहीं बनायी जा सकती क्या ?

बाईस—

लोगों ने फसल काटकर समेट ली थी। खाली जमीन पर हल नहीं चलाया था। कटी हुई मकई-मक्की और बाजरे के डण्ठल खेतों में वैसे ही खड़े थे। घास उग आयी थी और कहीं-कहीं पोहली और आक के छोटे-छोटे पौधे लहलहाने लगे थे। गाँव के ढोर खेतों में सारा दिन बेखटक घूमते रहते।

फ़सल काटने के बाद लोगों ने पेड़ों की ओर ध्यान दिया। जिन पेड़ों को उन्होंने दो-दो अंगुल मापकर बड़ा किया था, जिनकी छाँव में जेठ-बैसाख की तपती दोपहरिएँ बिताया करते थे, उन्हीं पेड़ों को अब काटकर लकड़ी सँभाल ली थी। रेहट उखाड़ लिये थे और जहाँ तक बना, कुओं की मुँडेरों की ईंटें भी निकाल ली थीं। किसी-किसी खेत में जो कोठे बनाये गये थे वे भी अब कहीं नहीं रह गये थे; शहतीर, दरवाजे और सारा सामान ढोकर ले आया गया था।

जब से यह खबर फैली थी कि ज़मीनें बिक गयी हैं, समूचा गाँव एक मण्डी-सी बन गया था। हल-कुदाल, फावड़ा-गैंती और ईंटों-दरवाजों तक के ग्राहक वहाँ हरदम बने रहते थे। गाँव में सारे ही दिन एक अजीब तरह की हलचल मची रहती थी। कभी किसी के तबेले में गड्डे का सौदा होता तो कभी किसी के घर में लकड़ी का मोल तय किया जाता।

ईंट, लकड़ी और रहट, हल और कुदाल तक बेचने में लोगों को कोई बहुत मानसिक कष्ट नहीं हुआ; लेकिन जब पास-पड़ोस के ही गाँवों और मण्डियों से लोग-बाग आकर ढोरों का मोल करने लगे तो एक भारी मुक्का-सा छाती पर लगा। दो-एक दिन तो उन लोगों को दुतकार दिया गया, कल-परसों पर टाला गया। लेकिन जब घर में भूसा खत्म होने लगा और हरा चारा मिलने की कोई सूरत न देखी तो लोग अन्त में बछड़े-बछियों, गाय-भैंसों और बैलों तक को बेचने की सोचने पर मजबूर हो गये।

एक दिन गाँव में एक सरदार आया। उसके साथ दो और भी आदमी थे।

सरदार का क़द छह फ़ुट से ऊपर था। अधेड़ उम्र का होने पर भी उसका चेहरा लाल सुर्ख़ था। बड़ी-बड़ी आँखों में लाल डोरे झलक रहे थे। उसके हाथ में लम्बी किरपाण थी; उसके एक साथी के पास बन्दूक़ और दूसरे के पास सुमदार लाठी थी।

तीनों सीधे दुनीचन्द की दुकान पर आये और उससे मुखिया का घर पूछा। उन्हें देखकर दुनीचन्द दहल गया। यह सोचकर उसकी डर के मारे घिग्घी-सी बँध गयी कि ये शायद डाकू हैं।

"सरदारजी, मुखिया से क्या काम है ?" दुनीचन्द ने डरते-डरते पूछा।

"मैं माल-मवेशी का व्यापारी हूँ। सुना यहाँ माल बिकाऊ है। इसलिए आया हूँ।" सरदार ने बताया।

दुनीचन्द एक बार को सोच में पड़ा। फिर गली की ओर इशारा करते हुए उन्हें मुखिया के तबेले का रास्ता समझाने लगा।

वे तीनों आगे बढ़ गये। दुनीचन्द खड़ा पीछे से देखता रहा। जब आँखों से ओझल हो गये तो उसके मुँह से निकला, "पहले कभी ऐसे आदमी गाँव में नहीं देखे। पता नहीं बदमास हैं या लुटेरे। यूँ गाँव में आवें हैं जैसे बाबा की ननिहाल हो।"

सरदार अपने साथियों को लिये हुए मुखिया के तबेले में पहुँचा। उन्हें देखकर मुखिया पहले तो घबरा गया और उसने दलीलसिंह को आवाज़ दी। लेकिन सरदार ने जब हाथ जोड़कर नम्र स्वर में राम-राम बुलायी तो उसका भय छँट चला।

"चौधरीजी, मेरा नाम सरवनसिंह है। माल-मवेशी का व्यापारी हूँ।" सरदार ने अपना परिचय दिया।

"आओ बैठो..." मुखिया ने सामने पड़ी खाट की ओर इशारा किया।

तीनों बैठ गये तो मुखिया ने पूछा, "यहाँ कैसे आना हुआ ?"

"पता चला था कि आपके पास बिकाऊ माल-मवेशी हैं। सोचा देखते जायें। बारा खाये तो सौदा कर लेंगे।" सरवनसिंह ने अपनी किरपाण खाट की पट्टी से लगाकर खड़ी करते हुए कहा।

"हूँ।" कहकर मुखिया ने आँख भरकर उनकी ओर ध्यान से देखा। फिर पूछा, "आप माल ख़रीदकर केह करते सैं ?"

"चौधरीजी, हमारा यही व्यापार है। मण्डी का व्यापारी हूँ : ख़रीदता हूँ, बेचता हूँ। मण्डी में तो हर तरह का ही माल चाहिए।" सरवनसिंह ने बताया।

मुखिया कुरेद-कुरेदकर सवाल पूछ रहा था। पहले तो सरवनसिंह शालीनता से जवाब देता रहा लेकिन बाद को खीजता हुआ बोला, "चौधरीजी, इतनी खोज तो लोग रिश्ता करने के लिए भी नहीं करते।"

"सरदारजी, बुरा मत मानो, आजकल हर परकार का आदमी व्यापारी बनकर घूमे है। आप परदेसी आदमी हैं। क्या पता बूचड़ों के दलाल हों। हम गौ-गाए बेच दें तो सिर पर पाप चढ़े और हमारी सात पुस्तें नरक की भागी बनें!" मुखिया ने समझाते हुए कहा।

सरवनसिंह हँस दिया, "चौधरीजी, हिसार मण्डी में जाकर किसी आढ़ती से पूछ लेना कि मिण्टगुमरीवाले सरवनसिंह को जानते हो। वह बतायेगा मैं कौन आदमी हूँ।" सरवनसिंह ने मुखिया की ओर देखा, "हिसार तो दूर है, नजफ़गढ़ ही चलो। आजकल हमारा वहीं डेरा है।"

मुखिया को जब दिलजमई हो गयी तो उठता हुआ बोला, "आप बैठो, मैं और लोगों को बुलाता हूँ।"

मुखिया ने तबेले के दरवाज़े में आकर आवाज़ दी, "हे बुद्धू के छोरे! जा भाग के ताऊ, बसी, सूबेदार को बोलियो कि मुखिया बुलाये से—तबेले में। कहना जल्दी आयें।"

मुखिया उनके पास आ बैठा। सरवनसिंह ने सामने की नज़र दौड़ायी और मन ही मन में खोरियों को गिनता हुआ बोला, "चौधरीजी, आपकी तो अच्छी-ख़ासी खेती है। महाराज की बहुत मेहर है।"

"हाँ अच्छी ही थी। इब तो ख़तम हो गयी। कुछ ज़मीनें सरकार ने ले लीं। कुछ एक कम्पनी को बेच दी। दो-चार खेत बचे हैं। उनमें खेती करके बीज के दाने भी नहीं निकलेंगे।" मुखिया की आवाज़ उदासी में डूब गयी।

"सरकार मुआवज़ा देगी, कम्पनी भी पैसा देगी," सरवनसिंह ने कहा, "फिर दु:ख क्यों चौधरीजी?" कुछ सेकण्ड ठहरकर भराये गले से बोला, "हमारी ही तरफ़ देखो, दो सौ एकड़ का मालिक था। नहर का पानी लगता था...।" सरवनसिंह अपनी सुनाने लगा तो मुखिया ने बीच में ही पूछा, "सरदारजी, इब आपका दौलतख़ाना कहाँ है?"

"चौधरीजी, दौलतख़ाना तो पाकिस्तान में रह गया : मिण्टगुमरी में। अब तो ग़रीबख़ाना है : हिसार में। टब्बर वहीं छोड़ा हुआ है, मैं मवेशियों की ख़रीद-फ़रोख़्त में बाहर ही रहता हूँ।" सरवनसिंह के गले से एक ठण्डी साँस निकली, "चौधरीजी, अब तो दिन पूरे कर रहे हैं। मिण्टगुमरी में मेरा यही कारोबार था। हिसार में अपने आढ़ती थे। मैं कभी किसी के पास चलकर नहीं जाता था। ज़रूरतमन्द अपने आप मेरे पास पहुँच जाते थे। वाहेगुरु की बहुत मेहर थी!"

दोनों अपने-अपने में खोये कुछ देर चुप बैठे रहे। सरवनसिंह ने मुखिया की ओर देखते हुए पूछा, "चौधरी जी, अब क्या सोचा है? खेती तो ख़त्म हो गयी।"

"अभी तो कुछ नहीं सोचा। रुपये मिल जायें, फिर सोचेंगे। कुछ न कुछ तो करना ही होगा।"

"मेरी मानो तो डेरी खोल लो। फ़ायदे में रहोगे।" सरवनसिंह ने विश्वास-भरे स्वर में कहा। यहाँ से नज़दीक ही एक गाँव है शादीपुर। वहाँ के चौधरियों की ज़मीनें भी सरकार ने ले ली हैं। वहीं एक चौधरी है: रामसेवक। अच्छी ख़ासी ज़मीन थी उसकी। अब उसने डेरी का धन्धा शुरू किया है। पहले उसने पाँच भैंसें ली थीं। पिछले महीने पाँच भैंसें और दो गायें मैंने ही उसके हाथों और बेची हैं। पहले से सुखी है। कहीं दूध ले जाने की जरूरत नहीं। दूध लेनेवाले ख़ुद पहुँच जावेंगे।"

"अच्छा!" मुखिया ने कहा, "पैसे मिल जायें तो सोचेंगे। अभी तो अपने ढोरों का थोड़ा-बहुत काम भी रहता है; ये बिक जायेंगे तो फिर वखत काटे भी ना कटेगा।"

ताऊ और बंसीलाल आ गये तो मुखिया ने उन्हें सरवनसिंह का परिचय देकर बताया, "यह सारे ढोर-डंगर, बैल-बछड़े खरीदने को तैयार हैं। इब आप सलाह कर लो।"

"चौधरी, तूने क्या विचारा है?" ताऊ ने पूछा।

"मैंने यह विचारा है कि एक जोड़ी बैल काकी को दे दूंगा। दहेज में जो भैंस उसे दी थी वह मर गयी है।"

"बाकी का क्या करना सै?" ताऊ ने तीखे स्वर में पूछा।

"बाकी...सोच रहा हूँ बेच ही दूं। बिना जमीन के इतने ढोर सँभालना मुसकिल है।" मुखिया ने कहा।

"कल कहीं और ज़मीन मिल गयी तो क्या नये डंगर खरीदेगा?" ताऊ ने पूछा।

"यह बात विचार लो। मैं कोई सलाह नहीं देता। लेकिन इतना बता दूं कि जब तक नयी ज़मीन मिलेगी बैल-बछड़े अपना मोल खा जायेंगे।" मुखिया ने चेतावनी दी।

"चौधरीजी, मुझे सलाह देनी तो नहीं चाहिए क्योंकि मैं बिना मांगे किसी को सलाह नहीं देता, लेकिन एक बात मैं आपको बता दूं कि बैल-बछड़ा अगर साल-छह महीने बेकार खड़ा रहे तो नाकारा हो जाता है। जहां नयी ज़मीन ख़रीदोगे वहां बैलों की जोड़ी भी ज़रूर मिल जायेगी।" सरवनसिंह ने सुझाव दिया।

धीरे-धीरे गाँव के और लोग भी मुखिया के तबेले में पहुँच गये। मुखिया ने सब पर नज़र दौड़ायी और हिसाब लगाते हुए बंसीलाल से पूछा "क्यों बंसी, हमारे गांव में कितने घर हैं जमींदारों के?"

"चौधरी, मालगुजारी तू करे है और जमीदारों के घर मेरे ने पूछे है ?"

"कुल सत्तर-अस्सी घर हैं।" ताऊ ने कहा।

"नहीं, ज्यादा होंगे।" बंसीलाल बोला।

"दस कम सौ होंगे। इससे जादे नहीं हैं।" ताऊ ने कहा।

"हर घर में एक जोड़ी बैल तो जरूर होंगे।" मुखिया ने कहा।

"क्यों, कई घरों में दो-दो हैं। कई कम्मियों के पास भी बैल हैं।" बंसीलाल ने बताया।

"कम्मियों को छोड़ो। उनका क्या, कहीं दूसरे गाँव में जमीन अधबटे पर ले लेंगे। मेरे ख्याल में एक सौ से ज्यादा जोड़ियाँ नहीं होंगी।" मुखिया बुदबुदाया। फिर सरवनसिंह से बोला, "सरदारजी, यूँ समझो एक सौ जोड़ी बैल हैं। यह पता नहीं कौन बेचेगा और कौन नहीं। इतने ही बछड़े होंगे।"

"नहीं बछड़े ज्यादा सैं। चार तो मेरे पास ही हैं।" ताऊ ने कहा।

"कोई दो सौ समझो।"

"बैलों की जोड़ी का मोल क्या होगा ?" ताऊ ने पूछा।

"मोल तो माल के मुताबिक़ होगा, चौधरीजी। जैसा माल वैसा मोल। ढोर-डगर में दड़ा नहीं चलता।" सरवनसिंह ने समझाया।

"सरदारजी, सौ जोड़ी बैल और दो-ढाई सौ बछड़े हैं। सबका सौदा करना है या ..."

"मोल बन जाये तो सब खरीद लेंगे जी !" सरवनसिंह ने कहा।

"क्यों चौधरी, क्या सलाह है ? मन हो तो माल दिखा दें।" मुखिया ने पूछा।

"दिखा दो। अगर खेती का सत्यानास हो गया है तो इब सरब सत्यानास भी होने दो।" ताऊ ने रुक-रुककर डूबते स्वर में कहा।

"माल तो इस समय खेतों में चर रहा है।" मुखिया ने बताया।

"खेतों में खुले माल की परख मुश्किल होती है। आप ऐसा करें। सारा माल एक खेत में जमा कर दें ! वहीं एक बार में ही देखकर मोल बना लेंगे।" सरवनसिंह ने सुझाया।

"क्यों बंसी, ठीक सै ?" मुखिया ने खाट से उठते हुए पूछा।

"जब बेचना ही है तो फिर विचार कैसा ?" कहकर बंसीलाल भी उठ खड़ा हुआ।

"ऐसा करते हैं, ताऊ के खेत में ढोर-डगर इकट्ठे कर देते हैं।"

"मैं एक बात कहूँगा।" सरवनसिंह ने अपनी किरपाण संभालते हुए कहा, "बैलों को जोड़ी में खड़ा करें। बछड़े अलग कर दें। सब चौधरी अपने-अपने माल को रस्से डालकर खड़े हो जायें। बारी-बारी सबका मोल चुका लेंगे।"

सरवनसिंह की सलाह सबने मान ली और अपने-अपने पशु ताऊ के खेत में

जमा कर दिये। सरवनसिंह अपने दोनों साथियों समेत वहाँ पहुंच गया। सबसे पहले उसने मुखिया के बैलों की जोड़ी देखी। दोनों के मुंह खोलकर दांत गिने। फिर उनके खुर देखे, क़द नापा, पीठ पर हाथ फेरकर थरथरी महसूस की और फिर हाथ झाड़ता हुआ बोला, "हाँ चौधरी, बोलो क्या दाम लोगे?"

"आप बोलो? व्यापारी आप हैं।"

"मालिक तो आप हैं।"

"दाम ख़रीदार बताता है।"

"ना चौधरी, दाम माल का मालिक बताता है।"

"अच्छा तो मैं बोल देता हूँ—" मुखिया ने ताऊ और बंसीलाल से कुछ खुसर-फुसर की और ऊँचे स्वर में बोला, "सरदारजी, हम ज्यादा मोल-तोल नहीं जानते। एक दाम बोलूंगा। मंजूर हो तो रस्सा पकड़ लेना।...मैं इस जोड़ी का... मैं इस जोड़ी का...पन्द्रह कोड़ी रुपये लूंगा।" मुखिया ने जैसे सांस रोककर कहा।

"चौधरीजी, आपने दाम चुकानेवाला नहीं बोला। आप की खोरीपर यह जोड़ी तीस कोड़ी रुपये की भी हो सकती है, लेकिन वह दाम बताओ जो लेना है।...आपने बैलों के दांत गिने हैं?" सरवनसिंह ने कहा।

"आप क्या देंगे?" मुखिया ने पूछा।

"मैं तो दस कोड़ी में ख़रीदार हूँ।" सरवनसिंह ने मुखिया की आँखों में झांकते हुए बताया।

"सरदारजी, आपन ने भी मोल बनानेवाली बात नहीं की।" मुखिया ने कहा।

सरवनसिंह जानता था कि अगर उसने मुखिया की जोड़ी का दाम कम करा लिया तो औरों की जोड़ियों के दाम अपने-आप कम हो जायेंगे। जब सौदा टूटता नजर आता तो सरवनसिंह रुपये-दो-रुपये बढ़ा देता। जब मुखिया ढाई सौ पर अड़ गया तो सरवनसिंह पास जाकर धीरे से बोला, "चौधरीजी, कभी इनके खुर देखे हैं? अगर ये बैल एक साल तक आपकी खुरली पर रह गये तो चूचड़ भी इनके गाहक नहीं होंगे।...क्या ये दोनों कभी-कभी मोक मारते हैं?" सरवनसिंह ने पूछा।

"हाँ, मारते तो हैं।" मुखिया ने अचम्भे में आते पूछा।

"तो मेरी बात याद रखना। मैं आख़िरी दाम बता देता हूँ: अगर बारह कोड़ी मंजूर है तो इनका रस्सा मेरे हाथ में थमा दो।"

मुखिया कुछ देर तक चुप खड़ा रहा। वह ताऊ और बंसीलाल के कन्धों पर हाथ रखकर परे ले गया और सरदार की बात उन्हें बतायी। दोनों ने एक साथ कहा, अगर यह बात है तो जो देता है सो ले लो। मुखिया ने आकर हाँ कर दी

तो सरवनसिंह बोला, "चौधरी, एक बात मैं पहले ही बता दूं। जोड़ी के साथ पंजाली भी लूंगा। खुले बैलों को ले जाना बहुत मुश्किल होता है। वैसे भी पंजालियाँ अब आपके किस काम की? आप सभी सुन लें।" सरवनसिंह ने आवाज को उठाकर कहा।

जब सरवनसिंह ने पाँच-छह जोड़ी बैलों का सौदा कर लिया तो गाँववालों को यकीन हो गया कि उनके पशुओं की बारी भी आनेवाली है। स्त्रियाँ और बच्चे भी अपने-अपने पशुओं के पास आ खड़े हुए। जमीनें बिक जाने के बाद जिन चौधरियों ने काम हलका करने और चारा बचाने के लिए अपने बछड़े और बछियाँ कम्मियों को दे दी थीं वे अब पछता रहे थे। न दिये होते तो उनका भी मोल पड़ जाता। कई चौधरी तो जाकर अपने बछड़े और बछियें वापस ले आये।

तीन-चार घण्टे में सरवनसिंह ने सब ढोरों का सौदा निबटा लिया। एक आदमी को उसने नजफगढ भेज दिया कि वहाँ से एक-दो साथी ले आये। दूसरे आदमी की मदद से वह रसीदें बनाने लगा।

रसीदों में उसने ढोरों का रंग, सींग की शक्ल, आँखों की रंगत सब लिखकर बाद में रकम लिखी। फिर तमाम रसीदों को मुखिया के आगे रखते हुए कहा, "मुखियाजी, इन पर आप सही कर दो और ताऊ और बसी की ओर देखते हुए आगे बोला, "आप दोनों गवाही डाल दो।"

जब तक सरवनसिंह ने रसीदें लेकर सबका भुगतान किया, नजफगढ से दो साथी लेकर उसका आदमी आ गया। हरेक पशु के माथे पर नीली स्याही से नम्बर लिखा गया और सबके गले में पंजालियाँ डाल दी गयी। एक लम्बी पतली रस्सी उनकी नकेली में से निकालकर एक आदमी ने पकड़ ली और रस्सी का दूसरा सिरा आखिरवाली जोड़ी की पजाली से बाँध दिया। बछड़ों और बछियों को भी अलग-अलग करके बाँध लिया गया।

ढोरों की आँखें भय से फैली हुई थी। मर्द सभी उदास खड़े थे। स्त्रियों की आँखों में आँसू तक भर आये थे, और बच्चे तो अपनी-अपनी बछियों या बछड़े का मुँह रस्सी से बाँधा जाता देखते ही चीख़ते और सरवनसिंह के आदमियों को गालियाँ देते।

एक स्त्री ने अपनी बछिया को हसरत-भरी आँखों से देखा और आँसू पोंछती हुई पड़ोसिन से बोली, "मैंने सोच रखा था कि इसे बिटिया के दहेज में दूँगी। बड़ी असील बछिया है!" पड़ोसिन अपने ही फफक उठी, "अरी, मैं तो सोचे कि मेरे घर पहला दोहता होगा तो बछिया को बिटिया के घर भेज दूँगी।"

जब तैयारी हो गयी तो सरवनसिंह ने चौधरियों से इजाजत ली और उसके आदमी ढोरों को सड़क की ओर हाँकने लगे। ढोर जाना नहीं चाहते थे। रस्सी

तुड़ाने की करते या इधर-उधर को भागते तो उनपर डण्डों की बारिश होती। कई बैलों के तो खींचातानी में नाक से ख़ून तक बहने लगा।

उस दिन कई घरों में खाना तक नहीं बना। थान देख-देखकर बड़ों तक को भय महसूस होने लगा था। वे इस बात से त्रस्त हो रहे थे कि अब तो उन्हें करने के लिए कोई काम ही नहीं रह गया।

तेईस—

अपनी-अपनी ज़मीन की क़ीमत वसूल करने के लिए तारीख़ पर सब लोग सवेरे ही तैयार होकर मुखिया के तबेले में पहुँच गये।

"क्या आज भी हमें ले जाने के लिए लारी आयेगी?" पहलादसिंह ने ताऊ से पूछा।

"चोधरी से पूछो।" ताऊ ने कहा और फिर आप भी पूछने लगा, "क्यों आज भी हमें ले जाने के लिए लारी आये सै?"

मुखिया सोचने लगा, "कहा तो नहीं था। शायद भेज दें। कहो तो थोड़ी देर रास्ता देख लें।"

देर तक इन्तज़ार करने पर भी जब कोई परिणाम न निकला और सबका मन ऊबने लगा तो बंसीलाल ने उठते हुए कहा, "चौधरी, इब लारी नहीं आयेगी। जब उनको काम था, मोटर लारी भेजते थे। इब हमें काम है लारी क्यों भेजेंगे?" बंसीलाल हँसा।

"बंसी, ठीक ही कहे है। इब लारी की राह और देखने में कोई लाभ नहीं।" ताऊ बोला।

जब सब लोग उठ खड़े हुए तो मुखिया ने भी जूते में पाँव डाला। सब लोग छोटी-छोटी टोलियों में बँटे गाँव से निकलकर सड़क पर आ खड़े हुए।

"कैसे चलना सै?" मुखिया ने पूछा।

"पूसा तक पैदल चलते हैं। वहाँ से लारी में बैठ जायेंगे।" ताऊ ने सुझाव दिया।

"ताऊ, क्यों पैदल चलकर टाँगें तुड़वाये सै। हजारों की रकम लेने जा रिहे हो। दवन्नी लगेगी। लारी में बैठकर जाइयो।" बंसीलाल ने ऊँची आवाज़ में कहा।

"वह तो ठीक सै। मैं रकम कौन-सी गोली में बाँधकर घर लिना रहा हूँ। वहीं उत्तमपरकाश के दफ़्तर में जमा करानी है।" ताऊ बोला।

नजफ़गढ़ की ओर से आती बस देखकर वे सबके सब एक जगह इकट्ठे हो गये। कुछ दूर पर थी बस, तभी उन्होंने रुकने का इशारा किया, लेकिन वह भाँ-भाँ करती तेज़ी से निकल गयी।

"हे यह क्या सै? डरैवर लारी को दौड़ाकर क्यों ले गया सै?" ताऊ ने हैरानी से पूछा।

"नू भी हो यह भी नहीं हो सकता कि उसने हमें देखा नहीं। इतनी धनक्क खड़ी सै।" बंसीलाल बोला।

"पहले सवारी सड़क से दूर हो तो भी लारी रुक जाती थी। सवारी का इन्तजार भी करती थी। लेकिन आज इतनी सवारियाँ सड़क के ऊपर खड़ी देखकर भी लारी नहीं रुकी।" मुखिया ने ताज्जुब में भरकर कहा।

वे लोग लॉरी के न रुकने को लेकर तरह-तरह की अटकलें लगा रहे थे कि उन्होंने बाबाजी के जोहड़ की ओर से दो बड़े-बड़े थैले उठाये हुए दुनीचन्द को आते देखा। उनके पाँव अनायास ही उधर को बढ़ने लगे।

जब काफ़ी नजदीक पहुँच गये तो दुनीचन्द ने ऊँची आवाज़ में पूछा, "चौधरी-जी, कहाँ चले बारात बनाकर?"

"तेरे घर से पता चला कि तू नयी जोरू लाने सहर गया सै। सोचा हम भी पहुँच जायें।" बंसीलाल ने हँसते हुए कहा।

दुनीचन्द ने बंसीलाल की बात को अनसुनी करते हुए मुखिया से पूछा, "क्या सहर जा रहे सै?"

"हाँ, उत्तमपरकाश ने बुलाया सै। जमीन का पैसा लेने जा रहे हैं।" मुखिया ने बताया।

"लाला, इब तो तेरी डूबी हुई रकमें भी तर जायेंगी।" बंसीलाल ने हँसते हुए कहा।

दुनीचन्द चुप रहा। मुखिया की ओर देखता हुआ बोला, "आप जा दिल्ली रहे हैं और राह नजफ़गढ़ की पकड़ रखी है?"

"लारी में बैठने के लिए आये थे। वह रुकी नहीं। पता नहीं आज क्या हो गया सै?"

दुनीचन्द ने हैरानी से उनकी ओर देखा जैसे मुखिया ने कोई अनोखी बात कह दी हो। फिर बोला, "इब लारी यहाँ नहीं रुकती। बाँदरावाली खुई के सामने रुकती है।"

"बाँदरावाली खुई कहाँ सै?" मुखिया ने हैरानी से पूछा।

"बाबाजी के जोहड़ के पास सड़क पर जो कुआँ है।" दुनीचन्द ने पीछे मुड़-

कर संकेत करते हुए बताया। "पंजाबी ने उसे नया नाम दिया है। इब उसे सब लोग बांदरांवाली खुई कहते हैं। वहां अड्डा बन गया सै। इब लारी वहीं रुका करेगी। वहीं से सवारी उठायेगी और उतारेगी।"

"अड्डा कैसा? पहले तो जहां हाथ दो लारी रुक जाती थी।" मुखिया ने हाथ झटकते हुए कहा।

"चौधरी, इब भूल जाओ पुराने वक्तों को। लारी पकड़नी है तो वहां चले जाओ।" दुनीचन्द गाँव की ओर चला गया और वे लोग धीरे-धीरे बांदरांवाली खुई की ओर बढ़ने लगे।

बांदरांवाली खुई के पास रामदयाल ने अब पटरी की बजाय लकड़ी का बड़ा खोखा बना लिया था। सामने बेंचों पर कई दूधिये बैठे आपस में हँसी-मजाक़ करते हुए चाय-पकौड़े पर जमे हुए थे।

पहले की तरह चौधरियों को आता देखकर रामदयाल उठा नहीं, न ही हाथ जोड़कर अभिवादन किया। अपनी गद्दी पर बैठे-बैठे ही उसने राम-राम बुलायी और पुकारा, "आओ चौधरीजी, चाय-पानी पियो!"

"ना लाला, घर से खा-पीकर चले थे।" मुखिया ने कहा। फिर पूछा, "लारी कहां रुके सै?"

"यहीं सामने। बड़ी टाहली के पास।" रामदयाल ने उत्तर दिया।

वे वहां जाकर खड़े हो गये। जब दूधिये उठ गये और अपनी-अपनी साइकिलें लेकर चले गये तो रामदयाल उनके पास आ गया और अनुरोध-सा करता बोला, "चौधरियो, आओ न, इत्थांई क्यों खड़े हो? आपकी अपनी दुकान है। वहां आकर बैठो।"

"लाला, सहर जाना सै। लारी की राह देख रहे हैं।" मुखिया ने उत्तर दिया।

"आओ नां। लारी तुम्हें छोड़कर न भाग सी। इत्थांई रुक सी। दाह-पन्द्रह मिनट ते जरूर रुक सी। ड्रैवर-क्लीनर चाय-पानी पी के ही चल सी।" रामदयाल ने समझाकर कहा।

मुखिया ने अपने साथियों की ओर देखा और आगे बढ़ता हुआ बोला, "चल लाला, लारी आने तक तुम्हारे पास बैठ लेते हैं।"

रामदयाल ने खोखे की ओर बढ़ते हुए आवाज़ दी, "ओ महावीरा, बेंच साफ़ कर दे; चौधरी लोग बैठसी।"

जब वे सड़क पार करके खोखे के सामने पहुँचे तो महावीर बेंच साफ़ कर रहा था। उन्हें देखकर उसने कपड़ा उठा लिया और एक ओर खड़ा हो गया। रामदयाल एक बेंच पर पकौड़े के कुछ टुकड़े देखकर ऊँचे स्वर में बोला, "ओय खोटी मा दे पुत्तर, तू केह कर सी, इन बेंचों उत्ते मुरब्बयाँ दे मालिक बैठ सी।"

रामदयाल ने उससे कपड़ा लेकर खुद रगड़-रगड़कर बेंच साफ़ किये और कपड़ा महावीर की ओर फेंकता हुआ बोला, "चौधरीजी, तशरीफ़ रखो।" फिर वह महावीर की ओर देखता हुआ बोला, "ओये महावीरा, खुई से ताज़ा पानी निकालकर चौधरियों को पिला।"

महावीर सबको पानी पिलाने लगा। मुखिया ने पानी पीकर जीभ से होंठ पोंछते हुए कहा, "इब तो इसका पानी बहुत मीठा हो गया सै।"

"चौधरीजी, जब से मैं इत्थाई ठिकाणा बनाया था तो खुई का पानी बू मारता पई।" रामदयाल आँखें नचाकर बोला, "मैं हैरान हो सी, परेशान हो सी। सोच सी कि ठिकाना बना बैठा हूँ, चौधरी लोग आ सी तो उन्हें क्या बू मारा पानी पिला सी। ना-ना, मैं एह कुफ़र न कर सी।" रामदयाल ने कानों को छुआ। फिर बोला, "बहुत सोचा, केह करूँ। बस मैंने बालटी उठा ली। तीन दिन तक मैंने बालटी नहीं छोड़ी। हाथों में छाले पड़ गये लेकिन इतना पानी निकाला कि खुई ख़ाली हो गयी।" रामदयाल ने दोनों हाथ मसलते हुए कहा। "जब बाबा मिट्ठा पानी निकला तो बालटी छोड़ी।"

रामदयाल ने सब पर नज़र डाली और उठता हुआ बोला, "चौधरीजी, आपके लिए चाय बनाऊँ।"

"ना लाला। इच्छा नहीं सै। घर से खा-पीकर ही निकले हैं।" मुखिया ने इनकार करते हुए कहा।

"क्या शहर जा रहे हैं?" रामदयाल ने उसके सामने बैठते हुए पूछा।

"हाँ, कम्पनी के दफ़्तर में जा रहे हैं। ज़मीन का सौदा कर लिया है। रजिस्टरी भी हो गयी है। इब पैसे-धेले का हिसाब करना है।" मुखिया ने बताया।

"हाँ, मैं भी सुनया सी। चलो अच्छा किया। अब यहाँ भी रौनक हो जायेगी।" रामदयाल ने कहा।

दूर से जब उन्हें बस की आवाज़ सुनाई दी तो सब लोग उठकर सड़क के पार जा खड़े हुए। बस रुकी तो वे जल्दी-जल्दी उसमें चढ़ने लगे। मुखिया किसी तरह लोगों में फँसता-फँसाता ड्राइवर के नज़दीक जाकर बोला, "अतरसिंह, राम-राम। इब क्या हमारे गाँव के सामने बस नहीं रुकती?"

"ना चौधरी। कम्पनी ने अड्डे बना दिये हैं। वहीं रुकती है।" अतरसिंह ने उत्तर दिया।

मुखिया हैरान-सा चुप रह गया। क्लीनर की सीटी सुनकर अतरसिंह ने बस चला दी। मुखिया उसके बराबरवाली सीट पर ही कसमसाकर बैठ गया। अतरसिंह ने उसकी ओर देखा और सहज भाव से पूछा, "चौधरीजी, सुना है आपकी ज़मीन भी सरकार ले रही है?"

"हाँ अतरसिंह, तूने ठीक ही सुना सै। सड़क के पार पच्छिमवाली जमीन सरकार ले रही है। इधर सड़क के पूरबवाली उत्तमपरकाश की कम्पनी ने खरीद ली है। उसी के पास पैसे लेने जा रहे हैं।" मुखिया ने बताया।

"इब क्या सोचा है? खेती तो गयी।" अतरसिंह ने पूछा।

"सोचना क्या है।" मुखिया उदास हो गया।

"नूं कहूँ चौधरी, एक नयी टिरान्सपोर्ट कम्पनी खुल रही है। उसमें हिस्सा डाल ले। एक-दो लड़के भी कम्पनी में ड्राइवर-क्लीनर, इनस्पिटर भरती करा लेना।" आधा मिनट चुप रहकर बोला, "मन बन जाये तो बता देना। हिस्से मैं दिला दूंगा।"

अजमेरी गेट अड्डे पर बस रुकी तो वे सब उतर गये। अतरसिंह मुखिया को एक तरफ़ ले गया और ट्रांस्पोर्ट कम्पनी की बात उसे एक बार फिर से अच्छी तरह समझायी। मुखिया ने जब उसे भरोसा दिलाया कि पैसा मिल जाने पर वह जरूर सोचेगा तब कहीं अतरसिंह अड्डे की तरफ़ को वापस मुड़ा।

मुखिया आया तो ताऊ ने ही पहले पूछा, "कै कहे से अतरसिंह? बहुत देर से खुसर-फुसर कर रिहा था।"

"चौधरी, पैसा अभी मिला नहीं। खर्च करने की सलाह देनेवाले उमड़े आ रहे हैं!" मुखिया ने बताया, "कह रहा था कि नयी टरान्सपोट कम्पनी खुल रही है लारियों की, उसमें पैसा लगा दूं।"

"चौधरी, आगे-आगे देखना। लोग अपना पैसा नौली में बांध के रखेंगे। दूसरे को खर्च करने की सलाह देंगे।" बंसीलाल ने कहा। फिर पीछे की ओर देखता हुआ बोला, "पहलाद, ग्याला का गुज्जर, दलीप तुम्हें क्या कह रहा था?"

"कुछ नहीं।" पहलादसिंह पाँव उठाकर बंसीलाल के बराबर में को आ गया।

"खुसर-फुसर तो तुम दोनों देर से कर रहे थे।" बंसीलाल ने कहा।

"साँझा काम करने के बारे में कह रहा था।" पहलादसिंह ने बताया।

"तू उसे कब से जाने सै?" मुखिया ने पूछा।

"पंजाबी के खोखे पर दो-चार बार मिला है। और कोई जान-पहचान नहीं, चाचा।" पहलादसिंह कुछ घबरा गया।

"उससे बच के रहियो। पूरा नौसरबाज है।" मुखिया ने पहलादसिंह को सावधान किया।

मिण्टो ब्रिज के नीचे से निकलते वे लोग कॅनॉट प्लेस में आ गये। बड़ी-बड़ी दुकानें देखकर उनकी आंखें फटने लगीं। नंगे सिर, बाल कटी स्त्रियों को देखकर तो उनमें से कई के मुँह खुले के खुले रह गये।

"यह तो इन्द्रपुरी से कम नहीं।" पहलादसिंह ने रामू के साथ टकराते हुए कहा।

"वह देख सामने मेम जा रही से ! बिलकुल कच्चे भुट्टे जैसी। दान्त भी वैसे ही सैं।" रामू ने चटखारा लेकर कहा।

साढ़े दस बजे के क़रीब वे लोग उत्तमप्रकाश की कम्पनी के दफ़्तर में पहुँचे। रिसेप्शन पर बैठी लड़की ने मुसकराकर और हाथ जोड़कर उनका अभिवादन किया और अपनी कुरसी से उठती हुई बोली, "साहब तो अभी आये नहीं। उनका टेलिफ़ोन आया था। ग्यारह तक ज़रूर पहुँच जायेंगे। आप सब लाउंज में बैठें।" उसने आगे बढ़ते हुए अपने पीछे आने का संकेत किया।

गाँव के लोग घबरा-से गये। मुखिया, बंसीलाल और ताऊ के पीछे-पीछे लाउंज में पहुँचकर सब सोफ़े और कुरसियों पर तरह् बैठ गये। छत से लटकते पंखे को चलता देखकर तो रामू हक्का-बक्का रह गया। ताऊ की ओर झुकता हुआ बोला, "ताऊ, न किसी का हाथ हिले न पाँव, हवा फ़र्र-फ़र्र आवे से !"

मुखिया और बंसीलाल कुछ खुसर-फुसर कर रहे थे। फिर सूबेदार और ताऊ को भी उन्होंने बुला लिया। मुखिया ने उनकी ओर झुकते हुए कहा, "क्या करना सै ? पैसा उत्तमपरकाश की कम्पनी में ही जमा कराना है, या—?"

"सोच लो...वैसे इतना पैसा घर में रखोगे तो रोज चोर-डाकू आयेंगे।" बंसीलाल ने चेतावनी दी।

"यही सलाह ठीक है। अभी पैसा यहीं रहने दो। जब जरूरत होगी निकलवा लेंगे।" सूबेदार माड़ू सिंह ने राय दी।

"ठीक सै। घर में पैसा रखकर क्यों जान को नया रोग लगायें।" ताऊ ने कहा और उठकर अपनी कुरसी पर आ गया।

रामू खिसककर ताऊ के पास पहुँचा और भौंहें चढ़ाकर पूछा, "ताऊ, के कह से मुखिया ?"

"पैसे के बारे में पूछ रिहा था। यहीं कम्पनी में जमा कराना सै या घर ले जाना सै ?"

"फेर क्या सोचा ?"

"यहीं कम्पनी में जमा करा देंगे।"

"अगर कम्पनी टूट गयी तो ?" रामू ने पूछा।

"तेरी जीभ में कीड़े पड़ें। शुभ-शुभ बोल।" ताऊ ने रामू को झिड़क दिया। फिर तीखी आवाज में कहा, "कम्पनी क्या मिट्टी की गोलक है जो टूट जायेगी ?"

ताऊ का चेहरा तमतमा आया। बंसीलाल ने देखा तो पूछा, "ताऊ, क्या हुआ ?"

"हुआ क्या ?...मेरे पास काली जीभवाला रामू जो बैठा सै। कहता है कम्पनी टूट जाये तो तुम्हारे रुपये का क्या बनेगा।"

बंसीलाल, मुखिया और कई और लोगों ने रामू को घूरकर देखा। ताऊ को दिलासा देता हुआ मुखिया बोला, "यह तो पागल सै चौधरी, इसकी बात का गुस्सा मत कर।"

यह बात अभी चल ही रही थी कि एक ख़ाकी वरदी पहने चपरासी के पीछे-पीछे दो आदमी चाय की केतलियाँ, कप-प्लेट और बिस्किट लेकर आ गये। मुखिया की निगाह उधर गयी तो अचानक उसने देखा कि इस बीच सामने ही दरवाज़े में रणजीत आ खड़ा हुआ है। सभी की नज़रें उसकी ओर उठ गयीं। वह जल्दी-जल्दी चलता हुआ लाऊंज के बीच आकर खड़ा हो गया और मुसकराते हुए हाथ जोड़े। मुखिया, ताऊ, बंसीलाल और सूबेदार माड़ूसिंह के साथ उसने हाथ मिलाया और कुरसी खींचकर उनके सामने बैठते हुए बोला, "चौधरी साहब भी आने ही वाले हैं। तब तक आप चाय पीजिए।" रणजीत उठकर कपों में चाय उँडेलने लगा।

चाय के सब बरतन उठाकर चपरासी को गये कुछ ही मिनिट गये होंगे कि उत्तमप्रकाश भी आ गया। उसे देखकर सब लोग खड़े हो गये। उत्तमप्रकाश ने सबको हाथ जोड़े हुए सिर झुकाकर प्रणाम किया और कुरसी खींचकर रणजीत के पास बैठता हुआ बोला, "मौसाजी, माफ़ करना मुझे कुछ देर हो गयी। पहले डिवैलपमेण्ट ऑफ़िस गया, वहाँ से मिनिस्टरी में—कुछ ज़रूरी काम था। कितनी देर हुई आपको आये ?"

"ज्यादा देर नहीं हुई। नूं समझो...।" मुखिया अटका और झेंपने-सा लगा।

"कुछ चाय-पानी पिलाया ?" उत्तमप्रकाश ने रणजीत की ओर देखा।

"हाँ-हाँ; बैठे बाद में थे चाय पहले आ गयी !" मुखिया एक साँस में कह गया।

उत्तमप्रकाश ने रणजीत की ओर देखते हुए पूछा, "करें काम शुरू ? काग़ज़ात तो मैं कल ही तैयार करवा गया था। आपने चेक भी कर लिये थे।"

"हाँ, मँगवाता हूँ काग़ज़ात।" रणजीत नें चपरासी को आवाज़ दी और कहा—"देखो, अकाउण्टेण्ट से बोलो कि बसाई के काग़ज़ात लेकर आये। और सुनो, एक टेबल बैल यहाँ लाकर रख दो।"

अकाउण्टेण्ट कई फ़ाइलें लेकर आ गया तो उत्तमप्रकाश और रणजीत ने मिलकर उनपर नज़र डाली। उत्तमप्रकाश ने फिर कुरसी से उठते हुए कहा, "मौसाजी, ताऊजी, पण्डितजी, सूबेदार साहब—आप सब एक मिनट के लिए मेरी बात सुनो।"

वह उन्हें रिसेप्शन की ओर ले गया और वहाँ धीमी आवाज़ में पूछा, "इनमें से कितने लोग हैं जो अपना पैसा हमारे यहाँ जमा कराना चाहते हैं ?"

"कह नहीं सकते। चलते समय हमने कोई सलाह नहीं की थी। बाकी जहाँ तक हमारा सम्बन्ध है हम तो पहले ही बता चुके हैं। हम पैसा कम्पनी के पास ही जमा रखेंगे। बस इतना है कि अब काम-धन्धा शुरू करें तो हमें पैसा मिल जाये। क्यों चौधरी, क्यों बसी ?" मुखिया ने दोनों की ओर देखा।

"इस बारे में आप बिलकुल चिन्ता न करें। ईश्वर ने चाहा तो दो महीने के भीतर आपके लिए ऐसा काम पैदा हो जायेगा कि आनेवाली पुश्तें भी ऐश करेंगी।" उत्तमप्रकाश ने आशा और विश्वास-भरी आवाज़ में कहा।

"साहिबजी, हमने तो अपनी डोरी तेरे हाथ में दे दी है। हम किसान लोग हैं। सारी उमर धरती से जूझते रहे हैं।" ताऊ बोला।

उत्तमप्रकाश ने अपनी उँगलियाँ मरोड़ते हुए कहा, "फिर सबसे कैसे पूछा जाये।"

"क्यों, इस समय पैसे की कोई कमी है ?" मुखिया ने पूछा।

"नहीं मौसाजी, हमारे पास दो-चार लाख रुपये हरदम कैश में रहते हैं। किसी-किसी दिन तो ज्यादा भी होते हैं। बाकी बैंक में हमारे दस-बीस लाख रुपया हमेशा पड़ा रहता है। आपकी दया बनी रहे : पैसे की कोई कमी नहीं है।" उत्तमप्रकाश ने उनकी दिलजमई की।

"साहिबजी, ये तेरी बरखुरदारी है। हम उमर में तेरे से जरूर बड़े हैं, लेकिन अक्कल में तेरी जूती की धूल के बराबर भी नहीं।" ताऊ ने उत्तमप्रकाश की पीठ थपथपाते हुए कहा।

"ताऊजी, आप यह क्या कह रहे हैं ? मैं तो आपका बच्चा हूँ।" उत्तमप्रकाश ताऊ के घुटनों की ओर झुक गया। फिर गम्भीर होता हुआ मुखिया से बोला, "मौसाजी, बाकी लोगों से आप ही बात कर लें ?"

"ये छोटे दिल के लोग हैं बेटा। हम कहेंगे तो इन्हें सन्देह होगा कि हमने कुछ हेर-फेर कर लिया है। वे तो इस समय भी सटपटा रहे होंगे कि तूने हमें अलग क्यों बुलाया है।" मुखिया ने कहा। फिर समझाते हुए बोला, "एक बात और बता दूँ। मालिक चाहे एक बीघे का हो या सौ बीघे का। दोनों अपनी-अपनी जगह चौधरी हैं और बराबर हैं।"

"नूं कहूँ कि छोटा मालिक अपने को बड़ा चौधरी समझे से। [illegible] की तरह ज्यादा बजे से।" ताऊ बोला।

उत्तमप्रकाश सोच में पड़ गया और फिर सिर को एक झटका देते हुए बोला, "अच्छा मैं ही बात करता हूँ।"

उत्तमप्रकाश उनके साथ लाउंज में वापस आ गया और [illegible]

"इन्हें दफ़्तर दिखा दें। बहुत-से चौधरी पहली बार यहाँ आये हैं।"

"ज़रूर।" रणजीत ने उठते हुए कहा।

पहले उन्हें रिसेप्शन दिखाया गया। रणजीत ने उन्हें समझाया कि कैसे यहाँ से दफ़्तर के हर कमरे में टेलीफ़ोन पर बात की जा सकती है। फिर वह उन्हें अपने और उत्तमप्रकाश के कमरे में ले गया। वहाँ से वे अकाउण्टेण्ट के ऑफ़िस में आ गये जहाँ बहुत-से लोग बड़े-बड़े रजिस्टरों पर झुके हुए थे। वहाँ से उन्हें वह कैश-रूम में ले आया और दीवार में फ़िट लोहे की छह फ़ुट ऊँची तिजोरी की ओर संकेत करता हुआ बोला, "यह हमारा ख़ज़ाना है। पैसा-धेला यहीं रखते हैं।"

उत्तमप्रकाश ने आगे बढ़कर चेस्ट का बड़ा दरवाज़ा तीन चाबियाँ लगाकर खोला और फिर एक चाबी लगाकर छोटा द्वार खोला। उसके अन्दर पड़े नोटों के ढेर दिखाता हुआ बोला, "हम दफ़्तर में ज़्यादा रुपये नहीं रखते। बस, जैसा मैंने कहा, यहाँ तो ज़रूरत के लिए ही थोड़ा-बहुत रखते हैं, बाक़ी सब बैंक में जमा रहता है।"

चौधरी लोग आँखें फाड़-फाड़कर नोटों की गड्डियों को देख रहे थे।

"इनके पास इतना पैसा है! इन्होंने अभी तक कोई खून किया है कि नहीं?" रामू ने दाँतों में उँगली दबाते हुए दबी आवाज़ में कहा।

"मेरे पास इतना धन हो तो चिड़ी की तरह हवा में उड़ना शुरू कर दूँ।" पहलादसिंह के रोयें-रोयें में एक सिहरन दौड़ गयी।

सब देख दाखकर वे सब लाऊंज में आ बैठे। उत्तमप्रकाश ने सधे-बँधे स्वर में कहना शुरू किया जैसे बच्चों की क्लास ले रहा हो, "आपको शायद मालूम हो कि हमारी कम्पनी रुपये के लेन-देन का भी काम करती है। आप लोगों को इकट्ठी रक़म मिल रही है। घर में इतनी रक़म रखने में बहुत ख़तरा है। चोरी-चकारी का डर रहता है। फिर, घर में रुपये दबा रखने से कोई लाभ भी नहीं होता क्योंकि उसपर कोई ब्याज नहीं आता। हमारी कम्पनी में रक़म जमा कराने से एक तो वह सुरक्षित रहेगी। दूसरे आपको कम्पनी की ओर से सौ रुपये के पीछे साल के बाद छह रुपये ब्याज मिलेगा। यानी जिसके हमारे पास पाँच हज़ार जमा होंगे उसे साल के बाद तीन सौ रुपये ब्याज के मिलेंगे। असल रक़म खड़ी रहेगी। छह रुपये सैकड़ा सूद लेने के लिए रक़म कम से कम एक साल के लिए जमा रखनी होगी। कम मुद्दत के लिए जमा रक़म पर सूद भी कम मिलेगा। जैसे छह महीने के लिए पांच रुपया सैकड़ा, तीन महीने के लिए चार रुपये सैकड़ा।"

उत्तमप्रकाश चुप हो गया। फिर एक रजिस्टर उठाता हुआ बोला, "हमारे पास कोई हज़ार लोगों का बीस-तीस लाख रुपये जामा है। मैं नाम तो बताऊँगा

नहीं? नाम खोलना अच्छा नहीं होता। लेकिन इतना बता दूँ कि आपके गाँव के नजदीक ही के गाँव के एक चौधरी का हमारे पास एक लाख रुपया जमा है। अब आप बतायें। रुपये नकद लेने हैं या जमा कराने हैं?" उत्तमप्रकाश ने मुस्कराहटभरी नज़र सबकी तरफ़ डाली। फिर बोला, "सबसे अलग-अलग पूछना अच्छा नहीं लगेगा और उसमें वक़्त भी बहुत लगेगा। इसलिए जो लोग पैसा जमा नहीं कराना चाहते वे हाथ उठा दें।"

कुछ सेकण्ड सब चुप रहे और कनखियों से एक-दूसरे की ओर देखते रहे कि किसने हाथ खड़ा किया है और किसने नहीं। सबसे पहले रामू ने हाथ खड़ा किया। उसके बाद उसकी गली के पाँच और आदमियों ने हाथ खड़े किये। रणसिंह के हाथ खड़ा करने के बाद पहलादसिंह ने भी हाथ खड़ा कर दिया। सब मिलाकर सोलह लोगों ने हाथ खड़े कर दिये।

उत्तमप्रकाश ने हाथ गिने और अकाउण्टेण्ट से उनके कागज़ात अलग करने के लिए कहा। फिर वह उन्हें समझाता हुआ बोला, "हमें रुपये देने में रत्ती-भर एतराज़ नहीं है। हम दो मिनट में आपको रुपये का भुगतान कर देंगे, क्योंकि आप अपनी रकम ले रहे हैं। मैं आपसे एक बार फिर सिर्फ़ इतना कहना चाहता हूँ कि इतने रुपये घर में रखना ख़तरे से खाली नहीं। इसके अलावा घर में खुला पैसा हो तो आदमी खर्च भी खुले दिल से करता है। अगर आप हमारे पास जमा करायेंगे तो हम इसे आपकी अमानत समझेंगे। बाक़ी आप मालिक हैं। आपकी चीज़ है जब चाहे ले सकते हैं।"

सोचना अब उन सोलह को ही था। रामू ने बात शुरू की, "मैंने तो पाँच भैंसों का सौदा किया है। आज रकम देकर खोल लाऊँगा। हमारे पास घर में न तो इतने दाने हैं और न ही इतना पैसा है कि बेकार बैठकर खा सकें।"

"तू सारे पैसे इकट्ठे लेकर क्या करेगा?" ताऊ ने पहलादसिंह को डाँटकर पूछा।

"मैंने भी भैंसें खरीदनी हैं। कुछ न कुछ धन्धा तो करना ही होगा।" पहलादसिंह ने हकलाते हुए कहा।

"कितनी भैंसें ले रहा सै तू?"

"अभी सोचा नहीं। पाँच-सात तो रखूँगा ही।"

"फैसला अभी किया नहीं। पैसे ले जाकर क्या करेगा?" ताऊ भड़क उठा, "पहलाद, तू रकम उजाड़ देगा। मेरी मानो तो अभी जमा रहने दो। मुझे भी भैंसें खरीदनी हैं।"

ताऊ, मुखिया और बंसीलाल ने पहलादसिंह को और दूसरे लोगों को बहुत समझाया। मगर वे गुमसुम ही बैठे रहे। पहलादसिंह को जब ताऊ गालियाँ देने लगा तो वह दृढ़ स्वर में बोला, "ताऊ आज मैं सारा रुपया ज़रूर लूँगा। चाहे

कल आकर फिर सारा जमा करा दूँ।"

"तेरी मरजी।" ताऊ ने हारते स्वर में कहा।

उत्तमप्रकाश ने उन सबको उनकी रक़में चुका दीं। राम-राम करके वे लोग नीचे उतर गये। मुखिया, ताऊ, बंसीलाल, सूबेदार और बाक़ी कुछ लोगों को उत्तमप्रकाश ने वहीं रोके रखा कि उन्हें गाँव पहुँचा दिया जायेगा।

चौबीस—

पहलादसिंह ने साढ़े दस हज़ार के नोट नौली में डाले और उसे कमर में बाँध लिया। इतनी रक़म पास होने के कारण वह बहुत उत्तेजित था। पाँव ज़मीन पर नहीं टिक रहे थे। बार-बार हाथ नौली में बँधे नोटों को टटोल उठते थे।

रामू, पहलादसिंह, रणसिंह और जागीरसिंह धीरे-धीरे पाँव उठाते हुए मिण्टो ब्रिज की ओर चल पड़े। कॅनॉट प्लेस की सजी हुई दुकानों को ललचायी हुई नज़रों से देखते और जगह-जगह अटकते हुए वे आगे बढ़ रहे थे। पहलादसिंह की तो आज तक की सारी अधूरी और अजानी इच्छाएँ भीतर से कचोटती हुई उसकी आंखों के सामने नाच रही थीं। शो-विण्डोज में सजी हर चीज़ उसे बहुत सुन्दर, पुकारती हुई लग रही थी, और उसका जी होता कि भरी दुकानें ही ख़रीद ले। ओडियन सिनेमा के सामने आकर वे रुक गये।

"यह क्या सै?" पहलादसिंह ने पूछा।

"सिलमा है। यहाँ फिलम दिखाते हैं।" रामू ने बताया।

"मैंने कभी नहीं देखी। चलो आज देखते हैं। क्या होता है इसमें?" पहलादसिंह ने पूछा।

"यहाँ नहीं देखेंगे। यहाँ साहब लोग देखते हैं, फिर किसी दिन देखेंगे। आज हमारे पास बहुत रकम है। शहर के लोग ठग और चातुर होते हैं। चालाकी से आदमी को लूट लेते हैं।" रामू ने उसे आगे धकेलते हुए कहा।

पहलादसिंह ने वहाँ लगे पोस्टरों पर से किसी तरह आँखें हटाते हुए पाँव आगे बढ़ाये और रामू से पूछा, "बता, इब कहाँ चलना है?"

"मुझे तो यहाँ के रास्ते मालूम नहीं हैं।" रामू ने जवाब दिया।

"करोलबाग का रास्ता तो मैं जानूँ से। यहाँ से एक कोस से भी कम है। यहाँ से भुल्ली भटयारण जायेंगे। वहाँ से करोलबाग सामने नज़र आवे सै। वहाँ

से मुझे गाँव का रास्ता भी आवे है।" रणसिंह ने बताया।

"मुझे खारी बावली और सदरबाजार का रास्ता आता है। यहाँ लाला का सामान लाने के लिए गड्डा लेकर आता रहा हूँ।" जगीरसिंह बोला।

"वहाँ से तो चाँदनीचौक भी नजदीक ही है।" रामू ने कहा।

"तुम्हें चाँदनीचौक का रास्ता आता है?" पहलादसिंह ने पूछा।

"नहीं, लेकिन आदमी पूछता-पूछता विलैत पहुँच सकता है। चाँदनीचौक तो इसी शहर में है। पूछ लेते हैं किसी से।" रामू ने कहा। फिर वह एक टैक्सी को देखकर बोला, "उत्तमा मोटर का रौब बता रहा था। मुखिया, ताऊ, बंसी, सूबेदार उसकी मोटर में गाँव जायेंगे। यहाँ मोटरें किराये पर भी चलती हैं। इनमें पैसे देकर कोई भी बैठ सकता है। हम भी चाँदनीचौक मोटर में चलते हैं। रास्ता भी नहीं पूछना पड़ेगा। इन्हें यहाँ के सब रास्ते मालूम हैं।"

"कितना पैसा लेगा?" पहलादसिंह ने पूछा।

"जितना भी लेगा, चार हिस्सों में बाँट लेंगे। क्योंकि ठीक है ना?"

"हाँ।" सबने अनुमति दे दी।

आगे बढ़कर एक खाली टैक्सी को हाथ देकर उन्होंने रोका।

"कहाँ जाना है?" टैक्सी ड्राइवर ने उन्हें सिर से पाँव तक ध्यान से देखते हुए पूछा।

"चाँदनीचौक।"

"दो रुपये लगेंगे।"

"तू हमें दो रुपये दे, हम चारों तुझे मोटर समेत सिरों पर उठाकर चाँदनीचौक पहुँचा देते हैं। हम परदेसी नहीं हैं, यहीं के रहनेवाले हैं।" रामू ने रोब से कहा।

"मोटर भी तो तुम चारों को ही लेकर जायेगी।" टैक्सी ड्राइवर ने हँसते हुआ कहा।

"चारों के दो रुपये लेगा, तो फिर ठीक है। हम सबसे ये एक-एक से दो रुपये लेगा।"

वे लाल किले के सामने उतर गये। पहलादसिंह ने कुर्ते के नीचे मोनी खोलकर सौ-सौ के पाँच नोट निकाल लिये और अँगोछे में अच्छी तरह बाँधकर सौ का एक नोट टैक्सी ड्राइवर की ओर बढ़ा दिया। नोट को ध्यान से देख और यह तसल्ली कर लेने के बाद कि नोट सचमुच सौ रुपये का ही है, उसने पहलादसिंह की ओर देखते हुए पूछा, "क्यों चौधरी, बाप दादा-वादा मरा है या जमीन बेची है जो सौ का नोट दिखा रहे हो?" टैक्सी ड्राइवर ने उसे नोट लौटाते हुए आगे कहा, "मालिको, इतनी कमाई तो दस-पन्द्रह दिन में होती है। इसे तोड़ना मेरे बस का नहीं। पाँच या दस का हो तो तुड़ा भी दूँ।"

"अच्छा, हमें आगे साइकिलों की दुकान पर उतार दे। वहाँ नोट तुड़वाकर पैसे दे देंगे।" पहलादसिंह ने कुछ याद करते हुए कहा।

"चार आने और लगेंगे। साइकिलों की दुकानें जामा मस्जिद के पास हैं।" टैक्सी ड्राइवर ने कहा।

"ठीक है। चल तो सही। वखत क्यों खराब कर रहा सै।" रामू बोला, "जहाँ दो रुपये देंगे वहाँ और चार आने देते मरेंगे नहीं।"

टैक्सी ड्राइवर ने उन्हें साइकिलों की एक बड़ी-सी दुकान के सामने उतार दिया।

"आओ, चौधरीजी।" एक सेल्समैन ने निहायत मिठास के साथ उनका स्वागत किया—जैसे एक ज़माने से उन्हें जानता हो।

"साइकिल लेनी है। पहले यह सौ का नोट तोड़कर मोटरवाले को दो रुपये चार आने दे दो।" पहलादसिंह ने कहा।

"अभी लो।" सेल्समैन ने दो रुपये चार आने टैक्सी ड्राइवर को देकर चलता किया और सौ का नोट मुट्ठी में दबा लिया।

पहलादसिंह और उसके साथी बड़े ध्यान से एक लाइन में खड़ी नयी साइकिलों को देख रहे थे।

"चौधरीजी, आओ इधर बैठो। आप को साइकिल दिखाते हैं। पहले यह बताओ पियोगे क्या?"

"पानी पियेंगे।" रामू ने एक कुरसी पर उकड़ू बैठते हुए कहा।

"ओये किशन, जा दौड़कर सामने परताप की दुकान से चार लैमन की बोतलें ले आ। उसे कहना ठण्डी हों। अगर गरम हुई तो खुली बोतलें वापस कर दूंगा।" सेल्समैन ने नोट एक बही के नीचे दबाते हुए कहा।

वे चारों लैमन पीकर डकारें लेते हुए साइकिल देखने लगे।

"पंजाबी दुकानदार और अपने गाँव के लाला का फरक देखो। ये गाहक को चाय-पानी पिलावे हैं और हमारा लाला सीधे मुँह बात नहीं करता।"

"अच्छा चौधरीजी, कैसी साइकिल चाहिए आपको?"

"जो सबसे बढ़िया हो।" पहलादसिंह ने कहा।

"सबसे अच्छा तो रैली साइकिल है। सब कुछ लगाकर कोई तीन सौ की बैठेगी। वैसे हरकुलीज भी बहुत अच्छी है।" सेल्समैन ने उन्हें परखते हुए कहा। "हरकुलीज़ पर तो दस मन बोझ भी लादा जा सकता है। दोधी लोग यही साइकिल लेते हैं।"

"हम तुम्हें दोधी दिखाई देते हैं?" पहलादसिंह ने नौली और अँगोछे में बंधे नोटों को टटोलते हुए बिगड़कर कहा।

"चौधरीजी, आप गुस्सा कर गये। मैंने तो बताया कि किस साइकिल की

खास अच्छाई क्या है। एक देसी साइकिल भी है : हिन्द साइकिल। यह एक सौ तीस की है।"

"पहले जिसका नाम लिया उसमें खास बात क्या है?" पहलादसिंह ने पूछा।

"देखने में सुन्दर है। चलने में हलकी है। दो रंग में आती है : काली और हरी। दूसरी सब काले रंग में ही आती हैं।"

"वही दिखाओ।" पहलादसिंह ने कहा।

सेल्समैन ने आदमी से रैले साइकिल निकालने को कहा। पहलादसिंह ने हरकुलीज साइकिल भी देखी और रैली पर पैर रखता हुआ बोला, "यही ठीक है।"

"इसमें स्पीडोंवाली साइकिल भी आती है," सेल्समैन ने बताया, "उसमें तेज या धीरे चलाने का भी इन्तजाम होता है।"

"दिखाओ, दिखाओ!" पहलादसिंह ने उत्सुक होते हुए कहा और रामू के कान में को बोला, "मुखिया के दलीले के पास भी नयी साइकिल सै। बहुत छिपाकर रखे है उसे। कल मैं उसे बताऊँगा कि देख तेरी साइकिल से मेरी साइकिल कितनी बढ़िया सै।"

"अरे, मैंने सुना है वह मोटर साइकिल ले रिहा से।" रामू ने बताया।

"बुड्ढा मर जाये तो शायद ले ले। मुखिया तो उसकी साइकिल भी बेचने की सोचे सै।" पहलादसिंह ने नाक-भौं सिकोड़कर कहा।

सेल्समैन स्पीडोंवाली साइकिल निकाल लाया और उनके सामने रखता हुआ बोला, "हमारे पास इसका यही एक पीस है। यह विलायत में बनी हुई है। इस पर मुहर भी लगी हुई है।" फिर उसने स्पीड दिखायीं और उन्हें इस्तेमाल करने का ढंग बताया।

"बस यही दे दो। जब रुपये खरच करने हैं तो चीज अच्छी ली जाये।" पहलादसिंह की बाछें खिल उठी थीं।

"इसमें काठी भी बढ़िया लगेगी। विलायती स्प्रिंगोंवाली। लेकिन उसका दाम पचीस रुपये है।" सेल्समैन ने एक अलमारी से काठी निकाली और कपड़े से साफ़ करके उसे दबाकर स्प्रिंग दिखाता हुआ बोला, "यह काठी भी विलायत में बनी हुई है। यह देखो मोहर।"

"ठीक यही लगा दो। और जो कुछ लग सकता है हमारी साइकिल में सब लगा दो।" पहलादसिंह चहकता हुआ बोला।

"चौधरीजी, जब आप साइकिल इतनी बढ़िया ले रहे हैं तो कैरियर, चेनकवर और घण्टियाँ भी बढ़िया ही लगवायें। एक नयी घण्टी आयी है। देखने में बहुत सुन्दर है। जरा महँगी जरूर है—" उसने घण्टी दिखाते हुए कहा।

"एक घण्टी यह लगाओ, एक ऊपर हैण्डल पर—दो घण्टियाँ।"

"डैनमो भी लगवा लीजिए। अँधेरे में सफ़र करने में आसानी रहेगी। गाँव-देहात का मामला है।" सेल्समैन ने सुझाव दिया।

"वह क्या होता है?" पहलादसिंह ने रामू की, और फिर सेल्समैन की तरफ़ देखते हुए पूछा।

"डैनमो चौधरीजी, पिछले पहिए में लगाया जाता है और टॉर्च आगे होती है। जब साइकिल चलती है तो डैनमो काम करता है और उससे बिजली की रोशनी पैदा होती है।"

"कहीं लगा हो तो दिखाओ।" पहलादसिंह ने बड़ी हैरत के साथ कहा।

सेल्समैन ने भीतर से एक डैनमो लगी साइकिल मँगवायी और उसे चलाकर पहलादसिंह को दिखाने लगा। फिर बताया कि रोशनी अगर दूर फेंकनी हो तो कैसे स्विच को दाहिनी तरफ़ घुमाना चाहिए; और पास ही फेंकनी हो तो स्विच को बायें घुमाना होता है। यह भी उसने बताया कि साइकिल को जितना ही तेज़ चलाया जायेगा उतना ही ज़्यादा रोशनी होगी।

डैनमो पर पहलादसिंह रीझ गया। फट से बोला, "ज़रूर लगाओ।"

"चौधरीजी, यह जो आपको अभी दिखाया वह डैनमो तो देसी है। यह ज़्यादा टिकाऊ नहीं होता। विलायती डैनमो टिकाऊ भी होता है और रोशनी भी घनी देता है। लेकिन उसका दाम कुछ ज़्यादा..."

पहलादसिंह ने सेल्समैन को पूरा कहने तक न दिया और बीच में ही बोला, "वही लगाओ...साइकिल भी विलैती, डैनमू भी विलैती...!" फिर रामू को टहोका मारते हुए कहा, क्यों रामू?"

रामू हँसने लगा, बोला, "पहलाद, तेरी साइकिल लम्बर वन की हो गयी!"

अचानक पहलादसिंह को याद आयी और वह सेल्समैन से बोला, "दोनों पहियों में रंग-बिरंगे बुरुश जरूर डाल देना।"

"बुरुश भी लीजे,...अच्छा, आपको कोई और काम हो तो कर आयें। फ़िटिंग में एक घण्टा लग जायेगा। आपके पौने अट्ठानवे रुपये मेरे पास हैं।" सेल्समैन ने कहा।

"तू भी साइकिल ले ले।" रामू ने रणसिंह को सुझाव दिया।

"ले तो लूं, लेकिन लुगाई से डर लगता है। साइकिल देखकर खाने को दौड़ेगी।" रणसिंह ने कहा।

"तू कैसा मर्द है जो लुगाई से डरे है। मेरी लुगाई सामने होकर भी देखे तो मैं उसकी आँखें निकाल लूं। अगर लुगाई को पसन्द नहीं है तब तो ज़रूर ले रनसिंह।" पहलादसिंह ने शान-सी जताते हुए कहा। फिर सेल्समैन से बोला—

"एक साइकिल और बना दो ।"

"वही बनाना जो बहुत मजबूत है। एक घण्टी लगाना, सामान ढोनेवाला और खड़ी करनेवाला भी लगाना, और एक काठी भी । बस और कुछ नहीं ।" रणसिंह ने कहा ।

पहलादसिंह, रामू, रणसिंह और जगीरसिंह दुकान से बाहर आ गये ।

"अब कहां चलें ?" रामू ने पूछा ।

"भूख बहुत लगी से । कुछ खा-पी लें ।" पहलादसिंह ने कहा ।

तीनों चांदनीचौक की तरफ़ बढ़ गये और वहाँ एक हलवाई की दुकान के आगे रुक गये ।

"ये गोल-गोल क्या सैं ?" पहलादसिंह ने तली जा रही कचौरियों की ओर ललकती आँखों देखते हुए रणसिंह से कहा ।

"चलो, आज यही खाते हैं ।" रणसिंह बोला ।

तीनों दुकान में जाकर कुरसियों पर बैठ गये ।

"क्या लाऊँ ?" सबसे उचककर बैठे हुए पहलादसिंह से पूछा गया ।

"वह गोल-गोल लाओ, चार जगह ।" पहलादसिंह ने रोब से कहा ।

"कचौरी ?" नौकर ने मुसकराते हुए पूछा ।

"जो भी नाम सै, लाओ ।" रामू बोला ।

उसने दो-दो कचौरियां उनके सामने रख दीं ।

पहलादसिंह कचौरी तोड़ते हुए कहा, "बहुत खस्ता है ।" और [illegible] बग़ल बैठे जगीरसिंह और रणसिंह से हँसते हुए कहा, "दो से [illegible] नहीं हुआ ।"

दोनों ने रामू की ओर निगाह डाली । वह बैठा [illegible] पहलादसिंह ने मुण्डे को पुकारकर सबके लिए [illegible] कहा ।

चारों जब उठे तो बीस-बीस कचौरियां खा [illegible] बर्फ़ी ।

"इब कहां चलें ?" रणसिंह ने पूछा ।

"मैं एक कुरता खरीदना चाहता हूँ [illegible] और एक गुरगाबी, विलैती ।" पहलादसिंह [illegible]

चांदनीचौक पहुँचे वे तो [illegible] गया । उन्हें देखकर वह खिल [illegible] हुआ बोला, "चौधरी जियो, [illegible]

सबने राम-राम की । [illegible] रह सैं । एक बार [illegible]

"चौधरी जियो, मैं तां थ्वाडे चरणा दा दास हां। मैं किज रस्ता भुल सकना। मगर मैं थ्वाडे लाले तो वह ऊँ डरना।" अतरसिंह भी हँसने लगा। फिर सहज होता हुआ बोला, "फेरी दा कम मैं हुन छोड़ दित्ता। ऐथे चाँदनीचौक विच इक छोटी जही दुकान मिल गयी ए। हुन ओथे बैठना। आपका यहाँ किज फेरा पड़ा?"

"आपका सहर देखने आ गये सरदारजी।" पहलादसिंह मुसकराते हुए बोला।

"आओ फेर दुकान ते।" अतरसिंह ने पहलादसिंह का हाथ पकड़ते हुए कहा।

"फिर कभी आयेंगे। अभी कुछ कपड़ा खरीदना है।" पहलादसिंह बोला।

"कपड़ा जरूर खरीदना। दुकान ते चलो ना!" अतरसिंह ने आग्रह किया।

अतरसिंह उन्हें अपनी दुकान पर ले गया। लपककर उसने बेंच पर बिछे गद्दे और चादर की सिलवटें दूर कीं और गद्दी पर बैठता हुआ बोला, "मेरे मालिको बैठो ना!"

चारों उस बेंच पर बैठ गये। पहलादसिंह गरदन घुमाकर दुकान देखने लगा तो अतरसिंह बोला, "मालिको, कैंह वेखने ओ। बस छोटा जेहा ठिकाना मिल गया ए। थ्वाडे वर्गे चौधरियाँ दे सिर ते टब्बर पालने आँ। थोड़ी बजाजी रख छोड़ी ए।" अतरसिंह ने दुकान की दीवारों में लगे तख़्तों पर चुने हुए थानों और नीचे तख़्तपोश पर रखी कपड़े की गठरियों की ओर इशारा करते हुए कहा। फिर गद्दी से उठता हुआ बोला, "मैं चा वास्ते बोलना ए।"

"ना, चाय नहीं पियेंगे। हलवाई की दुकान से खा-पीकर निकले थे कि तुम मिल गये।" पहलादसिंह ने उसे हाथ से रोकते हुए कहा।

"मालिको, कपड़ा जित्थों मन चाहे खरीदना। चाय ते पी सो," अतरसिंह मुसकराते हुए बोला और दुकान के दरवाज़े में खड़ा हो बायीं तरफ़ गरदन बढ़ाकर उसने आवाज़ लगायी, "ओय खुशहालसिंहा, चार चा भेजना, सपैशल। मेरे चौधरी आये ने।"

अतरसिंह फिर उनके सामने आ बैठा और उनकी ओर झुकते हुए पूछने लगा, "केह हाल ए मेरे मुलतानी भिरा दा जिन्हें थ्वाडे ग्राँ दे पास खुई दे पास चा दा कम खोलया ए।"

"ओह...हिक मार सी ते द्रू ढै सी। कहकर पहलादसिंह खिलखिलाकर हँस दिया। उसके साथी भी जोर-जोर से हँसने लगे। पहलादसिंह की हँसी थमी तब बोला, "ठीक है। उसने खोखा बना लिया है। इब पक्की दुकान बनाने की सोच रिहा है।"

"चलो, आप चौधरियों के आसरे उस दे बच्चे पल जाण सी।" अतरसिंह ने

कहा।

जब वे चाय पी चुके तो अतरसिंह ने हाथ जोड़कर पूछा, "हुन दस्सो, कैंह सेवा करां।"

"हमें कपड़ा खरीदना है।" पहलादसिंह ने कहा।

"चौधरी जियो, जेकर उलटे उस्तरे नाल छिल उतरवानी ए तें सामने, सज्जे, खब्बे शीशे जड़ियाँ वड्डियाँ दुकानाँ ते जावो। जेकर सोहना, सस्ता ते पक्का कपड़ा चाँहदे ओ मैं थ्वाड़ा तावेदार बैठा आं।"

"हमें तो कपड़ा चाहिए। पहलादसिंह ने हँसते हुए कहा, "चमड़ी उतरवानी होती तो हमारे गाँव में लाला है।"

"मैं कपड़ा ऐसा दे सो कि पहन के निक्कलो ते लोक मुड़-मुड़ के वेखन।" अतरसिंह ने गज अपनी ओर खींचते हुए कहा, "कैंह दिखावां?"

"कुरते का कपड़ा।"

अतरसिंह ने उचककर सामने लगे तख्ते पर से तीन थान खींच लिये और उन्हें फैलाता हुआ बोला, "पापलीन वेखो... ए टस्सर ए... तें ए खालिस रेशम... कीड्यां दा कतया होया।"

पहलादसिंह और उसके साथी कपड़े को मसल-मसलकर देखने लगे तो अतरसिंह बोला, "मालिको, कैंह वेख दे ओ, मक्खन-मलाई वालों नर्म कपड़ा ए।"

रामू और रणसिंह ने भी समर्थन किया तो पहलादसिंह थान का सिरा अतरसिंह की ओर फेंकता हुआ बोला, "फेर फाड़ दे एक कुरते का।"

"चौधरीजी, एह शघाई दा असली रेशम ए। एही इक थान बचया ए। मुड़ मंगसो ते कितथों न मिल सो। बहू.ऊँ न सही दो कुरते दा तो सो।" अतरसिंह ने पहलादसिंह के उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही दो कुरते का कपड़ा फाड़कर एक ओर रख दिया।

इसके बाद उसने उठकर दूसरे तख्ते पर से धोतियाँ उतारी और एक धोती उनके सामने फैलाता हुआ बोला, "चौधरीजी, रेशमी कुरते दे नाल बारीक किनारी ते विलायती रुई दी धोती बहू.ऊँ फबेगी। दूरों-नेड़ियों सब पासवों रईस जापोगे।"

"फिर दे दो ये भी।" पहलादसिंह ने हँसते हुए कहा।

अतरसिंह ने दो धोतियाँ भी एक ओर रख दीं और गज को अपनी तरफ खेंचते हुए पूछा, "चौधरानी वास्ते कैंह विखावां। बहू.ऊँ उमदा साड़ियाँ आईयां ने।"

"ना भई, साड़ियाँ तो पंजाबिनें ही पहने हैं।" पहलादसिंह मुस्कराया।

"तो घाघरे लो।" अतरसिंह ने एक गठरी इधर को खींच ली और पहलादसिंह के सामने घाघरे फैलाता हुआ बोला, "जोधपुरी घाघरे ने। अज [illegible]

आया ए।" फिर एक घाघरा पूरी तरह फैलाकर बोला, "वेखो ना, सतरंगी पींग भी एनी सोहनी नहीं हुन्नी।"

अतरसिंह ने दो घाघरे, दो चोलियाँ, दो चुनरियाँ और बच्चे के कपड़े बाक़ी कपड़ों में मिलाकर काग़ज़ में बाँध दिये।

पहलादसिंह के साथियों ने भी कपड़ा ख़रीद लिया तो चारों उठे। अतरसिंह उन्हें छोड़ने के लिए दुकान के बाहर तक आया। फिर हाथ जोड़ता हुआ बोला, "गाँव में सबको मेरी तरफ से सतसिरी अकाल बोलना।...एह दुकान भी ना भूलना। एस बाजार विच कोई कम होवे, मैं थ्वाडा सेवादार बैठा हाँ।" अतरसिंह ने अपनी छाती की ओर हाथ बढ़ाते हुए कहा।

वापसी पर रास्ते में पहलादसिंह ने बच्चे के लिए खिलौने ख़रीदे। सबने मिठाई भी ली और साइकिलों की दुकान पर आ गये।

उनकी साइकिलें तैयार थीं। पहलादसिंह की साइकिल साढ़े चार सौ में और रणसिंह की दो सौ चालीस में बैठी थी। रुपये देकर वे दुकान से बाहर आये और रास्ता पूछकर खारी बाऊली की तरफ़ चल पड़े।

पहलादसिंह अपनी साइकिल के कुत्तों की चिर-चिर को ध्यान से सुनता हुआ बोला, "दलीलसिंह की साइकिल के कुत्ते ऐसे नहीं बोलते।"

"ये विलायती कुत्ते हैं। उसके देसी हैं।" रणसिंह ने कहा, "मेरी साइकिल के भी अच्छे बोलते हैं।"

पहलादसिंह साइकिल पर चढ़ने के लिए उतावला हो रहा था लेकिन सड़क की भीड़ों को देखते उसे हिम्मत नहीं पड़ रही थी।

मुल्ली भठयारन पहुँचकर वे साइकिलों पर चढ़ गये। पहलादसिंह के पीछे रामू बैठा और रणसिंह के पीछे जगीरसिंह बैठ गया।

शादीपुर के क़रीब पहुँचे तो रामू कहने लगा, "पहलाद, कोई कहे था यहाँ सराब मिलती है।"

"हाँ, मैं दो बार ले गया हूँ।"

"पता है दुकान कहाँ है?"

"पता तो है, लेकिन सूरज अस्त हो रहा है। पास रकम है। यहाँ के लोग अपने पैसे खा-पीकर इब चोरी-डकैती पर गुजारा करे हैं। यहाँ नहीं रुकते। बाँदरांवाली खुई के पास पंजाबी का खोखा है ना? उसके पास भी सराब रहे है। गांव के पास है, वहाँ खतरा नहीं है। वहीं पीयेंगे। क्यों रामू?"

जब वे शादीपुर के सामने से गुज़रे तो कुछ शराबी मछली के पकौड़ों की दुकान पर बैठे थे। पहलादसिंह की नयी साइकिल देखकर एक बोला, "बहुत बढ़िया साइकिल है। लगता है आज ही ज़मीन बेचकर पैसे लाया है।"

"चौधरी बात सुनना। ज़रा साइकिल दिखाना।" दूसरे ने उठते हुए

पहलादसिंह ने साइकिल की रफ्तार तेज करते हुए रणसिंह को भी साइकिल तेज चलाने के लिए कहा।

शराबी पहले उन्हें आवाजें देते रहे। उन्हें भागता देखा तो वे गालियाँ देने लगे। "पकड़ो...माँ के...को! जाने न पायें। हमारे गाँव के सामने से साइकिल पर चढ़कर निकलें, इनकी इतनी हिम्मत!" एक शराबी ने कहा और लाठी लेकर उनके पीछे भागा। उसने लाठी घुमाकर उनकी ओर फेंकी लेकिन वे उसकी पहुँच के बाहर थे। उन्हें जाता देखकर सब शराबी भर-भर मुँह उन्हें गालियाँ देने लगे।

काफ़ी दूर निकल आने पर रामू ने कहा, "अब आहिस्ता चलो। वे लोग वहीं रह गये हैं।"

"देखा इनका हाल? साले दिन-दहाड़े लूटपाट पर उतारू हैं। पैदल होते तो लुट गये थे ना?" पहलादसिंह ने खाँसकर साँस को सामान्य करते हुए कहा।

"सालों ने ऐसी दौड़ लगवायी कि अभी तक साँस धौंकनी की तरह चल रही है।"

पक्की सड़क पर पहुँचकर दोनों इत्मीनान से साइकिल चलाने लगे। गाँव के नजदीक हुए तो रणसिंह ने साइकिल और भी आहिस्ता कर दी। मौज मारता हुआ पहलादसिंह बोला, "क्या विचार है?"

"हाँ पंजाबी के पास चलते हैं। वहाँ कोई खतरा नहीं है।" पहलादसिंह ने कहा।

"पहले घर न हो आयें?" जगीरसिंह ने कहा।

"क्यों लुगाई की याद सता रही है? तू तो उसकी चोली में घुसा रहा कर।" रामू ने कहा।

"चल, पंजाबी की दुकान तक दौड़ हो जाये?" पहलादसिंह ने रणसिंह से कहा।

"तेरी साइकिल विलैती है, मेरी देसी। विलैती और देसी का क्या मुकाबला?" रणसिंह ने जवाब दिया।

"चल तो!" पहलादसिंह ने जोर दिया।

वे शोर मचाते हुए साइकिलें दौड़ाने लगे। जब पहलादसिंह की साइकिल रणसिंह की साइकिल से आगे निकल गयी तो उसने खुशी में जोर से किलकारी मारी और एक साथ दोनों घण्टियाँ बजाता हुआ आगे निकल गया।

रामदयाल के खोखे के सामने वे रुक गये। उन्हें देखकर वह खोखे से बाहर आ गया और राम-राम बुलाकर बोला, "चौधरी पहलादसिंह, नयी साइकिल लाये हो?"

"हाँ, मैं भी और रणसिंह भी। मेरी विलैती है और इसकी देसी।" पहलादसिंह ने ख़ुश होते हुए कहा।

रामदयाल साइकिल देखने लगा तो पहलादसिंह ऊँचे स्वर में बोला, "साइकिल बाद में देखना। पहले यह बता, माल है?"

रामदयाल ने आँख दबायी और धीमे स्वर में बोला, "चौधरी, सड़क चल रही है। ज़रा अँधेरा होने दो।"

"हम खोखे के पीछे बैठ जाते हैं। सड़क की तरफ़ हम नहीं देखेंगे और सड़क हमारी तरफ़ नहीं देखेगी।" रामू ने कहा।

"अच्छा सबर करो।" रामदयाल ने एक टूटी बेंच, दो ख़ाली पेटियाँ, चार गिलास और पानी की छोटी बालटी खोखे के पीछे रख दी। आकर इशारे से पूछा, "कितनी?...एक?"

"हाँ अभी एक।" पहलादसिंह ने कहा।

पाँचेक मिनट बाद ही वह एक बोतल लिये हुए आया और बोला, "चौधरी, सपेशल चीज है। आठ आने मँहगी: ढाई रुपये की।"

"लाला, तू रोज-रोज मोल बढ़ा रहा सै। सवा रुपये से शुरू हुआ था। सवा से डेढ़, फिर पौने दो, फिर दो। आज तूने इकट्ठे आठ आने बढ़ा दिये हैं।" पहलादसिंह ने बनावटी ग़ुस्से में कहा।

"चौधरीजी, मैंने कौन-सी घर में निकाली है। बच्चे की सौंह इसमें सिर्फ़ एक दवन्नी बचेगी...हाँ पकौड़े कितने लाऊँ?" फिर आप ही बोला, "एक सेर रख देता हूँ। बार-बार इधर आया तो बाकी ग्राहकों को शक हो जायेगा।"

रामदयाल पकौड़े और चटनी दे गया और वे चारों चौधरी गिलासों में उँड़ेल-उँड़ेलकर पीने लगे।

"क्यों, कैसी है?" पहलादसिंह ने पूछा।

"देखने तो दे, अभी तो घूँट भरी है!" रामू ने पकौड़ा चबाते हुए कहा।

जब वे उठे तो अँधेरा गहरा हो चुका था। गाँव में दीये टिमटिमा रहे थे।

"लाला पैसे कल मिलेंगे।" पहलादसिंह अँगोछे और नोली को टटोलते हुए बोला।

"जो मालिक की मरजी।" रामदयाल ने गिलास सँभालते हुए जवाब में कहा।

पहलादसिंह घर के सामने पहुँचकर अंगूरी को आवाज़ें देने की बजाय ज़ोर-जोर से साइकिल की दोनों घण्टियाँ बजा रहा था। बीच-बीच में एकाध मिनट के लिए रुक जाता और फिर बजाने लगता। कुछ ही देर बाद छत पर से किसी ने ऊँची आवाज़ में पूछा, "कौन सै?"

"मैं हूँ चाची। अंगूरी कहाँ गयी?" पहलादसिंह ने पूछा।

'तू कहाँ रह गया था ? मुखिया, पण्डित और उनके साथ के लोग दिन ढले ही गाँव आ गये थे।"

"वे बड़े चौधरी हैं। उन्हें मोटर छोड़ गयी होगी।" पहलादसिंह ने मन में उनके लिए एक घृणा-सी लिये हुए कहा।

"बाकी लोग भी सूरज डूबने से पहले पहुँच गये थे। अंगूरी बेचारी की तो तेरी राह देखते-देखते आँखें पक गयीं। न खाया है न पिया है। बेचारी एक टाँग भागती रही है तेरा पता करने के लिए।"

"इब कहाँ है ?" पहलादसिंह ने बेसब्री में पूछा।

"कोठे-कोठे उधर अहीरों के घरों में पता करने गयी है। मुझे कह गयी थी कि घर का ख़याल रखूँ।"

पहलादसिंह को गुस्सा आने लगा। उसने मन ही मन फ़ैसला किया कि आज वह अंगूरी की हड्डी-पसली पीसकर एक कर देगा। उसकी यह मजाल कि मेरे बारे में पता करने के लिए लोगों के पास जाये ! घर पहुँचने की उसकी सारी ख़ुशी ठण्डी पड़ने लगी। फिर उसने अपने को समझाया कि आज के दिन झगड़ा नहीं करना है।

पहलादसिंह अपने मन को शान्त रखने के जतन में लगा हुआ था कि [illegible] अंगूरी की आवाज़ सुनाई दी, "चाची आ गया वह ?"

"अरी, वह तो कब से नीचे खड़ा तुझे आवाज़ें दे रिहा है। [illegible] सँभाल ले।"

अंगूरी ने दरवाज़ा खोला तो पहलादसिंह ने हलके-से [illegible] बजायी और मुसकराकर बोला, "राम-राम !"

साइकिल देखकर अंगूरी एक तरफ़ को हट गयी। [illegible] अन्दर करके दरवाज़ा बन्द कर दिया। सिर पर से [illegible] फेंका और बालों पर हाथ फेरता हुआ बोला, "बहुत [illegible] पिला।"

अंगूरी ने पानी का कटोरा उसके हाथ में [illegible] पहलादसिंह ने कुरते के बटन खोल दिये और [illegible] उतारकर खाट के पायँती रख दिया। अंगूरी [illegible] वह बात-बे-बात मुसकरा रहा था। [illegible] अंगूरी को नोटों की एक झलक दिखाकर [illegible]

अंगूरी ने नोटों, साइकिल, [illegible] और एक ठण्डी साँस छोड़ती हुई [illegible] आँसू डबडबाये लेकिन उन्हें वह [illegible]

"मैं अकेला नहीं सारा [illegible]

पीढ़ी खींची और अंगूरी को सामने बैठने को कहा। वह बैठ गयी तो पहलादसिंह बोला, "अपनी झोली फैला।"

अंगूरी ने झोली फैला दी तो पहलादसिंह ने सारे नोट उसमें उँड़ेल दिये और बड़े प्यार से उसके कन्धे पर हाथ रखते हुए कहा, "यह तेरा माल है। तू जाने तेरा काम।...साढ़े दस हजार रुपये मिले थे। पाँच-छह सौ मैं खर्च कर आया हूँ। यह साइकिल ली है। बिलैती, साढ़े चार सौ की!" पहलादसिंह ने कहा।

अंगूरी कुछ बोले कि पहलादसिंह उसे समझाता हुआ बोला, "मैंने सोचा हमारे पास कोई सवारी नहीं से। बाहर आने-जाने में बड़ी दिक्कत होवे है। घोड़ी लेते तो मँहगी पड़ती। दूसरे, उसपर एक ही आदमी सवारी कर सकता है। सवारी भी करो या न करो, दाना वह जरूर खायेगी। मैंने सब सोच-विचार-कर साइकिल ले ली। काकू आगे और तू पीछे! दो-चार दिन में सैंदीपुर तेरे मैके चलेंगे।"

अंगूरी हैरान हुई उसे देख रही थी। उसे पहलादसिंह का दमकता हुआ चेहरा बहुत भला लग रहा था। पहलादसिंह उठा और साइकिल को स्टैण्ड पर खड़ा करके डैनमों का स्विच ऑन करके तेज़ी से पैडल घुमाने लगा। सामने की दीवार का एक हिस्सा डैनमो की लाइट पड़ने से जगमगा उठा। फिर उसने पैडल घुमाना छोड़ दिया तो ज्यों-ज्यों स्पीड कम हो रही थी, लाइट भी घटती जा रही थी।

"साइकिल जितनी तेज चलेगी उतनी ज्यादा रोसनी होगी। यह मसीन भी बिलैती है।" वह लहक-लहककर बताने लगा।

पहलादसिंह फिर उसके सामने आ बैठा और उसके ओढ़ने के आँचल में रखे नोटों को दिखाता हुआ बोला, "सब सौ-सौ के नोट हैं। अंगूरी देख ले, है कागज लेकिन इसका भी वजन है!" उसने दोनों हाथों में आँचल को समेटकर तोलते हुए कहा, "यही सब अगर चाँदी के रुपये होते तो बोरी भर जाती और उसे दो आदमी मिलकर ही उठा सकते!" पहलादसिंह ने खुले स्वर में कहा और फिर उसे सावधान करता हुआ बोला, "इन्हें सँभाल के रखियो; सारे गाँव को पता है कि मैं पैसे घर लाया हूँ।"

पहलादसिंह ने इसके बाद खाट की पायँती रखे बण्डल को खोला और एक-एक कपड़े को निकालकर उसके सामने रखता हुआ बोला, "ये मेरे दो कुरते और दो धोती। कुरते असली रेशम के हैं! ये तेरे घाघरे, चोलियाँ और चुनरियाँ। सब असली जोधपुरी हैं, जोधपुरी! लाला कह रहा था कि आज ही माल आया है। और ये काकू के लिए कपड़े और खिलौने।"

अंगूरी ने उन चीज़ों में कोई दिलचस्पी नहीं दिखायी और सोच में पड़ी ज़मीन को देखती रही। पहलादसिंह ने उसकी ठोड़ी को उँगलियों से ऊपर को उठाया

और मुसकराता हुआ बोला, "मैं बहुत खुश हूँ। क्या तू खुश नहीं है ?"

अंगूरी चुप रही तो पहलादसिंह ने फिर पूछा। अंगूरी ने कोई उत्तर न दिया तो उसने खींचकर उसे अपनी गोद में डाल लिया और उसकी आँखों पर झुककर फिर पूछा।

अंगूरी की आँखों से दो आँसू नीचे लुढ़क गये और वह रुँधी हुई आवाज़ में बोली, "पिता-पुरखों की दी हुई जमीन बिक गयी है मैं कैसे खुश हो सकती हूँ। जिस तरह बेटे से घर का नाम चलता है, इसी तरह जमीन से खानदान का नाम चलता है। अब हमारे खेतों को कोई नहीं कहेगा कि ये खेत तेरे बेटे रघुवीरसिंह की मलकियत हैं।" कुछ देर वह चुप रही। फिर आँसू पोंछती हुई मुरझाये मन से बोली, "अगर तू खुश है तो मैं भी खुश हूँ।"

अंगूरी ने अपना मुँह उसकी गोद में छिपा लिया। पहलादसिंह ने उसके मुँह को अपनी तरफ़ किया और चुनरिया ओढ़ा दी। सतरंगी चुनरिया में अंगूरी का साँवला सलोना गोल चेहरा और उसकी बड़ी-बड़ी आँखें उसे बहुत ही भली लगीं और एकदम से जैसे हठ बाँधता हुआ बोला, "मुझे नया घाघरा, नयी चोली और यह चुनरिया पहनकर अभी दिखा।"

"कल को दिखाऊँगी।"

"नहीं अभी। इसी वक्त। यह चुनरिया तुझे बहुत फबी है।" पहलादसिंह की आँखों में और स्वर में रस ही रस भर आया था।

अंगूरी अपनी मुसकान को दबाती हुई कपड़े उठाकर कोठड़ी में चली गयी। थोड़ी देर के बाद वह सिकुड़ती-सिमटती और संकोच से बलखाती हुई आयी तो पहलादसिंह उसे आँखें फाड़े देखता रह गया; बोला, "रानी पदमनी भी इतनी सुन्दर नहीं होगी जितनी तू है। तू तो इन्दरलोक की परी लगे है।" पहलादसिंह ने उसे बाँहों में भर लिया और उसे दबोचता हुआ बारबार चूमने लगा। अंगूरी ने किसी तरह अपने को छुड़ाते हुए कहा, "यह क्या कर रिहा है। शरम कर, काकू जाग उठेगा।"

"कहाँ है काकू?" पहलादसिंह ने बेचैनी से पूछा।

"बाहर आँगन में सो रहा है।" अंगूरी ने अपने कपड़े ठीक करते हुए कहा।

पहलादसिंह आँगन से जाकर उसे उठा लाया और जगा दिया। कच्ची नींद से जगाये जाने के कारण काकू रोने लगा। पहलादसिंह ने उसे पुचकारा दिया और उसकी ओर खिलौने बढ़ाता हुआ आवाज़ बनाकर प्यार से बोला, "ले तो झुनझुना! यह ले रेलगाड़ी! यह ले मोटर!"

काकू ने एक नज़र खिलौनों को देखा और रोना भूलकर झुनझुना हिलाता हुआ मुसकराने लगा। पहलादसिंह ने उसे अपने सिर के ऊपर उठा लिया और

सिर से उसके पेट में गुदगुदी करता रहा। फिर उसने मिठाई का एक डब्बा खोला और बर्फ़ी का टुकड़ा काकू के मुँह में देकर अंगूरी से बोला, "बहुत सवाद है। चाँदनीचौक से लाया हूँ। चख के तो देख!"

पहलादसिह कुछ देर काकू के साथ हँसता-खेलता रहा। उसे नींद आने लगी तो अंगूरी ने उसे थपथपाकर सुला दिया।

"रोटी बनाऊँ?" अंगूरी की आँखों में भी नींद के कारण पानी की पतली-सी लकीर छा आयी थी।

"क्या पकाया है?"

"दाल है। साथ आम का अचार है, गुड़ है।" अँगूरी ने अँगड़ाई लेते हुए बताया।

"तूने रोटी खा ली?"

"हाँ।"

"मुझे भूख नहीं है। सहर में हलवाई की दुकान पर कुछ खा-पी लिया था।" पहलादसिह ने दीये को पाँव की ठोकर से गिराकर बुझा दिया और अंगूरी को पकड़कर अपनी ओर खींच लिया।

"यह क्या, दीया क्यों गिरा दिया? टूट गया तो कल को क्या जलाऊँगी?" अंगूरी ने बनावटी गुस्से से कहा।

"टूटने दे दीये को! कल सहर जाकर लालटेन ला दूँगा। ऐसा गैस ला दूँगा जो रात को भी दिन बना देवे है।" पहलादसिह ने अंगूरी को भींचते हुए कहा।

"होश करो!" काकू जाग गया या पड़ोसी जाग गये...तो?"

"जागने दे सबको।" पहलादसिह फिर आपे में नहीं रहा।

बाद को देर तक पहलादसिह अंगूरी को शहर की बातें बताता रहा। फिर उसकी आँख लग गयी और धीरे-धीरे ख़र्राटों की आवाज़ सुनाई देने लगी। अंगूरी ने उठकर दीया जलाया और पाँयती बैठ गयी। पहलादसिह के खिले हुए

को जाँघों के बीच में दबाये बैठी सोचती रही, फिर चुपके से उठकर कोठरी के अन्दर चली गयी और किवाड़ बन्द करके उसने चुपके-चुपके वहाँ एक छोटा-सा गढ़ा खोदा। फिर नोटों की गड्डियों को ठीक से बाँधा और एक हाँडी में रखकर ऊपर से कपड़ा कस दिया। चारों तरफ़ एक बार नज़र डालकर हाँडी को उसने गढ़े में रखकर ऊपर मिट्टी डाल दी और उसपर अपनी खाट डालकर लेट गयी।

उसे नींद नहीं आ रही थी। जब-जब ख़याल आता कि ज़मीन बिक गयी है तो उसका जी बैठने लगता और डर महसूस होता। उसे आस-पास काली पर-छाईयाँ-सी तैरती नज़र आतीं और मुँह से चीख़ निकलने-निकलने को हो आती। दो बार वह उठकर बैठ-बैठ भी गयी, मगर यह कुछ न सूझा कि क्या करे या क्या पहलादसिंह को ही कहे। पहलादसिंह के प्यार और दुलार की याद आती तो उसका जी ख़ुशियों से भर उठता और तकिये में मुँह देकर वह मुसकराने लगती। मगर फिर तरह-तरह के विचार मन में उठने लगते और काली-नीली परछाइयाँ आँखों आगे उभरने लगतीं। हारकर अन्त में उसने पहलादसिंह को जगा दिया और उसके साथ लिपटती हुई बोली, "मुझे बड़ा डर लग रिहा है।"

"डर लग रिहा है, क्यों ?" पहलादसिंह ने हड़बड़ाकर पूछा।

"ऐसे लगे है जैसे कोठरी में कोई हो।"

"अच्छा ! चल, मैं देखता हूँ।" पहलादसिंह ने उठकर धोती को कसा और लाठी उठाकर भीतर को चला।

अंगूरी ने लपककर उसकी खाट उठायी और भीतर अपनी खाट के दायें बिछाकर साथ मिला ली।

"लो, जहाँ सो जाओ। अब मुझे डर नहीं लगेगा।" अंगूरी ने उसकी छाती में अपना मुँह दबकाते हुए कहा।

पहलादसिंह ने अपनी दाहिनी बाँह उसके सीने पर आरपार लपेट-सी दी और दीया बुझाता हुआ बोला, "इब सो जा आराम से।"